विषय-सूची ।

निवेदन

भगवान् श्रीकृष्ण रा मुखारविन्द शूँ निकली थकी गीता ने आखो संसार जाणे है, ने अणी रा गुणानुवाद पे'ली रा ने अबाणुँ रा शघला ही महापुरुषाँ खूब गाया है, ईं वास्ते ज्यादा कई कें'वा री जरूरत नी है। ईं में संसार रा सब दुःखाँ शूँ छूट ने आनन्दरूप परमात्मा ने प्राप्त करवा री घणी ज शूधो रीत बताई है। अर्जुण दो ही फौजाँ वचे घबरातो थको ऊभो हो वींने या शुणताँ शुणताँ हीज परमानन्द री प्राप्ति व्हे गई, ने बोल उठ्यो के 'हे अच्युत, आपरी कृपा शूँ म्हारो अज्ञान मट गियो ने सहा वात भूल गियो हो सो म्हने पाछी याद आय गई। अणी शूँ हीज अंदाज व्हे शके है के या रीत कतरी शूधी है। अणी ज वास्ते मरतो दाण भी गीता हीज शुणावा री आपणे रीत है, क्यूँके, वणी वगत और साधन करे जतरी तो वगत व्हे है नी ने शुणताँ शुणताँ हीज ज्ञान प्राप्त व्हे जाय अशी

वात चावे सो अशी या श्री गीताजी होज है।

गीताजी संस्कृत में व्हेवा शूँ संस्कृत नी जाणवा वाला ने थोड़ा भण्या थका मेवाड़रा मनख अणी रो आनन्द नो ले शकता हे ईं वास्ते करजाली महाराज साहब श्री लछमणसिंहजी रा छोटा भाई महाराज साहब श्री चतुरसिंहजी दयाकर १० वर्ष पे'ली ईं री सार दर्शावणो सम-श्लोकी टीका मेवाड़ी बोली में वणाई जणी शूँ थोड़ा भण्या थका भी सरलता शूँ शूधी शूधी मेवाड़ी बोली में गीता जी रो भाव (मतलब) समझ लेवे। या किताब लोगाँ ने घणी दाय लागी ने एक हजार पुस्तकाँ थोड़ा ही दनाँ में पूरी व्हे गई, और फे'र छपावा रे वास्ते लोग आ'गत करवा लागा। अणा दश वर्षां में महाराज साहब रो अनुभव बहुत ऊँचो वढ़ गियो हो ईं वास्ते विक्रम संवत् १९८४ रा पौष मास में आप गीता जी री एक नवी टीका लिखवारो आरम्भ की धो। वत्तो शूधापणो लावा रे वास्ते ईं ने वार्ता में हीज वणाई। आपणा ऊँचा अनुभव शूँ महाराज साहब गीता रा गूढ़ भेद खोल ने ईं में वताया है सो शमझवा वाला शमझेगा।

अणी रो नाम गंगाजली है जीं रो भाव यो है के ज्यूँ जात्रा करवा जाय वी लोग गंगाजी में खूब स्नान करे, गोता लगावे ने पेट भर भर ने गंगाजल पीवे, पाछी आवती दाए आपणा सगा कुटुम्बी और हेत वे'वार वाला लोगाँ रे वास्ते गंगाजली भर ने लेता आवे के वी लोग भी वना मे'नत गंगाजल रो पान कर पवित्र व्हे जावे। अणीज तरे' शूँ गीता रूपी गंगाजी में गोता लगाय लगाय अणी में वे'ता थका ज्ञान रूपी जल ने भर पेट पी पी ने महाराज साहव आपणा कुटुम्बी और इष्ट मित्राँ रे वास्ते (उदारचरितानान्तु वसुधैव कुटुम्बकम्—अर्थात् महान् पुरुषाँ रे तो आखो संसार ही कुटुम्ब हीज है) या गंगाजली लाया है। या गंगाजली तो अशी है के शघला ही पेट भर भर ने पीवे तो भी रीती नी व्हे ने ईं रो एक आचमन मात्र करले तो भी सम्पूर्ण तृष्णा और ताप मट जावे।

महाराज साहव री अणी उपयोगी पुस्तक रो चार आवश्यक समझ श्रीमान् परमदयालु धीर वीर मेदपाटेश्वर हिन्दूसूर्य महाराजाधिराज महाराणाजी श्री १०८ श्री भूपालसिंहजी वहादुर

के. सी. आई. ई. ईंने छपाय प्रकाशित करवा री हुकम बखशायो। छपाई को खर्च निज खर्च शूँ मिलवा री हुकम हुवो और ई रो सम्पादन करवा री म्हने आज्ञा हुई सो म्हारो तुच्छ वुद्धि रे माफक आज्ञा रो पालन कीदो है। महाराज साहब रा पवित्र और ऊँचा विचारां ने मनन कर मन ने पवित्र करवा रो यो मौको म्हने मिल्यो जोरी म्हने वहुत प्रसन्नता है। ईंमें कठे ही गलती होवे तो वा म्हारी है। सज्जनां ने प्रार्थना है के वी सुधार लेवे और सूचना देवे के दूजी दाण छपे जणी वगत ई री ओशान राखी जावे।

श्रीमान् श्री जी हजूर दाम इकबाल हू अणी पुस्तक ने प्रकाशित कराय एक तरफ तो एक महान् योगी और राजर्षि री कीर्ति ने अमर कीधी है और दूजी तरफ सरल और अनुभव पूर्ण गीता जो री अमूल्य टीका रे द्वारा दुःखी जीवां रे हृदय में शान्ति उत्पन्न करवा रो अखंड पुण्य लीधो है। परमात्मा अश्या धर्मात्मा और दयालु राजा ने दीर्घ आयुष्य प्रदान करे और सदा आनन्द में राखे।

विक्टोरिया हाल
उदयपुर

शोभालाल शास्त्री

ॐ

महाराज साहब श्री चतुरसिंहजी

रो

थोड़ोक परिचय

महाराज साहब श्री चतुरसिंहजी, मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान् श्री रामचन्द्रजी रा पवित्र वंश में जन्म लीधो हो। हिन्दुवां सूरज, मेवाड़ नाथ महाराणाजी श्री फतहसिंहजी (कैलास वासी) रा बड़ा भाई करजाली महाराज साहब श्रीसूरतसिंहजी रा आप चौथा कुवँर हा। आपरो जन्म विक्रम सं० १६३६ माघ शुदि १ के दिन व्हियो हो। महाराज साहब सूरतसिंहजी बड़ा धर्मात्मा और भगवद्भक्त हा। रात दन भजन स्मरण में हीज रै'ता हा। अणी कारण शूँ महाराज साहब चतुरसिंहजी रा हृदय में जन्म शूँ ही भक्ति ज्ञान और वैराग्य रा अंकुर वर्तमान हा। ज्यूँ ज्यूँ अवस्था वधतो गई ज्यूँ ज्यूँ ई भी वधता गया। आप

घण्टाँ तक भगवान रो ध्यान और मानसिक सेवा करता हा। बच में बच में व्रज में पधार वठे भी निवास कर साधन करता हा। वि० सं० १९६४ में आप री धर्मपत्नी रो राजयक्ष्मा री बीमारी शूँ देहान्त व्हे गयो। वैराग्य री बढ़ती थकी वेलड़ी में अणी शूँ और पाणी शींचाणो।

आप री इच्छा योग रो अभ्यास करवा री हुई। नर्मदा रे किनारे कमलभारतीजी नाम रा एक प्रसिद्ध योगी रे'ता हा। आप वणा रे पास गया। वणा कियो के "तुम को इतनी दूर भटकने की क्या जरूरत है? तुम्हारे मेवाड़ में ही बाठरडे रावतजी दलेलसिंहजी के छोटे भाई गुमानसिंहजी बहुत अच्छे योगी हैं। तुम उन्हीं के पास जाओ"। महाराज साहब गुमानसिंहजी रे पास आया। वणा आपरो दृढ़ वैराग्य और योग शीखवा री तीव्र लालसा देख आपने राजराजेश्वर योग रो उपदेश दीधो। एकान्त में रे'रे' ने आप ईं रो बड़ा उत्साह रे साथ साधन कीधो।

आप संस्कृत रा आछा विद्वान हा। वेदान्त, सांख्य, योग आदि दर्शनां रा कठिन कठिन ग्रन्थां ने आप आछी तरह शूँ शमझ लेता हा। आप

ब्रह्मसूत्र शांकरभाष्य, रामानुजभाष्य, उपनिषद्
श्रीमद्भगवद्गीता भिन्न२ आचार्यां रा भाष्य सहित,
योगवासिष्ठ, पञ्चदशी, आत्मपुराण, विचारसागर,
श्रीमद्भागवत, महाभारत आदि ग्रन्थां रो अच्छो मनन
कीधो। बड़ा बड़ा योगी, भक्त और महात्मा री
सतसंगति कीधी। आप रा पवित्र जीवन रा पाछला
वर्ष सांख्य और योग रा गंभीर विचार और मनन
में हीज व्यतीत किह्या। पछे पछे आप रो विराजवो
शुखेर और नौवागांव में हीज वत्तो व्हेतो हो।
नौवो आपने घणो आछो लागतो हो। अठे गाम रे
वारणे एक छोटीशी मगरी ऊपर एक कुटी वणवाय
कीधी ही जणी में विराज्यां करता हा। अठे हीज
संवत् १६७८ पौष सुदि ३ रविवार रे दिन आपने
आत्म-साक्षात्कार हुवो और वणीज मौका पर
आप "अलख पचीसी", "तुहीं अष्टक" और "अनु-
भव प्रकाश" लिख्या। आप सदा सन्तुष्ट और परम
प्रसन्न रे'ता हा। घमंड रो आप में लेश भी नी हो।
आपरी रे'णी बिलकुल सादी ही। डील पे रेजा रो
कुड़तो या युगलबन्दी और माथा पर रेजा रो फेंटो
धारण राखता हा। शियाला में ओढ़वाने भी रेजा
रो पछेवड़ो हीज रे'तो हो।

आत्म-साक्षात्कार व्हे जावा रे बाद में आप, भिन्न भिन्न मार्गां शूँ परमात्मा री प्राप्ति कूँकर व्हे है, ईं री परीक्षा रे वास्ते. अन्य अन्य साधनां रो अभ्यास करता हा। आप जैन शास्त्रां रो बहुत मनन कीधो और वणां में लिख्या मुजब भी अभ्यास कीधो। काश्मीर शैव सिद्धान्त रा ग्रन्थ मँगाय, वाँ रो विचार मनन कर वणा में बताई थकी विधि शूँ भी साधन कीधो। अणी तरे' शूँ नराई भिन्न भिन्न साधन कीदा, कुरान शरीफ और बाइबल (नई पुराणी दोई) भी विचार पूर्वक पढ़ी. जणी शूँ हर एक मत (धरम) रो यथार्थ तत्त्व आप री समझ में आय गियो हो। आप फरमायां करता हा के अबे कईं करवा रो जरूरत तो नी है पण खालो वैठा रे'वा करताँ यो ही मनोविनोद करां तो कईं हरज है।

विक्रम संवत् १६८६ में आपरे सोजिश री तकलीफ व्हे गई। योग सूत्र आप ने अतरा प्रिय हा के ईं पर आप तकलीफ में हीं एक सरलता शूँ योग रा रहस्य ने शमझावा वाली टीका लिखवा रो प्रारंभ कीदो और बराबर खुद हाथ शूँ लिखता रिया। कमजोरी अतरी व्हे गई ही के

खुद बैठा नी व्हे शकता हा पण टीका लिखणो बराबर जारी हो और निर्वाण लाभ करवा रे दो या तीन दिन पे'ली तक बराबर जारी रियो। आखिर वि० सं० १६८६ (चैत्रादि) आषाढ़ वदि ६ रे दिन परबाते ६ बज्या रे करीब ध्यानावस्थित दशा में योगियों रीं गति ने प्राप्त हुवा।

निर्वाण लाभ रे कुछ दिन पे'ली आप एक पद बणायो हो। ई में आप ने आत्म साक्षात्कार में जणी जणी शूँ सहायता मिली वणा रा नाम गणाया है और परमात्मा रे प्रति कृतज्ञता प्रकट कीधो है। वो पद यो है:—

जगदीश्वर जीवाय दियो, येंही थारो काम कियो।
दरशण योग दियो कर दाया, मरतलोक में अमर कियो।
एक एक अक्षर ई रा ने देख देख ने दग रियो।
ई जग जगल रा भटका ने पल ही में पलटाय दियो।
माँगूँ कई कई अब बाकी अण माँग्या ही अभय व्हियो।
आना रे कागद साथे ज्यूँ आखर पढताँ आय गियो।
पाराशर्य, पतजल जोगी, कीके, कपिल गुमान, कियो।
कर करुणा यूँ ही दीनाँ पे भीषम, ईश्वरकृष्ण व्हियो।

चौड़े खुल्यो कमाड खजानो दें ने मी कीनेक दियो।
मनख शरीर दियो थें मालक शागे जनम सुधार दियो।
चातुर चोर चाकरी रो पण आसर थें अपणाय लियो।
जगदीश्वर जीवाय दियो, थें ही थारो काम कियो।

महाराज साहब री बणाई हुई नीचे लिखी पुस्तकां है जो धीरे धीरे अणी ग्रन्थमाला में प्रकाशित होवेगा।

१—भगवद्गीता की समश्लोकी सारदर्शावणी और गंगाजली टीका व भावार्थ भागीरथी टिप्पणी
२—परमार्थ विचार ७ भाग
३—योगसूत्र री मेवाड़ी भाषा में ३ टीका (दो टीका अपूर्ण है)
४—सांख्य तत्व समास सूत्र री मेवाड़ी बोली में टीका
५—सांख्य कारिका री मेवाड़ी बोली में टीका
६—मानवमित्र रामचरित्र (ईं रा ५ कांड अलग अलग पे'ली छप चुका है)
७—योगसूत्र हिन्दी टीका
८—शेष चरित

९—अलख पचीसी, तुँही अष्टक (पे'ली दो दाण छप चुकी है)
१०—अनुभव प्रकाश
११—चतुर चिन्तामणि भा० १-२-३ (भा० १-२ पे'ली एक दाण छप चुका है)
१२—महिम्नः स्तोत्र-मेवाड़ी समश्लोकी अनुवाद (पे'ली छप्यो)
१३—चन्द्र शेखराष्टक-मेवाड़ी समश्लोकी अनुवाद (पे'ली छप्यो)
१४—हनुमान पंचक (पे'ली छप्यो)
१५—समान बत्तोशो (पे'लो छपी)
१६—चतुर प्रकाश (कविता संग्रह)
१७—लेख संग्रह

शोभालाल शास्त्री

समश्लोकी सारदर्शावणी टीका री

भूमिका

(महाराज साहब श्री चतुरसिंहजी लिखित)

दोहा

वचन अतीता होय के, भव की भीता खोय ।
गीता जननी गोद में, रहो नचीता सोय ॥१॥

श्री गीताजी रा सात सैं श्लोक है, अणी में भी सात सैं श्लोक है गीताजी रा जतरमाँ अध्याय रा जतरमाँ श्लोक रो ज्यो मतलब है अणी में भी वतरमाँ अध्याय रा वतरमाँ श्लोक रो वोहीज मतलब है । गीताजी रो ज्यो श्लोक जणी ढाल शूँ वंचे,अणी रो भी वो श्लोक वणीज ढाल शूँ वंचे है। अर्थात् या श्री गीताजी होज है केवल बोली मेवाड़ री है । अणी में जठे खोट होवे वठे सज्जन सुधार लेवेगा । गीताजी रे वास्ते तो केवा री ज्यादा जरूरत नी है क्यूँके या सब ही जाणे है के गीताजी को वर्णन भगवान् कर दियो है ने गीताजी भगवान् को वर्णन कर रियो है ।

दोहा

छोड़ उपाय न ले सके, रावण रूपी काम ।
गीता सीता रे जशी, पावे आतम राम ॥२॥

नोट

पे'ली तो भूमिका लिखवा रो विचार नी हो क्यूँ के जगप्रसिद्ध गीता रे वास्ते कई समझावणो ने कीं ने समझावणो ने कूण समझावे ने समझे वी तो वना कियाँ ही समझ जावे ने नी समझे वी समझाया शूँ भी नी समझे ने आपणी आपणी बुद्धि माफक सब ही समझे, ने ईं पे कींरो जोर चाले ? तो भी दस्तूर माफक शरू में भूमिका लिखी जीं रो भाव यो है के गीताजी रे वास्ते मतखाँ ने वाकब करणा जींशूँ वणा रो सन्देह मिट जाय ।

भूमिका में पे'लो दूहो है जींरो मतलब गीताजी रा अनुभव रो है के अस्यो अनुभव व्हेणो चावे । अन्त रा दूहा रो मतलब यो है के अस्यो व्हे वो गीताजी ने जाण शके है । गीताजी री या समश्लोकी सारदर्शावणी टीका है । ईं ने लिखवा में शोला तो संस्कृत री ने पांच भाषा री टीका रो आधारो लीधो है । खास करने ज्ञानेश्वरी और वामनी रो आधारो लीधो है। × × × × अणाँ रो अन्तःकरण शूँ उपकार मानूँ हूँ । मूल रे साथ हीज रे'वा शूँ ईं में सब आचार्यां को मत आय गियो है। जठे सब रो मत नी आवतो दिख्यो वठे प्राचीन व्हेवा शूँ शंकराचार्य का भाष्य आड़ी झुकणो पड़्यो, पण जठा तक व्हे शक्यो यूँ कम हीज व्हियो है । × × × × ईं में यो विचार राख्यो हे के जतरो सरलता शूँ मेवाड़ी भाषा में श्लोक रो भाव आय जाय वतरो सरलता शूँ राखणो । ईं विचार शूँ या लिखी गई है ने ईंज विचार शूँ देखवा री प्रार्थना है। दूज्यूँ तो महाभारत में हीज लिख्यो है के स्वयं श्रीकृष्ण भगवान् भी गीता ने के'ने पाछी दूजी दाण यूँ री यूँ नी के' शक्या जदी औरों री कई गणती । ;

ॐ

श्री भीष्मजी रे पे'ली री वात

अणी देश पे आगे एक भरत नाम रा वड़ा प्रतापी राजा व्हिया हा। वणा भरत रा वँश में एक शंतनु नाम रा राजा हस्तिनापुर पे राज करता हा। वणारे सात बालक व्हे व्हे न परा गिया। छोटो ही छोटो आठमो बालक रियो वणी रो नाम देवव्रत व्हियो। वणी बालक ने छोटी अवस्था में ही मेल ने वणी री मा भी परी गी। अणी न मायड़ा एकाएक बालक पे राजा शन्तनु घणो मोह राखता हा। धीरे धीरे अणी बालक री म्होट्यार अवस्था आवा लागी ने राजा री अवस्था ढलवा लागी। एकदन राजा शंतनु शिकार खेलवा गिया। वठे नदी रे नखे फरताँ फरताँ वणा एक रुपाली छोरी ने देखी ने वणा रो मन वणी सूँ ब्याव करवा रो व्हे गियो। वा एक नावड्या रा पटेल री बेटी ही। राजा वणी रा बाप नखे जाय ने वीने मांगी पण वणी छोरी रो बाप साफ नट गियो के आप राजा

हो तो भी हो दाना। के'वे है के 'घर हाण दीजे पण वर हाण न दीजे'। फेर आप रे म्होट्यार कुँवर है। काले राज तो वो ने वणी रा बेटा करेगा ने म्हारी बेटी रे जो बालक व्हेगा वी वणाँ रा हुकम में पराधीन रे'वेगा। अणी वच्चे तो नावड्या रा छोरा नें देवा शूँ म्हारी बेटी आपणी कधीरी कर खायगा ने सुखी रे'वेगा। या बात शुण राजा उदाश व्हे मेंलाँ में परा गिया।

पिता ने उदास देख वणाँ रे कुँवर शारी बात रो पतो चलाय पोते ही रथ में बैठ वणी पटेल नखे जाय ने कियो के पटेलां, थाणी बेटी ने म्हारी मा कर दो ने थाँ म्हारा नानाजी वण जावो। थांने जो भे'म व्हे के म्हारा दोयता ने राज नी मलेगा, तो लो म्हूँ प्रण करूँ हूँ के म्हूँ म्हारा बाप रा राजमूँ फूटी कोड़ी भी म्हारी जाण ने नी लूँगा। अन्न ने वस्त्र, खावा पे'रवा जतरो थाणां दोयता री चाकरी करने लेवूँगा और म्हारा वंश रा भी म्हारी नांईज थांणा दोयता रा वंशरी चाकरी करेगा। या शुण ने वणी पटेल कियो के आपणा ही मन री शाख नी देवाय जदी आखा वंश री शाख कूँकर देणी आवे जदी कुँवर कियो के म्हारा वंश री शाख

भी लाग जावे जदी तो थ थाणी बेटी दे दोगा के नी। जदी वणी कियो के अणी मे जो म्हारो शांश धाप जावे तो म्हूँ म्हारी बेटी देवा ने राजी हूँ। जदो वणी कुँवर थठे ही चाँद शूरज ने शापखो कर ने धो प्रण कीधो के जोवूँ जतरे अणी जन्म में कणी भी लुगाई शामो नी देखूँगा अर्थात् आठ ही तरे' रो शील व्रत अखंड पाळूँगा वणी दन शूँ ही अणी देवव्रत कुँवर रो नाम भीष्म पड़ गियो; क्यूँ के अश्यो कठिन प्रण करे वो संस्कृत मे भीष्म वाजे है। यूँ अणी भीष्म कुंवर वणी छोरी ने लाय ने बाप ने परणाय दी दो।

अणा राजा रे अणी छोटी राणी शूँ भी दो कुँवर व्हिया। वणा रा नाम चित्रवीर्य ने विचित्र-वीर्य हा। राजा शंतनु अणा दो ही भाया ने छोटी अवस्था में होज छोड़ ने चल गिया हा सो।भीष्म जी होज दो ही भाया ने उछेर ने म्होटा कीधा। अणा मे शूँ चित्रवीर्य तो गंधर्वां रा झगड़ा में काम आय गियो ने विचित्रवीर्य रियो वणी ने भीष्मजी दो व्या'व कराया, पण यो भी लुगायां में वत्तो रे'तो हो सो खेण रो रोग व्हे ने ओछी उमर में होज मर गियो। अणो रे एक राणी रे तो धृतराष्ट्र

नाम रो बेटो व्हियो ने एक रे पांडु नाम रो व्हियो। अणा शिवाय अणी विचित्रवीर्य रे एक पाशवान रे भी बेटो ह्वियो वणी रो नाम विदुर ह्वियो। धृतराष्ट्र, बड़ो बेटो, जन्म शूँ ही आंधो हो जीशूँ राज वणी रो छोटो भाई पाण्डु करतो हो। अणी पांडु भी दो ब्या'व कीधा हा। वणा में बड़ी श्री कृष्ण भगवान् री भुवा ही। वणी रे तीन कुँवर ह्विया। अणा में सब शूँ बड़ो युधिष्ठिर, वीशूँ छोटो भीम ने वणी शूँ छोटो अर्जुण शो। दूजी राणी रे दो जोड़ला बालक ह्विया वणा ने नकुल ने सहदेव के'ता हा। ई पाँच ही पांडु रा बेटा व्हेवा शूँ पांडव बाजता हा। पांडु थोड़ी उमर में ही पांच ही छोटा छोटा बालकां ने छोड़ ने चल गियो, ने छोटी राणी भी वीं रा दो ही बालक बड़ी शोक ने सोंप ने सती व्हे गई। आंधा धृतराष्ट्र रे शो बेटा व्हिया। अणारे बड़ावा में एक कुरु नाम रा राजा व्हिया हा, ने ई शो ही पाटवी रा हा जीशूँ कौरव बाजता हा। पांडव बड़ा धर्मवाला हा। वणा में भी बड़ो युधिष्ठिर तो धर्म रो हीज अवतार हो। कौरव पापी हा, वां मे भी बड़ो दुर्योधन तो कलेश रो हीज रूप हो। ई कौरव पांडव काका बाबा रा

भाई हा ने भेला री रमता खेलता हा पण माहो माहे अणा रे खार घणो हो क्यूँके पांडवाँ रो तो वाप राज करतो हो जी शूँ पांडव भी वापरो राज मांगता हा, ने कौरवां रो वाप आंधो हो तो भी हो बड़ो जो शूँ कौरव के'ता के वाप आंधो व्हियो तो कई म्हें तो आंधा नी हां राज तो म्हाणों है। भीम ने दुर्योधन रे तो अशी ग्रंटश पड़ गी ही के एक ने दूजो देख्या नी बॉछतो हो। कौरवाँ, पांडवॉ ने मारवा रा घणा उपाय कीधा पण आखर राम राखे वीं ने कूण मारे। यूँ करतां करतां शारा ही बड़ा व्हे गिया। जदी अणा रो लड़ाई मटावाने लोगां इन्द्रप्रस्थ नाम रो परगणो पांडवाँ ने देवाय दीधो ने पांडवाँरो राज हस्तिनापुर कौरवाँरे रीज रियो। परंतु पांडव जोगा हा ने अणा रे श्रीकृष्ण भगवान री मदद व्हेवाशूँ अणा नराई राजा ने जीत जोत ने आपणो राज नरोई वधाय लीदो। यूँ पांडवाँ रो वधतो प्रताप दुष्ट दुर्योधन ने नी खट्यो। वणीं जुवाँ में छल शूँ अणा पांडवाँ रो शारो राजपाट जीत ने घणो अनादर कीधो। पछे लोगाँ रा शमझावा शूँ या कोल कीधी के यां पाँच ही पांडवाँ ने लुगाई शेती बारा वरष रो वनवास

(देश निकालो) देणो ने तेरमाँ वरप में, छुप ने रे'वे । जो ठावा व्हे जावे तो फेर बारा वरप वन में रे' ने तेरमें वरप छुप ने रे'वे यूँ करथा ही जावे; पण तेरमे वरप ठावा नी व्हे तो पाछो यां रो इन्द्रप्रस्थ रो परगणो दे देणो । अणी कोल माफक घणा घणा दुख देख ने पांडव वन में रिया ने तेरमें वरप विराट नाम रा देश में वेश बदल ने रिया पण तो भी पापी कौरवां कियो के थें तो तेरमो वरप पूरो ह्वेता पे'ली ही ठावा ह्वे गिया जीं शूँ फेर यूँ ही तेरा वरप वन में रे'वो । पांडवाँ कियो के तेरा वरप केड़े म्हें ठावा व्हिया जीं शूँ अवे म्हाणा परगणा पाछो म्हाने दे दो। अणी वातरी नरी भोड़ चाली। आखर शारा ही शम-भाय थाक्या पण लड़ाई वना यो न्यावटो शुलझ तो नी दीख्यो। पांडव तो पांच गाम लेने ही राजीपो करवाने त्यार व्हे गिया हा। वी जाणता हा के कुटुम्ब कलेश ज्यूँ मटे ज्यूँ ही आछो पण कौरव तो शुई री अणी टके वतरी भी धरती देवा ने आरो नी व्हिया। अवे तो लड़ाई री नक्की ठे'र गी। दोई कानी री फौजाँ कुरुक्षेत्र नाम रा तीर्थ में थो युद्ध करवा वास्ते जाय जाय ने एकठी व्हेवा

लागी। पांडवा री सात अक्षौहिणी फौज ही, ने कौरवां रे इग्यारा अक्षौहिणी ही। पांडवा रा आछा सुभाव शूँ ने धर्म री वान व्हेवा शूँ ने शगा शगपण शूँ नराई राजा तो पांडवाँ री कानी शूँ लडवा आय गिया। यूँ ही नराई कौरवां रो राज व्हेवा शूँ ने वणा रो अन्न खावा शूँ तथा वणा शूँ मलता थका सुभाव रा व्हेवा शूँ भी वणा री कानी व्हे गिया।

अणी लड़ाई ने देखवा री राजा धृतराष्ट्र रे भी मन में आई पण आंधो व्हे वा शूँ वो देख नी शक तो हो सो संजय शारी बात ईं ने वाकब कर देतो हो। व्यास जी रा वरदान शूँ अणी संजय ने हस्तिनापुर में ही शारी वातां दीख जाती ही। अणा कौरव पांडवाँ री वेवरा वार शारी वात महाभारत नामरी पोथी में वेदव्यास जी लखी है। यो महाभारत पाँचमो वेद है। ईं में लड़ाई री वगत अर्जुण घबराय गियो जदी श्री कृष्ण भगवान् वणी ने उपदेश कीदो वणी उपदेश रो नाम भगवद्गीता पड्यो। या गीता तो जाणे ज्ञान रो भंडार ने वेदाँ रो सार हीज है।

ॐ

श्रीगणेशायनमः।

अथ श्री भगवद्गीता प्रारम्भः

प्रथमोऽध्यायः।

धृतराष्ट्र उवाच।

धर्मक्षेत्रे कुरुक्षेत्रे समवेता युयुत्सवः।
मामकाः पाण्डवाश्चैव किमकुर्वत संजय। १॥

अथ समश्लोकी सारदर्शावणी टीका।

ॐ पे'लो अध्याय प्रारंभ।

धृतराष्ट्र पूछयो।

धर्मक्षेत्र कुरुक्षेत्र, मँय जी लड़वा मिल्या।
म्हारा ने पाण्डुरा बेटा, पछे फेर कर्‌या कई॥ १॥

अथ गंगाजळी की टीका प्रारंभ

ॐ पे'लो अध्याय प्रारंभ

गीता गंगारी करी, गंगोत्तरी गुमान १।
चतुर करी गंगाजळी, आपण घट अनुमान ॥

धृतराष्ट्र[1] कियो के हे संजय, म्हारा ने पांडु रा[2] बेटा कुरुक्षेत्र[3] नाम रा तीर्थ में लड़वा रे वास्ते भेला व्हिया हा सो पछे वणा कई[4] कीधो ॥ १ ॥

अथ भावार्थ भागीरथी टिप्पणी प्रारंभ।

१—धृतराष्ट्र रथ में बैठवावालो आँधो ने पुत्राँ रा रागद्वेष में उलझरियो थको, रथ ने हाँकवा वाला सूझता (दिव्यदृष्टि प्राप्त) संजयने पूछे, यूँही अर्जुण भी रथ में बैठवा वालो मोहान्ध व्हे, रथ हाँकवा वाला श्रीकृष्ण दिव्यज्ञान सम्पन्नने पूछे है, यूँही नी समझे वी (जड़) गुण समझणा चैतन्य सूँ समझे है—यो भाव है।

२—पाण्डु रा हीज, 'चष्ठ' सूँ कियो है। 'मुख्य लड़ाई रो कारण वी हीज है' यो राजा रो भाव है। आपणो पक्ष साँचो हीज दीखे। फेर ये तो आँधो है।

३—कुरुक्षेत्र तीर्थ में पुण्य करवा भेला व्हे ज्यूँ समरयज्ञ करवा भेला

सजय उवाच ।

दृष्ट्वा[1] तु पाण्डवानीक, व्यूढ दुर्योधनस्तदा ।
आचार्यमुपसगम्य, राजा वचनमब्रवीत् ॥ २ ॥

संजय कही ।

पाण्डवाँ री वडी भारी, देख फौज सजी थकी ।
द्रोणाचार्य नखे जाय, दुरयोधन यूँ कियो ॥ २ ॥

संजय कियो के जदी पाण्डवां री फौज ने मोरछा बांध ने त्यार व्ही थकी देख ने

अविमुक्त स्थान ने भी कुरुक्षेत्र के' है "देवासुर सग्राम ही यो युद्ध है । मनख मात्र ही में यो व्हेतो रे' है" यूँ रूपक झूँठो नी पण सत्य ही है । रूपक तो लौकिक दृष्टि रो है, क्यूँके यथार्थ वस्तु ने और तरे' शूँ शमझणो रूपक है, ज्यूँ पञ्चतत्वाँ ने मनुष्य आदि मानणा । ई ने लोकतन्त्र के' है । वास्तव में सात्वत-तन्त्र (भक्ति) पष्ठितन्त्र (साख्य) आदि सर्व तन्त्र लोकतन्त्र शूँ छुड़ावाने काँटा शूँ काँटो काड़े ज्यूँ है । वास्तविक में तो है ज्यो है । वठे सर्व तन्त्र स्वतन्त्र है । सब बोली रा भेद है ।

२—कई कई कीधो सब विगतवार के' यो भाव है । सक्षेप तो पे'ली कियो ।

१—"दृष्ट्वातु" रो अर्थ है 'देखता हा' ईशूं दुर्योधन री आतुरता

राजा दुर्योधन[1] झट द्रोणाचार्य[2] नखे जाय ने यूँ के'वा लागो के—

पश्यैतां पाण्डुपुत्राणामाचार्य महतीं चमूम् ।
व्यूढां द्रुपदपुत्रेण तव शिष्येण धीमता ॥ ३ ॥

पाँडवां री बड़ी फौज, देखो आचार्य आप या ।
शजाई आप रे चेले, धृष्टद्युम्न महामती ॥३॥

हे गुरुजी महाराज, पांडु[3] रा बेटां[4] री या

व्हे है । घणी ने पाण्डवाँ रो लड़ाई करणो असंभव दीखतो हो पण फौज ने जमी थकी देख घबरायो ।

१—बाप बैठाँ ही उद्दण्ड राजा बण गियो । अथवा—आप तो आँधा व्हे याशूँ राजा नी बण्या पण थो शूझतो व्हे ने राज रो दावो कर लड़ाई रो कारण ल्हियो । राजा है जीं शूँ आपने नी गनारे है ।

२—बातचीत में दबता पणा ने छुपावे पण (द्रोणाचार्य रो) आशरो लेणो पड़्यो ।

सबाँ रा गुरु ने खार दैवाय ने जीतणो-यो भाव है ।

३—पांडु पुत्र शूँ व्यङ्गय शूँ के'वे के पांडुरा भी बेटा नी है जदी कई माँगे । पांडुरा व्हे तो भी याँ रो कई हक ।

४—बुद भय्या है जी शूँ झूँठा है ने लड़े है, या बात तो सर्व सम्मत है;

म्होटी फौज देखवा में तो आवे। अणी ने घणे शम झणे आपरे चेले ने राजा द्रुपद रे बेटे जमाई है, जीशूँ अर्जे करूँ हूँ ॥ ३ ॥

अत्र शूरा महेष्वासा, भीमार्जुनसमा युधि ।
युयुधानो विराटश्च द्रुपदश्च महारथः ॥ ४ ॥

ई में धनुषधारी ई, भीम अर्जुण रे जस्या ।
द्रौपदी रो पिता और, युयुधान विराट भी ॥ ४ ॥

अणी फौज में भीम ने अर्जुण रे बरोबरथ्या

क्यूँ के द्रोण, भीष्म आदि वणारी आडी नी रिया, अणारी मुख्य शाखा रो नाम कौरव रियो वी पाँडुरा नाम शूँ बाज्या, अणारे हस्तिनापुर राजधानी ठेठरी री' वणारे इन्द्रप्रस्थ री' पण पाडवाँ ने पण पाँती छुट भय्या ज्यूँ नी पण वणी सवाँ ही देवाई ने वा हीज ओछी पाँच गाम मात्र ई माँगे सो भी नी देवा शूँ ने दगो करवा शूँ दुर्योधन पापी बाज्यो ।

१—थोड़ी शी फौज आप शरीखा रे शामी लावणो आपरो अनादर है । 'द्रुपद पुत्र' 'तवशिष्य' शूँ घोर विरोधी है या याद देवावे है । 'बुद्धिमान्' शूँ आचार्य री भूल याद देवावे है के ई रा बाप ने छोड़ दीधो, ई ने विद्या दीधी, या देख अबे तो यूँ करो मती ।

२ – कृतघ्न, गुणचोर, शूँ मतलब है ।

म्होटा म्होटा धनुष राखवावाला, ई ई शूरा है:—
युयुधान ने विराट ने घणा ने नी गनारे जश्यो
द्रुपद ॥ ४ ॥

धृष्टकेतुश्चेकितानः काशिराजश्च वीर्यवान् ।
पुरुजित् कुन्तिभोजश्च शैब्यश्च नरपुंगवः ॥ ५ ॥

धृष्टकेतु तथा काश्य; चेकितान महीपति ।
शिबिपुत्र नरश्रेष्ठ, पुरुजित् कुंतिभोज भी ॥ ५ ॥

धृष्टकेतु ने चेकितान ने बलवान् काशी रो राजा
ने पुरुजित् ने कुन्तिभोज ने मनखां में सरा'वा ज-
श्यो शिबि रो बेटो ॥ ५ ॥

युधामन्युश्च विक्रान्त उत्तमौजाश्च वीर्यवान् ।
सौभद्रो द्रौपदेयाश्च सर्व एव महारथाः ॥ ६ ॥

उत्तमौजा युधामन्यु, अभिमन्यु पराक्रमी ।
पाँच ही द्रौपदी पुत्र, साराही ई महारथी ॥ ६ ॥

ने टणको युधामन्यु ने बलवान् उत्तमौजा,
सुभद्रा रो बेटो ने द्रौपदी रा बेटा ई शघला ही नरा
ई ने नी गनारे जश्या है ॥ ६ ॥

१—यो विशेषण सबाँ रे लाग शके है ।

अस्माकं तु विशिष्टा ये तान्निबोध द्विजोत्तम ।
नायका मम सैन्यस्य सञ्ज्ञार्थं तान्ब्रवीमिते ॥ ७ ॥

आपाँ रे माँय भी नामी जाणजे द्विजराज ई ।
मुखिया फौज म्हारी रा, आपने जाणवा कहूँ ॥ ७ ॥

अबे हे उत्तम ब्राह्मण[1], आपाणे मांय भी जी टालमां टालमां म्हारी फौज रा मुखिया है वणा ने म्हूँ आपरे ध्यान में रे'वे अणी वास्ते आपने याद देवावूँ हूँ ॥ ७ ॥

भवान् भीष्मश्च कर्णश्च, कृपश्च समितिंजयः ।
अश्वत्थामा विकर्णश्च सौमदत्तिस्तथैवच ॥ ८ ॥

आप, भीष्म तथा कर्ण, कृप जो समितिंजय ।
विकर्ण सोमदत्ती ने, अश्वत्थामा जयद्रथ ॥ ८ ॥

आप ने भीष्म ने रणजीत कृप ने अश्वत्थामा विकर्ण ने सोमदत्त रो बेटो ने यूँ ही ॥ ८ ॥

१—उत्तम ब्राह्मण के'वा शूँ पठी सो एक भी ब्राह्मण नी है, अठी हार व्हे तो ब्राह्मणाँ री भी शामल ही शमझणी क्यूँ के वणारा मुखिया आप आय गिया यो भाव है ।

अन्ये च बहवः शूरा मदर्थे त्यक्तजीविताः ।
नानाशस्त्रप्रहरणाः सर्वे युद्धविशारदाः ॥ ९ ॥

और भी वीर ई त्यार, म्हारा पे जीव वारवा ।
शस्त्र विद्या घणी जाणे, सवी कुशल युद्ध में ॥ ९ ॥

और भी नराई शूरमां म्हारे वास्ते जीव झोंकवा ने त्यार है। ई शारा ही तरें तरें रा आवध वा'थ जाणे है और लड़ाई में होश्यार है॥ ९ ॥

अपर्याप्तं तदस्माकं बलं भीष्माभिरक्षितम् ।
पर्याप्तं त्विदमेतेषां बलं भीमाभिरक्षितम् ॥ १० ॥

भीष्म री रखवाळी में, आपणी फौज मोकळी ।
भीम री रखवाळी में, वणा रे फौज री कमी ॥ १० ॥

अशी आपणी फौज भीष्मजी री रखवाळी में है ने नरी[2] है ने या अणा पांडवाँ री फौज भीम री रखवाळी में है ने थोड़ी[3] है ॥ १० ॥

१—अणी में सबाँ री तारीफ कर मन वधायो है।
२—'थोड़ी' भी अर्थ व्हे शके है।
३—'नरी' भी अर्थ व्हे शके है।

अयनेषु च सर्वेषु यथाभागमवस्थिताः ।
भीष्ममेवाभिरक्षन्तु भवन्तः सर्व एव हि ॥ ११ ॥

मोरछाँ पे रहे गाढ़ा, आपणाँ आपणाँ परे ।
भीष्महीं री करो रक्षा, सारा ही आप शूरमा ॥ ११ ॥

अबे आप शघला ही पांती परवाणे मोरछा पे गाढ़ा रें' ने भीष्मजी री हीज रखवाली राखो ॥ ११ ॥

तस्य सञ्जनयन् हर्षं कुरुवृद्धः पितामहः ।
सिंहनादं विनद्योच्चैः शङ्खं दध्मौ प्रतापवान् ॥ १२ ॥

हर्षावता थका वीं ने दाना भीष्म पितामह ।
प्रतापी सिंह ज्यूँ गाज, बजायो शंख जोर शूँ ॥ १२ ॥

अबे तो कौरवां में वड़ा और प्रतापवान भीष्म पितामह, वणी दुर्योधन ने राजी करता थका जोर शूँ ना'र री नाईं गर्जे ने शंख बजायो ॥ १२ ॥

ततः शङ्खाश्च भेर्यश्च, पणवानकगोमुखाः ।
सहसैवाभ्यहन्यन्त, स शब्दस्तुमुलोऽभवत् ॥ १३ ॥

१—"मोरछाँ पे दृढ़ रें'णो ही भीष्मजी री रखवाली करणो है" यो भाव है।

जदी तो मादळाँ वाँक्या, नगारा शंख ढोल भी ।
एक साथे वज्या शारा, ह्वियो यूँ घोर शोर वो ॥ १३ ॥

वणी शंखरे वाजतां ही एकी साथे नरा ही शंख मादळाँ नगारा ढोल ने वाज्या, कौरवाँ री फौज में चारहो कानी शूँ वाजवा लागा अणा रो शब्द घणो भारी व्हे गियो ॥ १३ ॥

तत श्वेतैर्हयैर्युक्ते महति स्यदने स्थितौ ।
माधव पाण्डवश्चैव दिव्यौ शङ्खौ प्रदध्मतु ॥ १४ ॥

मोतियां चौकडी वाळा, रथ में राजता थका ।
कृष्ण अर्जुण दोयाँ ही, वजाया दिव्य शंख दो ॥ १४ ॥

वणी वगत धोला[2] घोडांरा बड़ा रथ में वराज्या थका श्री कृष्णभगवान ने अर्जुण भी आपणा अलौकिक शंखाँ ने बजाय दीधा ॥ १४ ॥

पाञ्चजन्य हृषीकेशो देवदत्त धनजय ।
पौण्ड्र दध्मौ महाशङ्ख भीमकर्मा वृकोदर ॥ १५ ॥

१—चोभर शूँ ।
२—रत रो वर्णन वैशपायन जनमेजयरा सवाद में है यूँ जाणजो ।

पाञ्चजन्य हृषीकेश, देवदत्त धनञ्जय ।
पौण्ड्नामा बड़ो शंख, बजायो भीमसेन भी ॥ १५ ॥

भगवान कृष्ण पांचजन्य नामरा शंख ने बजायो, अर्जुण देवदत्त नाम रा शंख ने बजायो, भयंकर काम करवा वाले भीम पौण्ड्र नामरो म्होटो शंख बजायो ॥ १५ ॥

अनन्तविजय राजा कुन्तीपुत्रो युधिष्ठिरः ।
नकुलः सहदेवश्च सुघोषमणिपुष्पकौ ॥ १६ ॥

त्यूँ अनन्तविजै राजा, कुन्तीपुत्र युधिष्ठिर ।
माद्रीपुत्राँ बजाया दो, सुघोष मणिपुष्पक ॥ १६ ॥

कुन्तीपुत्र राजा युधिष्ठिर अनन्तविजय नाम रो शंख बजायो नकुल सुघोप ने सहदेव मणिपुष्पक नाम रा शंख ने बजायो ॥ १६ ॥

काश्यश्च परमेष्वासः शिखण्डी च महारथः ।
धृष्टद्युम्नो विराटश्च सात्यकिश्चापराजितः ॥ १७ ॥

काशिराज धनुषधारी, शिखण्डी भी महारथी ।
अजीत सात्यकी वीर, धृष्टद्युम्न विराट भी ॥ १७ ॥

म्होटा धनुष वालो काशी रो राजा ने घणां शूँ लड़वा वालो शिखंडी ने धृष्टद्युम्न ने विराट ने नी हारवा वालो सात्यकी ॥ १७ ॥

द्रुपदो द्रौपदेयाश्च सर्वशः पृथिवीपते ।
सौभद्रश्च महाबाहुः शङ्खान्दध्मुः पृथक्पृथक् ॥ १८ ॥

द्रौपदी रा पिता पुत्राँ, अभिमन्यु सबी जणा ।
आपणाँ आपणाँ शंख, वजाया एक साथ ही ॥ १८ ॥

द्रुपद ने द्रौपदी रा बेटा ने सुभद्रा रो बेटो । हे राजा, अणां भी आपणां आपणां शंख चार ही कानी शूँ वजाया ॥ १८ ॥

स घोषो धार्तराष्ट्राणां हृदयानि व्यदारयत् ।
नभश्च पृथिवीं चैव तुमुलो व्यनुनादयन् ॥ १९ ॥

दुरयोधन आदी री, छात्याँ ने चीरतो थको ।
धरा आकाश में लागो, शब्द वो घोर गूँजवा ॥ १९ ॥

वणी शंखा रे शब्द जाणे धृतराष्ट्र[1] रा बेटां री छात्यां फाड न्हाखी ने धरती ने आकाश रे बचे वणीरी भारी गुंजार छायगी ।

१—दुर्योधन री कानी रा भी अर्थ व्हे शके है ।

अथ व्यवस्थितान्दृष्ट्वा धार्तराष्ट्रान्कपिध्वज. ।
प्रवृत्ते शस्त्रसंपाते धनुरुद्यम्य पाण्डव ॥ २० ॥

सावधान ह्विया जाण, दुरयोधन आदि ने ।
शस्त्रां ने खेंचता देख, तोल गाण्डीव आप भी ॥२० ॥

अबे धृतराष्ट्र रा बेटॉ ने लड़वा त्यार देख, ने शस्त्रा री वा'च व्हेतो देख अर्जुण भी धनुष ने उँचाय लीधो ॥ २०[1] ॥

हृषीकेशं तदा वाक्यमिदमाह महीपते ।
अर्जुन उवाच ।
सेनयो रुभयोर्मध्ये रथं स्थापय मेऽच्युत ॥ २१ ॥

श्रीकृष्ण ने वणी वेलाँ, वीर अर्जुण यूँ कह्यो ।
अर्जुण कह्यो ।
दोही फौजा वचे म्हारा, रथ ने रोक दो हरि ॥ २१ ॥

हे राजा, वणी वगत वणी अर्जुण श्रीकृष्ण भगवान ने या वात कही—

१—दुर्योधन री कानी रा भी अर्थ व्हे शके है ।

अर्जुण कही के हे अच्युत भगवान; म्हारा रथ ने अणा दोही फौजाँ रे वचे अतरीक देर ऊभो करदो ॥ २१ ॥

यावदेतान्निरीक्षेऽहं योद्धकामानवस्थितान् ।
कैर्मया सह योद्धव्यमस्मिन् रणसमुद्यमे ॥ २२ ॥

देख लूँ जतरे याँने, जुझाराँ ने करयाक है ।
देखां कूण लड़े म्हा शूँ, अणी संग्राम में अबे ॥२२॥

के जतरे म्हूँ अणां लड़वा रे वास्ते त्यार व्हे रिया है जणा ने धार लूँ, अणी लड़ाई री वगत में म्हने कणा कणा शूँ लड़णो चावे ॥ २२ ॥

योत्स्यमानानवेक्षेऽहं य एतेऽत्र समागताः ।
धार्तराष्ट्रस्य दुर्बुद्धेर्युद्धे प्रियचिकीर्षवः ॥ २३ ॥

पधार्‍या रण में आज, शूराँ ई करया करया ।
युद्ध में करवा आछो, दुरयोधन दुष्ट गे ॥ २३ ॥

जी अठे दुर्बुद्धि दुर्योधन ने जीतावा रे वास्ते भेला व्हे ने आया है ने अबे लड़ेगा वणा ने देखाँ ॥ २३ ॥

संजय उवाच ।

एवमुक्तो हृषीकेशो गुडाकेशेन भारत ।
सेनयोरुभयोर्मध्ये स्थापयित्वा रथोत्तमम् ॥ २४ ॥
भीष्मद्रोणप्रमुखतः सर्वेषाञ्च महीक्षिताम् ।
उवाच पार्थ पश्यैतान् समवेतान् कुरूनिति ॥ २५ ॥

संजय कही ।

शुणताँ पाण यूँ के'णो, कृष्ण अर्जुण रो वंठे ।
दो हीं फौजाँ वचे लाय, रथ उत्तम रोक ने ॥ २४ ॥
भीष्म,द्रोणादि शाराँ रे, मूँडा आगे कियो हरी ।
देख ई पार्थ शारा ही, व्हिया कौरव एकठा ॥ १५ ॥

संजय कियो के हे राजा, अर्जुण यूं कियो जदी श्रीकृष्ण भगवान् दो ही फौजाँरे वचे भीष्म द्रोण ने सब राजा रे मूंडा आगे वणी बडा रथ ने ऊभो कर दीधो ने यूँ हुकम कीधो के हे अर्जुण, अबे अणां सब कौरवाँ ने धार ले ॥ २४ ॥ २५ ॥

तत्रापश्यत् स्थितान्पार्थः पितृनथ पितामहान् ।
आचार्यान्मातुलान्भ्रातृन्पुत्रान्पौत्रान्सखींस्तथा ॥ २६ ॥

ऊभा देख्या वठे पार्थ, पिता और पितामह ।
पोता, पुत्र, गुरू, मामा, गोठ्या ने भाइबंध भी ॥ २६ ॥

अवे अर्जुण वणा दो ही फौजाँ में लड़वा ने त्यार हिया थकां ने देखे तो (काका, बाबा) बाप, दादा, गुरु, मामा-भाई, बेटा, पोता हेतू मो'वती (वे,वारी) ॥ २६ ॥

श्वशुरान्सुहृदश्चैव सेनयोरुभयोरपि ।
तान्समीक्ष्य स कौन्तेयः सर्वान्बन्धूनवस्थितान् ॥ २७ ॥

शुशरा, मित्र, भी देख्या, दोई फौजां वचे वणी ।
शारा ही लागती रा ने, एकठा देख अर्जुण ॥ २७ ॥

शुशरा ने गोठ्या हीज आंछल गूँछल दीख्या । यूँ वणां लागती वलगती रा ने हीज मरवा मारवा ने त्यार देख ॥ २७ ॥

कृपया परयाविष्टो विषीदन्निदमब्रवीत् ।

अर्जुन उवाच ।

दृष्ट्वेमं स्वजनं कृष्ण युयुत्सुं समुपस्थितम् ॥

धनराय कही वाणी, दया शूं होय ने दुखी ।
अर्जुण बोल्यो ।
कृष्ण यां लागती रा ने, लड़वा त्यार देखने ॥ २८ ॥

वो अर्जुण मोह शूँ घणो हीज अमूझ ने घबरातो थको यूँ के'वा लागो । अर्जुण कियो के हे कृष्ण, अणा लागतीरा ने हीज मरवा मारवा त्यार देख ने ॥ २८ ॥

सीदन्ति मम गात्राणि मुखं च परिशुष्यति ।
वेपथुश्च शरीरे मे रोमहर्षश्च जायते ॥ २९ ॥

म्हारो तो डील टूटे ने, शूखे है मुख भी अबे ।
देह में धूजणी छूटे, रूम रूम खड़ा हिया ॥ २९ ॥

म्हारा संध दुखे है ने कंठ शूखे है ने डील धूजे है ने रूँ रूँ ऊभा व्हे है ॥ २९ ॥

गाण्डीवं स्रंसते हस्तात्त्वक्चैव परिदह्यते ।
न च शक्नोम्यवस्थातुं भ्रमतीव च मे मनः ॥ ३० ॥

गाण्डीव हाथ शूं छूटे, म्हारी या चामड़ी बळे ।
ठे'रणी भी नहीं आवे, म्हारो जावे भमे मन ॥ ३० ॥

हाथ में शूँ गाण्डीव धनुष रलकने परो पड़े है। (मुट्ठी शूनी पड़गी है) डील बलै है। म्हारी भती अबे अठे नी ढबणी आवे है। जाणे डोलो उथले ज्यूँ म्हारो मन चक्कर खावे है ॥ ३० ॥

निमित्तानि च पश्यामि विपरीतानि केशव ।
न च श्रेयोऽनुपश्यामि हत्वा स्वजनमाहवे ॥ ३१ ॥

खोटा शकुन भी दीखे, म्हने ई मधुसूदन।
मारया शूं लागती रां ने, भलो दीखे नहीं म्हने ॥३१॥

हे कृष्ण, म्हने शकुन भी खोटा दीखे है। लड़ाई में भायां ने मार ने म्हने तो कई भी भलाई नी दीखे है ॥ ३१ ॥

न काङ्क्षे विजयं कृष्ण न च राज्यं सुखानि च ।
किं नो राज्येन गोविन्द किं भोगैर्जीवितेन वा ॥ ३२ ॥

चावूं नी राज भी म्हूं तो, नी चावूं सुख जीत भी।
जीवणो सुख ने राज, आपण काम रो कई ॥ ३२ ॥

१—गारणेरा

हे कृष्ण नी तो म्हारे जीत चावे नी यो राज चावे ने नी अश्या सुख चावे। हे गोविंद, अश्या राज सुख ने ले ने आपाँ कई करां अथवा अश्या जीवा वचे तो आपणो मरजाणो ही आछो है ॥३२॥

येषामर्थे काङ्क्षितं नो राज्य भोगाः सुखानि च ।
त इमेऽवस्थिता युद्धे प्राणाँस्त्यक्त्वा धनानि च ॥ ३३ ॥

जणाँ रे वासते चावाँ, राज ने सुख भोग भी ।
वी तो ई जुद्ध में ऊभा, छोड़ ने धन प्राण ने ॥ ३३ ॥

जणां रे वास्ते सुख ने राज, भोग आपां चावां वी तो ई जीव पे, ने सब तरे' रा धन पे पाणी मे'ल ने लड़ाई में मरवा ने ऊभा है ॥ ३३ ॥

आचार्याः पितरः पुत्रास्तथैव च पितामहाः ।
मातुलाः श्वशुराः पौत्राः श्यालाः सम्बन्धिनस्तथा ॥३४॥

पिता ई पुत्र ई दादा, कृष्ण, ई गुरु भी अठे ।
मामा ने शुशरा पोता, शाळा सम्बन्धि ई सभी॥ ३४ ॥

१—अठे अभिमन्यु आदि सबाँ सूँ मतलब है ।

गुरु, बाप, बेटा ने दादा, मामा, सुसरा, पोता, साला यूँही दोही फौजां में एक एक रा लागती वलगती रा है।

एतान्न हन्तुमिच्छामि घ्नतोऽपि मधुसूदन ।
अपि त्रैलोक्यराज्यस्य हेतोः किं नु महीकृते ॥ ३५ ॥

जो ई मारे म्हने तो भी, मारूं यांने कदी नहीं ।
त्रिलोकी राज तावे भी, धरा रे वासते कई ॥ ३५ ॥

हे भगवान, त्रिलोकी रो राज हाते लागतो व्हे तो भी म्हूँ तो अणाने मारणो नी चावूँ जदी धरती रे वास्ते तो अस्यो काम कूँकर करूँ। ई म्हने मार न्हाखे तो भलेई मारो पण म्हूँ तो याने नी मारूँ ॥ ३५ ॥

निहत्य धार्तराष्ट्रान्नः का प्रीतिः स्याज्जनार्दन ।
पापमेवाश्रयेदस्मान्हत्वैतानाततायिनः ॥ ३६ ॥

अणाने मार ने कृष्ण, पावांगा म्हां कशी खुशी ।
पाप्यां ने मार ने शामां, पापी थांपी वणा अठे ॥ ३६ ॥

हे कृष्ण, अणा धृतराष्ट्र रा बेटां ने मारने

पछे म्हें कश्यो सुख पावांगा। अणा पाप्यां ने मार ने शामां आंपी हत्यारा गोत्रघाती हीज वाजाँगा॥ ३६॥

तस्मान्नार्हा वयं हन्तुं धार्तराष्ट्रान्स्वबान्धवान्
स्वजनं हि कथं हत्वा सुखिनः स्याम माधव॥ ३७॥

आपां ने जोग नी है या, मारणा बन्धु आपणा।
भायां ने मार ने आपां, सुखी व्हांगा कणीं तरे॥ ३७॥

अणी वास्ते म्हाने म्हाणा भाई अणा धृतराष्ट्र रा बेटा ने नी मारणा चावे। हे माधव, सागती रा ने मार ने पछे म्हें भी कूँकर[1] सुख पावांगा॥ ३७॥

यद्यप्येते न पश्यन्ति लोभोपहतचेतसः।
कुलक्षयकृतं दोषं मित्रद्रोहे च पातकम्॥ ३८॥

लोभ शूँ होय ने आँधा, देखे नी ज्यो अचेतई।
कुल रा नाश री हाण, पापयो मित्रघात रो॥ ३८॥

भलेई आछो चावा वाला रो खोटो करवा रो

1—सुखी व्हेगा कई।

पाप, ने वंश नाश री खोटायां, ई तो लोभ शूँ अचेत व्हे रिया है जी शूँ नी देखे ॥ ३८ ॥

कथं न ज्ञेयमस्माभिः पापादस्मान्निवर्तितुम् ;
कुलक्षयकृतं दोषं प्रपश्यद्भिर्जनार्दन ॥ ३९ ॥

आपाँ ने बराणो चावे, शूझताँ सूरदास क्यूँ ।
कुल रो नाश रो दोष, चौड़े यो देखता थकाँ ॥ ३९ ॥

पण हे जनार्दन भगवान्, आपाँ ने तो कुल रा नाश री खोटायाँ देखता थकाँ भी अणी पाप शूँ टळवा रो विचार कूँकर नी करणो चावे ॥ ३९ ॥

कुलक्षये प्रणश्यन्ति कुलधर्माः सनातनाः ।
धर्मे नष्टे कुलं कृत्स्नमधर्मोऽभिभवत्युत ॥ ४० ॥

सदा रा कुल रा धर्म, कुल नाशह्वियाँ मिटे ।
धर्म नाश ह्वियाँ कृष्ण, छावे कुल अधर्म शूँ ॥ ४० ॥

कुल नाश व्हेवा शूँ ठेठ शूँ आवती थकी कुल री धर्म री रीतां मट जावे है ने धर्म री रीतां मटवा शूँ आखो ही कुल अधर्म में डूब जावे है ॥ ४० ॥

अधर्माभिभवात्कृष्ण प्रदुष्यन्ति कुलस्त्रियः ।
स्त्रीषु दुष्टासु वार्ष्णेय जायते वर्णसंकरः ॥ ४१ ॥

अधर्म वध जावा शूँ, वगड़े कुल कामण्यां ।
लुगायाँ वगड़े ज्याँ में, वर्णसंकर नीपजे ॥ ४१ ॥

हे कृष्ण, कुल अधर्म शूँ छाय जावे जदी लुगायाँरा चाला भी वगड़ जावे ने वगड़ी थकी लुगायाँ में वर्ण संकर (दोगला) वाल् बचा उपजवा लाग जावे ॥ ४३ ॥

संकरो नरकायैव कुलघ्नाना कुलस्य च
पतन्ति पितरो ह्येषां लुप्तपिण्डोदकक्रियाः ॥ ४२ ॥

वंश नाशक ने वंश, ई शूँ नरक में पड़े ।
अणारा पितृ भी पाछा, पाणी पिण्ड वना पड़े ॥४२॥

अश्या वर्णसंकर वणी कुल घाती ने ने आखा ही कुल ने नरक में हीज ले जावे है। वणा कुल घातियाँ रा बड़ावा भी पाणी पिण्ड नी मलवा शूँ स्वर्ग में शूँ पाछा नीचा पड़ जावे है ॥ ४२ ॥

---

(१) स्वतंत्र आचरण करवा शूँ है वी वर्ण शंकर बाजे है।

दोषैरेतैः कुलघ्नानां वर्णसंकरकारकैः ।
उत्साद्यन्ते जातिधर्माः कुलधर्माश्च शाश्वताः ॥ ४३ ॥

ई दोष कुलघाती रा, वणावे वर्णसंकर ।
जात रा कुल रा धर्म, अणा शूँ सबही मटे ॥ ४३ ॥

अणा अतरी वर्णसंकर करवा वाली खोटायाँ शूँ वणा कुलघातकाँ रा कुळ री ठेठ शूँ आवती रीताँ ने धर्म नाश व्हे जावे है ॥ ४३ ॥

उत्सन्नकुलधर्माणां मनुष्याणां जनार्दन ।
नरके नियतं वासो भवतीत्यनुशुश्रुम ॥ ४४ ॥

कुलधर्म मटे ज्याँ रा, मनुष्याँ रा जनार्दन ।
वाँ रा नरक में वास, है शुणाँ हाँ सदैव शूँ ॥ ४४ ॥

जणाँ मनखाँ रा यूँ कुळ रा धर्म नाश व्हे जावे वणा रो सदा ही नरक में हीज वास व्हे है। हे कृष्ण जनार्दन, या वात आँपाँ ठेठ शूँ बरोबर शुणता आय रियाँ हाँ ॥ ४४ ॥

अहो बत महत्पापं कर्तुं व्यवसिता वयम् ।
यद्राज्यसुखलोभेन हन्तुं स्वजनमुद्यताः ॥ ४५ ॥

अहो अश्यो महापाप, करवा त्यार म्हें व्हिया ।
राज रा लोभ शूँ लागा, भायाँ ने मारवा अबे ॥४५॥

जणी में देखजे फेर आंपा करयो म्होटो भारी पाप करवा ने त्यार व्हे गिया हाँ के राज रा सुख रो लोभ में आय ने भायाँ रा गला काटवा लागा ॥ ४५ ॥

यदि मामप्रतीकारमशस्त्रं शस्त्रपाणयः ।
धार्तराष्ट्रा रणे हन्युस्तन्मे क्षेमतरं भवेत् ॥ ४६ ॥

शस्त्रहीण म्हने जो ई, मारे शस्त्र लियाँ अठे ।
कई तो भी करूँ नी म्हूँ, म्हारे आछो अणी'ज में ॥४६॥

अबे तो ई रण में म्हूँ तो शस्त्र परा न्हाखूँ ने इ धृतराष्ट्र रा बेटा शस्त्र खेंचें ने म्हूँ तो थां रे शामो वाँको भी नी चोगूँ ने ई म्हने मार न्हाखे तो अणी में हीज म्हारे घणो लाभ व्हे ॥ ४६ ॥

संजय उवाच ।

एवमुक्त्वार्जुनः संख्ये रथोपस्थ[२] उपाविशत् ।
विसृज्य सशरं चापं शोकसंविग्नमानसः ॥ ४६ ॥

ॐ तत्सदिति श्री भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादेऽर्जुनविषादयोगो नाम प्रथमोऽध्यायः ॥१॥

१—कुल-घात रो मनसापाप कीधो वो छूट जावे यो भाव है ।
२—'रथोपस्थ' रथ रो दिवाय रो आसारो (मोंडो) ऊपर यूँ मे'ल्यो थको ।
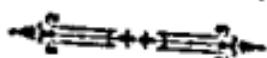
संजय बोल्या ।

यूँ कहे रण में पार्थ, न्हाख गांडीव बाण ने ।
बैठो रथ भड़े ढीलो, शोक शूँ घबराय ने ॥ ४७ ॥

ॐ तत्सत् इति श्री भगवद्गीता उपनिषद् में ब्रह्मविद्या योगशास्त्र में श्रीकृष्णार्जुन संवाद में अर्जुन विषाद योग नाम पे'लो अध्याय समाप्त ह्वियो ॥१॥

संजय कियो के हे राजा, अर्जुण यूँ के'ने वणी रण री वगेत में धनुष सेती बाण ने न्हाख, शोक आगे अमूझतो थको रथ में शूँ शरक पाछे (पाय-दान-खवाशी) में बैठ गियो ॥ ४७ ॥

ॐ वो साँचो "ब्रह्म" है यूँ श्रीकृष्ण अर्जुण री वात में, श्रीमद् भगवान री भादी थकी उपनि-पद में ब्रह्मविद्या योगशास्त्र रो अर्जुन विषाद (दुःख) योग नाम रो पे'लो अध्याय (खंड) समाप्त (पूरो) ह्वियो ॥ १ ॥

1—वणी वगत पड्या शस्त्र लेणा चावे घणा वगत न्हाख दीधा ।

ॐ

द्वितीयोऽध्यायः ।

संजय उवाच ।

तं तथा कृपयाविष्टमश्रुपूर्णाकुलेक्षणम् ।
विषीदन्तमिदं वाक्यमुवाच मधुसूदनः ॥ १ ॥

ॐ दूजो अध्याय प्रारम्भ ।

संजय कही ।

आँसाँ माँय तळायाँ ने, हिया मायँ दया भरी ।
दुःख शूँ यूँ भरयो देख, कह्यो अर्जुण ने हरी ॥ १ ॥

ॐ दूजो अध्याय प्रारम्भ ।

संजय कियो के हे राजा, यूँ अरया वीर अर्जुण रो जीव दया शूँ परवशाऽपड्यो थको ने आंख्याँ दयावणी व्ही थकी ने वणा में पाणी भरायो थको ने दुःख शूँ अमूझनो थको देख ने भगवान् मधुसूदन अर्जुण शूँ यो वचन बोलया ॥ १ ॥

श्री भगवानुवाच ।

कुतस्त्वा कश्मलमिदं विषमे समुपस्थितम् ।
अनार्यजुष्टमस्वर्ग्यमकीर्तिकरमर्जुन ॥ २ ॥

श्री भगवान आज्ञा करी ।

नीचाँ रे जोग यो रोग, थने लागो कठे अठे ।
अणी शूँ स्वर्ग भी नी ने, अठे भी अपकीरति ॥ २ ॥

श्री भगवान आज्ञा कीधी के हे अर्जुण, अणी अवकीं वगत में या खोट थारा में कठीनुँ आयगी। अशी वार्ता तो नीच मनख कर्‍यां करे है। अणी शूँ अठे भी अपजश व्हे ने परलोक भी वगड़ जावे है ॥ २ ॥

क्लैब्यं मा स्म गमः पार्थ नैतत्त्वय्युपपद्यते ।
क्षुद्रं हृदयदौर्बल्यं त्यक्त्वोत्तिष्ठ परन्तप ॥ ३ ॥

थने सोहे नहीं पार्थ, अवे यो हींजड़ा पणो ।
हियारी हीणता छोड़े, वैरी मारण ऊठजा ॥ ३ ॥

हे कुंतिपुत्र, अवे गतराड़ा पणो मती आदर; यो थने शोभा नी दे है। हे दुशमणाँ री छाती मे

चालवा वाला, मन री कायरता ही नीचता है ईने छोड़ ने मरवा मारवा ने त्यार व्हे जा ॥ ३ ॥

अर्जुन उवाच ।
कथं भीष्ममहं संख्ये द्रोणं च मधुसूदन ।
इषुभिः प्रतियोत्स्यामि पूजार्हावरिसूदन ॥ ४ ॥

अर्जुण कही ।
भीष्म शूँ रण में फेर, द्रोण शूँ मधुसूदन ।
चासरा शूँ तजे सेवा, शराँ शूँ कींत रे' लड़ूँ ॥ ५ ॥

अर्जुण कियो के हे मधुसूदन, अणी लड़ाई में भला म्हूँ भीष्म पितामह और द्रोण आचार्य शूँ तीरां शूँ कूँकर लड़ूँ । हे वैरियां ने नाश करवा-वाला भगवान, ईतो पूजनीक है ॥ ४ ॥

गुरूनहत्वाहि महानुभावान्
श्रेयो भोक्तुं भैक्ष्यमपीह लोके
हत्वार्थकामाँस्तु गुरूनिहैव
भुञ्जीय भोगान्रुधिरप्रदिग्धान् ॥ ५ ॥

मार्‌याँ बना माइत पूजनीक,
खाणी भली है पण माँग भीख ।

नी मार याँ ने धनलोभियाँ ने,
ई राज रा भोग सुहाय म्हाने ॥ ५ ॥

अणा पूजनीक धर्मात्मा ने नी मारणा पड़े ने अठे घर घर भीख मांग ने पेट भरणो पड़े तो या आछी हीज वात है; पण लोभी लालची भी अणा वड़ाने मार ने सुख भोगवाने तो जाणे वणा रो लोहो पीवा बरोबर म्हूँ गण्यूँ हूँ ॥ ५ ॥

न चैतद्विद्मः कतरन्नो गरीयो यद्वा जयेम यदि वा नो जयेयुः ।
यानेव हत्वा न जिजीविषामस्तेऽवस्थिताः प्रमुखेधार्तराष्ट्राः ॥६॥

सूझे न ईं माँय भली कई है, के हार के जीत सही नहीं है ।
यां जीतणो हार हजार हीयो, नी मार यॉ ने पण जोग जीणो ६

हाल तो आपां ने याही सुध नी है के आँपाँ ने ई मारे जो आछो के आँपाँ अणाँ ने माराँ ज्यो आछो भला जणाँने मारने आपाँ ने जीवणो ही नी चावे वी हीज ई घृतराष्ट्र रा बेटा शामा आय ने ऊभा है ॥ ६ ॥

कार्पण्यदोषोपहतस्वभावः पृच्छामि त्वा धर्मसमूढचेताः ।
यच्छ्रेयः स्यान्निश्चितं ब्रूहि तन्मे शिष्यस्तेऽहं शाधि मां त्वां प्रपन्नम् ॥७॥

प्रभाव भूल्यो अब म्हूँ असूझ, म्हारो म्हने धर्म पड़े न सूझ।
म्हने कहो आप सही विचार, चेलो गणे ने शरणे निहार ॥७॥

म्हारो मन दब गियो है जणी शूँ अबे म्हारो शूरापणा रो सुभाव तो मर गियो है। म्हने अबे कई करणो चावे या नी सूझे है शो आप ने म्हूँ पूछूँ हूँ के जी में म्हारो भलो व्हे वो विचारने म्हने आप हुकम करो। म्हूँ आपरे हुकम में रे'वा वालो हूँ, आपरे आधीन हूँ, म्हने आप नेले लगावो (घालो) ॥ ७ ॥

नहि प्रपश्यामि ममापनुद्याद्यच्छोकमुच्छोषणमिन्द्रियाणाम् ।
अवाप्य भूमावसपत्नमृद्धं राज्यं सुराणामपि चाधिपत्यम् ॥ ८ ॥

शरीर रो शोषक शोक जाय, म्हने न वो सूझ पड़े उपाय।
जो राज पाऊँ शघली धरा रो, भावे वणूँ मालक देवतां रो ॥८॥

हे भगवान, म्हारा शरीर ने ने मनने छीजावा वालो यो शोच मट जावे अश्यो उपाय म्हने तो नी लाधे है। भलेई हर्‍यो भर्‍यो अणी आखी धरती रो राज पावूँ ने देवताँ रो पण राज धना खटकारो मल जावे तो पण या छीजण तो मटती नी दीखे है ॥ ८ ॥

संजय उवाच ।

एवमुक्त्वा हृषीकेशं गुडाकेशः परंतप ।
न योत्स्य इति गोविन्दमुक्त्वा तूष्णीं बभूव ह ॥ ९ ॥

संजय कही ।

यूँ कहे कृष्ण ने वीर, रण में पाण्डुपुत्र वो ।
म्हूँ कधी भी लडूँगा नी, छानो यूँ बोल ने रियो ॥ ९ ॥

संजय कियो के हे राजा, भगवान ने अर्जुण यूँ के'ने फेर कियो के हे गोविन्द, म्हूँ तो नी लडूँगा । यूँ के'ने पछे वो छानो रे'गियो ॥ ९ ॥

तमुवाच हृषीकेशः प्रहसन्निव भारत ।
सेनयोरुभयोर्मध्ये विषीदन्तमिदं वचः ॥१०॥

घबराता थका वींने, हँसाता होय ज्यूँ हरी ।
दोही फौजाँ वचे वाक्य, यूँ कह्यो मधुसूदन ॥ १० ॥

हे राजा, वणीरी वाताँ पे हँसता व्हे ज्यूँ भगवान दोही फौजाँरे वचे घबराता थका वींने यो वचन हुकम कीधो ॥ १० ॥

श्री भगवानुवाच ।

अशोच्यानन्वशोचस्त्वं प्रज्ञावादांश्च भाषसे ।
गतासूनगतासूंश्च नानुशोचन्ति पंडिताः ॥११॥

श्री भगवान कही ।

थूँ अजोग करे शोच, वाताँ बोले बड़ी बड़ी ।
जीवे ज्याँ रो मरे ज्याँ रो, शमझ्या शोच नी करे ॥ ११ ॥

श्री भगवान् आज्ञा कीधी के हे अर्जुण, जणा रो शोक नी करणो चावे वणा रो हीज थूँ शोक करे है ने वातां जो जाणे शमझणा मनखां जशी डावी डावी मठावण कर रियो है पण शमझणा व्हे जो तो नाक में पवन आवे वा नी आवे ईंरो शोक नी करे है ॥ ११ ॥

न त्वेवाहं जातु नासं न त्वं नेमे जनाधिपाः ।
न चैव न भविष्यामः सर्वे वयमतः परम् ॥१२॥

म्हूँ थूँ ने ई सँवी राजा, जणा रो शोच है थने ।
पेली भी हा अबे भी हाँ, रहाँगा फेर भी सबी ॥ १२ ॥

अशी वात तो आगे ही कधी ही व्ही ही नी ही के म्हूँ नी रियो व्हूँ वा थूँ नी रियो व्हे वा ई

राजा नी रिया व्हे ने नी जो फेर अबे भी अशी
कदी व्हेणी है के आपाँ सब नी रे'वांगा ॥ १२ ॥

देहिनोऽस्मिन्यथादेहे कौमारं यौवन जरा ।
तथा देहान्तर प्राप्तिर्धीरस्तत्र न मुह्यति ॥१३॥

देह में जीवरे ज्यूँ है, बाल जोवन ने जरा ।
दूसरी देह भी यूँ है, ई में धीर डरे ॥ १३ ॥

ज्यूँ बालक पणो मट ने म्होटो
जणी वगत कोई भी नी मरे ने
ने बुढापो आवे जणी वगत
यूँ ही बुढ़ापो मट ने दूसरी देह
भी कोई मरे नी है । समझणा
हेर फेर में घबरावा ज्यूँ कई नी

मात्रास्पर्शास्तु कौंतेय ...

इन्द्रियाँ ओळखे वाँरा, ठंडा ऊना
आवे जावे न ठे'रे ई, अणाने

हे अर्जुण, ठंडो, ऊनो,

थूँ खम ले क्यूँ के ई थारा नी है। ई तो इन्द्रियां रा है जो शूँ आवे ने परा जावे है। थारा व्हेता तो मटता ही नी ॥ १४ ॥

यं हि न व्यथयन्त्येते पुरुषं पुरुषर्षभ ।
समदुःखसुखं धीरं सोऽमृतत्वाय कल्पते ॥१५॥

जीं ने ई नी डगावे ज्यो, समान सुख दुःख में।
धीरो पुरुष वो हीज, मोक्ष रो लाभ ले शके ॥ १५ ॥

हे पुरुषाँ में उत्तम, जणी पुरुष ने ई दुःख नी देवे है वो ही सुख-दुःख में एक रस रे'वा वालो धीर पुरुष अमर व्हे शके है ॥ १५ ॥

नासतो विद्यते भावो नाभावो विद्यते सतः ।
उभयोरपि दृष्टोऽन्तस्त्वनयोस्तत्त्वदर्शिभिः ॥१६॥

झूँठ रो होवणो नी ने, साँच रो मटणो नहीं ।
अणा रो नरणो कीधो, दोयाँ रो ब्रह्मज्ञानियाँ ॥ १६ ॥

अमर व्हे ज्यो मरे नी है ने मरे ज्यो अमर नी है, अणा दोही वाताँ ने ज्ञानवानाँ देख ने नक्को कर लीधी है ॥ १६ ॥

१—प्रतीक्षस्व ।

अविनाशि तु तद्विद्धि येन सर्वमिदं ततम् ।
विनाशमव्ययस्यास्य न कश्चित्कर्तुमर्हति ॥१७॥

जो सबी जग में व्याप्यो, जाण वो हीज नी मरे ।
अणी अखूट रो नाश, कणी शूँ भी न व्हे शके ॥१७॥

ज्यो अणाँ सबाँ में एक शरीखो छाय रियो है अणो ने हीज थूँ अमर जाण । अणी अविनाशी रो नाश कोई भी नी कर शके है ॥ १७ ॥

अन्तवन्त इमे देहा नित्यस्योक्ताः शरीरिणः ।
अनाशिनोऽप्रमेयस्य तस्माद्युध्यस्व भारत ॥१८॥

देह ई मटवा वाळा, देहवाळो मटे नहीं ।
अविनाशी अनोखा ने, जाण ने जुद्ध थूँ कर॥ १८ ॥

. अश्या अविनाशी, सदा अमर, नो दीखवा वाळा ने देखवा वाळा रा दीखवा वाळा ई शरीर नाशमान है, यूँ जाण ने हे भारत अर्जुण, थूँ युद्ध कर क्यूँ के ई तो नाशमान है ॥ १८ ॥

य एनं वेत्ति हन्तारं यश्चैनं मन्यते हतम् ।
उभौ तौ न विजानीतो नायं हन्ति न हन्यते ॥१९॥

ज्यो ई ने मरतो जाणे, ज्यो जाणे मारतो थको ।
दोही जणा ई नी जाणे, नी यो मारे मरे न यो ॥१६॥

जो•अणी देखवा वाला ने मारवा वालो जाणे अथवा ज्यो ई ने मारवा वालो शमझे तो ई दोई नी शमझे, क्यूँ के यो तो नी तो मारे ने नी यो मरे है ॥ १६ ॥

न जायते म्रियते वा कदाचिन्नायं भूत्वा भविता वा नभूयः ।
अजो नित्यः शाश्वतोऽयं पुराणो न हन्यते हन्यमाने शरीरे ॥२०॥

नी जन्म लेवे न मरे कधी यो, वणे नहीं तो वगड़े कधी यो।
सदा अनाशी अज एक भाँत, मारयाँ मरे यो नहि देह साथ।२०

यो कदी भी जन्म नी लेवे ने नी यो कदी मरे है। यो फेर जन्म लेगा जदी हीज हेगा या वात भी नी है, क्यूँ के यो तो वना जन्म रो सदा एक शरीखो ने अनादि है। शरीर रे मारया जावा शूँ यो नी मारयो जाय है ॥ २० ॥

वेदाविनाशिनं नित्यं य एनमजमव्ययम् ।
कथं स पुरुषः पार्थ कं घातयति हन्ति कम् ॥२१॥

जाणे जो नित्य यूँ ई ने, अनाशी अज एक शो ।
मरावे नर कींने वो, मारे कूँकर कूँण ने ॥२१॥

हे पार्थ, अर्जुण, ज्यो अणी ने वना जन्म रो, अविनाशी, एक शरीखो, सदा रे'वावालो जाणे है वो पुरुष भलां कीं ने ही कूँकर, मरावे ने कूँकर कींने ही मार शके॥ २१ ॥

वासांसि जीर्णानि यथा विहाय नवानि गृह्णाति नरोऽपराणि ।
तथा शरीराणि विहाय जीर्णान्यन्यानि संयाति नवानि देही ॥२२॥

ज्यूँ फेंक फाटा कपड़ा पुराणा, पे'रे नवा ज्यूँ नर फे'र नाना ।
त्यूँ जीव भी जीरण ने उतारे, दूजा नवा देह अनेक धारे ॥२२

ज्यूँ मनख जूना गाभा न्हाख देवे ने दूसरा नवा ले लेवे है, यूँ ही यो देह वालो जूना शरीराँ ने छोड़ ने दूसरा नवा शरीर ने पाय लेवे है ॥२२॥

नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि नैनं दहति पावकः ।
न चैनं क्लेदयन्त्यापो न शोषयति मारुतः ॥२३॥

ईने शस्त्र नहीं काटे, वाशदी वाळ नी शके ।
पाणी गाळे नहीं ई ने, शुकावे वायरो नहीं ॥ २३ ॥

अणी वास्ते ईं ने शस्त्र काट नी शके। नी जो ईं ने वायदी बाल शके। पांणी भी ईं ने नो गाल शके और वायरो भी ईं ने शुकाय नी शके॥ २३ ॥

अच्छेद्योऽयमदाह्योऽयमक्लेद्योऽशोष्य एव च ।
नित्यः सर्वगत. स्थाणुरचलोऽय सनातनः ॥२४॥

फटे नी यो वळे नी यो, शूखे नी यो गळे नहीं ।
सबॉ में ही सदा ही यो, ठेठ को ठे'रियो थिर ॥२४॥

क्यूँ के यो कटे, शूके, बळे, गळे, जश्यो है ही नी। यो तो सदा ही रे'वा वाळो, सब जगा रे'वा वाळो, अचल, एक सरीखो, यूँ ठेठ शूँ है ॥ २४ ॥

अव्यक्तोऽयमचिन्त्योऽयमविकार्योऽयमुच्यते ।
तस्मादेव विदित्वैन नानुशोचितुमर्हसि ॥२५॥

यो दीखे नी निराकार, घनोखो अविकार है ।
अश्यो जाण अणी ने यूं, शोचणो जोग नी थने ॥२५॥

यो अविकारी वाजे है अणीज शूँ फूँकर भो

१—यो शरीर नी है ने शरीर में विकार व्हे है, अणी वास्ते ।,

यो मन शूँ वा इन्द्रियाँ शूँ दीख नी शके है अणी वास्ते अणीने यूँ शमझ ने थने शोक नी करणों चावे ॥ २५ ॥

अथ चैन नित्यजात नित्यं वा मन्यसे मृतम् ।
तथापि त्व महाबाहो नैन शोचितुमर्हसि ॥२६॥

जो ई ने मरतो माने, नक्की वा जन्मतो गणे ।
तो भी ई ने महाबाहू, शोचणो जोग नी थने ॥ २६ ॥

ने यूँ नी मानने ईं ने थूँ जन्मवा वालो होज मानतो व्हे वा मरवा वालो होज माने तो भी, हे महाभुजा वाला अर्जुण, थने यूँ शोच नी करणो चावे ॥ २६ ॥

जातस्य हि ध्रुवो मृत्युर्ध्रुवं जन्म मृतस्य च ।
तस्मादपरिहार्येऽर्थे न त्वं शोचितुमर्हसि ॥२७॥

जन्म्या की मौत है नक्की, मरया जन्मे जरूर ही ।
जणी पे जोर नी चाले, वणी रो शोच जोग नी ॥ २७ ॥

१—मन इन्द्रियाँ शूँ नी दीखे ने "यो" के'वाशूँ मन इन्द्रियाँ रे साथे ही बताय दीधो है। श्लोक २५ में सात्विकी बुद्धि कही श्लोक २६ २८ तक राजसी ने ३१ ३७ तक तामसी बुद्धि है।

क्यूँ के जन्मे ज्यो मर्यां बना नी रे'वे ने मरे ज्यो जन्म्यॉ बना नी रे'वे जदी अणव्हेतो वात रे वास्ते थने शोच नी करणो चावे ॥ २७ ॥

अव्यक्तादीनि भूतानि व्यक्तमध्यानि भारत ।
अव्यक्तनिधनान्येव तत्र का परिदेवना ॥ २८ ॥

पेलाँ ई दीखता नी हा, लाग्या ई दीखवा वचे ।
मर्याँ शूँ फे'र नीं दीखे, अणी में शोच ज्यूँ कई॥ २८ ॥

ई शरीर घणा समय शूँ नी दीखता हा । अबे थोड़ाक समय तक दीख फेर घणा समय तक नी दीखेगा । अश्या मरवा में शोच करवा जश्यो कई है । थोड़ा दनां री वात रो शोच कई ? ॥ २८ ॥

आश्चर्यवत्पश्यति कश्चिदेनमाश्चर्यवद्वदति तथैव चान्यः ।
आश्चर्यवच्चैनमन्य शृणोति श्रुत्वाप्येन वेद न चैव कश्चित्॥२६॥

आश्चर्य ज्यूँ कोइ लखे भ्रणी ने,आश्चर्य ज्यूँ कोइ कहे अणी ने।
आश्चर्य ज्यूँ कोइ शुणे अणी ने,शुणे न जाणे कतराक ईने॥२६॥

अणीने कोई के'वे के म्हूँ देखूँ हूँ तो या घड़ा अचंभारी वात है, यूँ ही कोई दूसरो के'के म्हूँ ईने

केवूँ हूँ तो या भी अचंभा जशोज यात है, ने कोई ईंने शुणे है या भी अचंभा यूँ होज है; क्यूँ के कोई भी ईं ने देख नी शके, शुण नी शके ने समझ भी नी शके है ॥ २६ ॥

देही नित्यमवध्योऽय देहे सर्वस्य भारत ।
तस्मात्सर्वाणि भूतानि न त्वं शोचितुमर्हसि ॥ ३० ॥

देहाँ माँय सबाँरे ही, देह वाळो मरे न यो ।
ईं शूँ यो सघळाँ रो ही, शोच है करणो वृथा ॥ ३० ॥

यो शरीर वाळो कणी भी शरीर में मार्‌यो नी जाय है, अणी वास्ते कीं रो भी थने शोच नो करणों चावे ॥ ३० ॥

स्वधर्मपि चावेद्य न विकम्पितुमर्हसि ।
धर्म्यादि युद्धाच्छ्रेयोऽन्यत्क्षत्रियस्य न विद्यते ॥ ३१ ॥

आपणो धर्म मी देख, डगणो जोग नी थने ।
क्षत्रियाँ रे भलो दूजो, धर्म जुद्ध समान नी ॥ ३१ ॥

फेर आपणो धर्म देखतां भी थने यूँ नी घबराव णो चावे, क्यूँ के रजपूत रे तो अशी धर्म री लड़ाई मल जाय अणी शिवाय और भलाई है ही नी॥३१॥

यदृच्छया चोपपन्नं स्वर्गद्वारमपावृतम् ।
सुखिनः क्षत्रियाः पार्थ लभन्ते युद्धमीदृशम् ॥३२॥

आपो आप मिल्यो आय, बारणो स्वर्ग रो खुल्यो ।
धन्य है पार्थ वी क्षत्री, ज्यॉं ने जोग मले अश्यो ॥ ३२ ॥

हे पार्थ, अर्जुण, स्वर्ग री पोल[1] आपो आप ही थने खुली थकी थारा पूर्व पुन्न शूँ मल गी है । अश्यो युद्ध रो मोको तो घणा आछा भाग्य व्हे वणा रजपूताँ ने कदीक मले है ॥ ३२ ॥

अथ चेत्त्वमिमं धर्म्यं संग्रामं न करिष्यसि ।
ततः स्वधर्मं कीर्तिं च हित्वा पापमवाप्स्यसि ॥ ३३ ॥

धर्मजुद्ध अबे भी जो, नी करेगा धनंजय ।
जश धर्म गमावेगा, पावेगा पाप ने पण ॥ ३३ ॥

अबे भी जो थूँ अश्या धर्मयुद्ध रा समय ने हात शूँ खोय देगा तो थारा स्वधर्म ने जश दोही जाता रे'वेगा[2] ने महा पापी व्हे जायगा ॥ ३३ ॥

१—के ज्या घणा तप योग करया शूँ कणीक रे खुले तो खुले ।
२—थारो नाम लेवा में भी रजपूताँ ने भदकाई आवेगा अर्थात् पाप लागेगा ।

अकीर्तिं चापि भूतानि कथयिष्यन्ति तेऽव्ययाम् ।
संभावितस्य चाकीर्तिर्मरणादतिरिच्यते ॥ ३४ ॥

बुरायाँ होयगा थारी, सदाही सबही जगाँ ।
प्राण हाण वचे वत्ती, मान हाण जहाण में ॥ ३४ ॥

ने मनख मूँडे २ थारी बुरायाँ करवा लाग जावेगा। यो कलंक थारो कदी भी नी छूटेगा। माजनो वाला रे तो अपजश व्हेणो मरवा वचे ही वत्तो है ॥ ३४ ॥

भयाद्रणादुपरतं मंस्यन्ते त्वां महारथाः ।
येषां च त्वं बहुमतोभूत्वा यास्यसि लाघवम् ॥ ३५ ॥

डरे ने रण छोड़यो यूँ, मानेगा ई महारथी ।
जी थने मानता म्होटा, गणेगा अदनो अबे ॥३५॥

ने ई म्होटा म्होटा शूरमा तो यूँ जाण लेगा के अर्जुण डर गियो जीशूँ[1] नी लड़े है। थारी बड़ायाँ करवा वाला ने भारी हलका पणों थारो दीखेगा ॥ ३५ ॥

---

[1]—थारी शूरता री धाजी भारता हा थी हीज थारी बुराई करेगा के करया नामर्दा री पक्ष लीधो जो आपाँने भी नीची नाड़ करणी पड़ी।

अवाच्यवादाँश्च बहून्वादिष्यन्ति तवाहिताः ।
निन्दन्तस्तव सामर्थ्यं ततो दुःखतरं नु किम् ॥ ३६ ॥

थोरे अजोग वाताँ भी, कहेगा शत्रु मोकली ।
निंदेगा बल थारा ने, दुःख नी दूसरो अश्यो ॥३६॥

ने थारा वेरी अजोग अजोग वातां थारी नरो तरे' तरे'री खोटी खोटी जोड़ देगा। यूँ वी थारा पें'ली रा कमाया थका यश पे भी पाणी फेर देगा ने थने नाजोगो गण लेवेगा अणीशिवाय और कई म्होटो दुःख व्हे शके है ॥ ३६ ॥

हतो वा प्राप्स्यसि स्वर्गं जित्वा वा भोक्ष्यसे महीम् ।
तस्मादुत्तिष्ठ कौन्तेय युद्धाय कृतनिश्चयः ॥ ३७ ॥

मरे तो स्वर्ग रा पावे, धरा रा सुख मारने ।
ठाण ने युद्ध री गाढ़ी, ऊठ गाण्डीव धार ने ॥३७॥

ने युद्ध में तो मरवा मारवा दो ही वातां में लाभ हीज है। मर जायगा तो स्वर्ग रा सुख पावेगा ने मारेगा तो अठारा सुख भोगेगा; जीशूँ

१—क्यूँ के वैरी तो गुण में ही दोष काढ़े ही है।

युद्ध री हीज नकी धार ने, हे कुन्ती कुँवर, ऊठो व्हे जा ॥ ३७ ॥

सुखदुःखे समे कृत्वा लाभालाभौ जयाजयौ ।
ततो युद्धाय युज्यस्व नैव पापमवाप्स्यसि ॥ ३८ ॥

सुख दुःख करे एक, हार जीत मिल्यो मिथ्यो ।
युद्ध में लाग जा फेर, पाप लागे थने न यूँ ॥ ३८ ॥

सुख दुःख हाण लाभ हार जीत सब ने बरोबर कर ने पछे लड़ाई में लाग जाव । यूँ करेगा तो थने कोई पाप नी लागेगा ॥ ३८ ॥

एषा तेऽभिहिता सांख्ये बुद्धिर्योगे त्विमां शृणु ।
बुद्ध्या युक्तो यया पार्थ कर्मबन्धं प्रहास्यसि ॥ ३६ ॥

ज्ञान री या कही बुद्धी, अबे या शुण योग री ।
ई कर्म योग शूँ सारा, काटेगा कर्म बन्ध थूँ ॥ ३६ ॥

हे अर्जुण या तो थने ज्ञानयोग री शमक

१—या साख्य में अर्थात् आत्म-ज्ञान री शमझ थने की है के आत्मा अमरयो है । अबे योग में सो या आगे केवूँ ज्या शमझ शुण । अणी में "तु" के'ने खास शमझ योग री हीज है, या शायत की भी ने या पण बताई के थने केवूँ जणी में योग हीज केवूँ हूँ । अणी

की'है ने कर्मयोग री शमझ तो या अबे थने केवूँ
हूँ ज्यो ध्यान दे ने शुण। अणी कर्मयोग री शमझ
में जो थारो ध्यान लाग गियो तो थूँ कर्म रा बंध
ने मटायँ देगा ॥ ३६ ॥

नेहाभिक्रमनाशोऽस्ति प्रत्यवायो न विद्यते ।
स्वल्पमप्यस्य धर्मस्य त्रायते महतो भयात् ॥ ४० ॥

शूनो आरंभ नी ईं रो, अणी में विघ्न भी नहीं।
थोड़ो भी यो सध्यो धर्म, भारो भय मिटाय दे ॥४०॥

या शमझ आयां केड़े मटे नी है, नो ज्यो

वास्ते भाखी गीता मे योग हीज है । जी शूँ ही जगाँ जगाँ
"योगशास्त्रे" यूँ अध्याय अध्याय री समाप्ति में आवे है । वो योग
और कई नी केवल अतरो ही ज है के 'साम्य में की' थकी है या
कणी तरे' शूँ नी मट शके' या वात शमझ में आय जाणी । जणी पे
ही कियो के—(१) शून्य रो भान मटणो ही साक्षात्कार है ।
(२) कर्गोट देशाचार शूँ विरुद्ध ने के' है, पण थणो शूँ कई
विरुद्ध है ।(३) महामारो चरित्र आपणो ही चरित्र है । (त्रिसूत्री में)
अणी वास्ते यूँ साम्य व्हे यूँ नी व्हे या हीज वात मन में
शूँ निकल जाणी चावे । ने नी व्हेवा री वात ही कई । ने है जीं रे
व्हेवा री वात ही कई । शिवाय शून्य रो भान या भय या अश्रद्धा रे
और कई व्हे शके है ।

१—मटे तो जदी के चगे (आवे) । आवणो औपचारिक है ।

अणी रे आवा में कोई विघ्न है, ने यो तो थोड़ो दीखे तो भी आपणो हीज सुभाविक धर्म (काम) है ने म्होटा दुःख शूँ बंचावा वालो है ॥ ४० ॥

व्यवसायात्मिका बुद्धिरेकेह कुरुनन्दन ।
बहुशाखा ह्यनन्ताश्च बुद्धयोऽव्यवसायिनाम् ॥ ४१ ॥

सही तो बुद्धि या हीज, योग री जाण अर्जुण ।
चंचलों री नरी बुद्धयाँ, शाखाँ डाळयाँ अनन्तरी॥४१॥

हे कुरुनन्दन, अर्जुण, नी मटे जशी तो या अठे कर्मयोग री हीज शूधी शमझ है, ने जणा ने या शमझ नी आई है वणा चंचलाँ रे तो अपार ऊँधी शमझाँ[२] है। फेर वणा री डालयाँ रो तो पार ही कई व्हे शके है ॥ ४१ ॥

यामिमां पुष्पितां वाचं प्रवदन्त्यविपश्चितः ।
वेदवादरताः पार्थ नान्यदस्तीति वादिनः ॥ ४२ ॥

१—क्यूँ के स्वतः सिद्ध है।
२—भणी पूँ हन्या ने पछे तो सोपान कंदुक (नाल री दड़ी) री नाँई ढाका री ढाकर पड़ा री दड़ी ज्यूँ पड़े है।

इन्द्र्यांरा स्वाद री वाणी, कहे मूढ सुहावणी ।
वेदाँ रा थंथ में राचे, माने वी तन्त ने नहीं ॥४२॥

हे पार्थ, अर्जुण, 'जी मूरख आशा शूँ भरी थकी अशी ऊँधी वातां करे है, वो वेदां री कोरी बकवाद में हीज लागा रे' है ने अणी शिवाय और है ही नी यूँ हीज वी के' वे है ॥ ४२ ॥

कामात्मानः स्वर्गपरा जन्मकर्मफलप्रदाम् ।
क्रियाविशेषबहुला भोगैश्वर्यगतिं प्रति ॥ ४३ ॥

कामी वी स्वर्ग ने शोधे, जणी शूँ जन्म कर्म हे ।
नरी'तरे'करे कर्म, बड़ाई भोग वासते ॥ ४३ ॥

वी आशा में रंगाया थका इन्द्रियां रा सुख ने चा,वा वाला अशीज वातां करे है के जणी में तरे' तरे' रा भोग वधे ने तरे' तरे' रा नरा ही काम करणा पड़े; ने वारंवार 'जन्म कर्म हीज़ अशी ऊँधी शमझ रो फल है ॥ ४३ ॥

भोगैश्वर्यप्रसक्तानां तयापहृतचेतसाम् ।
व्यवसायात्मिका बुद्धिः समाधौ न विधीयते ॥ ४४ ॥

बडाई भोग में लागा, कामना शूँ अचेत हे ।
समाधी में नहीं लागे, वणा री बुद्धि ठे'रने ॥४४॥

यूँ भोगां ने खूब वधावा में जणा रा मन छैंद- रिया है ने असी ऊँधी समझ शूँ हीज वणा रो हियो ठकाणे नी रियो है अश्या मनखाँ री समझ शांति में टक ने रेंवा रा काम री नी रेंवे है ॥ ४४ ॥

त्रैगुण्यविषया वेदा निस्त्रैगुण्यो भवार्जुन ।
निर्द्वन्द्वो नित्यसत्वस्थो निर्योगक्षेम आत्मवान् ॥ ४५ ॥

वेद तीन गुणाँ शूधी, थूँ हे तीन गुणाँ परे ।
त्याग आछो बुरो शान्त धीर निश्चिन्त हे सही ॥४५॥

हे अर्जुण, वेद भी तीन गुणां में हीज है। थूँ तो तीन ही गुणा शूँ न्यारो "है ज्यो" हेजा। जणी में दो (आछो, बुरो) नी है, जो सदा ही आपां में रेंवे है, जठे लेणो ने अवेरणों नी है, अश्यो आत्मावालो थूँ व्हे जा ॥ ४५ ॥

यावानर्थ उदपाने सर्वतः संप्लुतोदके ।
तावान्सर्वेषु वेदेषु ब्राह्मणस्य विजानतः ॥ ४६ ॥

कूवा रा जल में लाभ, वतरा श्रौर कर्म में ।
अखूट सागराँ में सो, ब्रह्म में ज्ञानवान ने ॥ ४६ ॥

अश्या ब्रह्म सरूपी शूधी समझ वाला रे' शेवा

(कम ऊँडा) ने ऊँडा कूड़ा में शूँ ज्यूँ तरपा मटाय लेवा रो होज मतलब है, यूँ वाँरे सब वेदां में शुँ अणी शुधी शमभ ने पाय जावा रो हीज मतलब है क्यूँके वो शमभणो है ॥ ४६ ॥

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन ।
मा कर्मफलहेतुर्भूर्मा ते संगोऽस्त्वकर्मणि ॥ ४७ ॥

कर्म रो अधिकारी थूँ, कर्म रा फल रो नहीं ।
छोड़ दे फल री इच्छा, छोड़ दे कर्म त्याग रो ॥४७॥

थूँ काम करवा वाळो व्हे शके है पण काम रा फल ने लेवा वाळो कदी भी नी व्हे शके है। जीशूँ यूँ काम रा फल ने चावणो थारो अनुचित है, ने काम छोड़वा रो विचार राखणो भी थने जोग नी है ॥ ४७ ॥

योगस्थः कुरु कर्माणि सङ्गं त्यक्त्वा धनंजय ।
सिद्धयसिद्धयोः समो भूत्वा समत्वं योग उच्यते ॥ ४८ ॥

योग में लाग ने कर्म, कर थूँ उळझ्याँ बना ।
सम आछी बुरी मान, समता योग एकही ॥ ४८ ॥

१—कामरो फल, ने लेवा वाळो प्रकृति शूँ भिन्न मानणो ही अविद्या है ।

जीं शूँ हे धनंजय, अर्जुण, अणो शमभ में होज रे' ने सब काम कर, ने काम में उलझणो जो ऊँवली शमझ है वीं ने छोड़ दे। वणे ने वगड़े जणी में समता रे'वे ज्ञी ने ही योग के'वे है जे ई रो ही नाम शँवली शमझ है ॥ ४८ ॥

दूरेण ह्यवरं कर्म बुद्धियोगाद्धनंजय ।
बुद्धौ शरणमन्विच्छ, कृपणाः फलहेतवः ॥ ४६ ॥

ई बुद्धियोग रे आगे, कर्म नीचो नरोइ है।
बुद्धि रो आशरो ले थूँ, कॉंगला कामना करे ॥४६॥

हे धनंजय, अर्जुण, अणी शमझ शूँ कर्म तो घणो छेटी नीचे रे' जावे है। अणी वास्ते थूँ अणीज शमझ रो आशरो ले; क्यूँके कामना करवा वाळा तो बापड़ा घड़ा दुःख में है ॥ ४६ ॥

बुद्धियुक्तो जहातीह उभे सुकृतदुष्कृते ।
तस्माद्योगाय युज्यस्व योगः कर्मसु कौशलम् ॥ ५० ॥

कर्म आछा बुरा छूटे, अठे ई बुद्धियोग शूँ।
हुँशयारी कर्म में सो ही, योग है लाग योग में॥५०॥

शँवळी शमझ वाळो अठे ही भला-बुरा शूँ

न्यारो व्हे जावे है, अणी वास्ते थूँ तो अणीज शमझ में मल जा, क्यूँके काम करती वगत अणी शमझ रो रे, णो ही योग वाजे है ने या होज चतुराई है ॥ ५० ॥

कर्मजं बुद्धियुक्ता हि फलं त्यक्त्वा मनीषिणः ।
जन्मबन्धविनिर्मुक्ताःपदं गच्छन्त्यनामयम् ॥ ५१ ॥

बुद्धिवाळो सदा ज्ञानी, कर्म रा फल छोड़ ने ।
जन्म रा बंध शूँ छूटे, पावे आनन्दधाम ने ॥५१॥

अशी शमझ वाला ही शमझणा है । जन्म रा फंदा सूँ छूटा थका वी काम रा फल सुख दुःख छोड़ने वना खटका री जगां ने पाय लेवे है ॥५१॥

यदा ते मोहकलिलं बुद्धिर्व्यतितरिष्यति ।
तदा गन्तासि निर्वेदं श्रोतव्यस्य च श्रुतस्य च ॥ ५२ ॥

बुद्धी निकळ जावेगा, जदी अज्ञान कीच शूँ ।
जाएया अजाएया सारां मे रहेगा रुच नी थनें ॥५२॥

जदी थारी समझ में शूँ मूरख पणो, ऊँधापणो निकळ जायगा (ऊँधा पणा री कळण में शूँ थारी समझ पारणे आय जायगा) जदी थने शुणी ने

शुणवा री सब वातां नी सुँवावेगा, क्यूँके ई तो मूर-खता में कल्‌या थका रे वास्ते है। निकल्‌या थका रे वास्ते नी है ॥ ५२ ॥

श्रुतिविप्रतिपन्ना ते यदा स्थास्यति निश्चला ।
समाधावचला बुद्धिस्तदा योगमवाप्स्यसि ॥ ५३ ॥

समाधी मायने बुद्धी, जदी या ठे'र ज ।
भटका खावणो छोड, वाजेगा थिर ॥५३॥

घणी वातां शुणवा सूँ थारी
या जदी अचल व्हे ने शांति में ठे
थूँ योग री शमझ(शॅवली शमझ)ने

अर्जुन उवाच ।

स्थितप्रज्ञस्य का भाषा सम
स्थितधीः किं प्रभाषेत किमासीत

अर्जुण कही ।

थिरबुद्ध समाधिस्थ, कहे की ने
बोले बैठे तथा चाले, थिर बुद्धि

अर्जुण कियो के, हे केशव
थकी शमझ वालो ने शांत

कूँकर ओलखाय अर्थात् वीं री कई परख है ? वो कूँकर बैठे ने वणी ठेंरी थकी शमझ वाला री चाल ढाल कणी तरें री व्हे है सो-आप म्हने ओलखाय देवो ॥ ५४ ॥

श्री भगवानुवाच ।

प्रजहाति यदा कामान्सर्वान्पार्थ मनोगतान् ।
आत्मन्येवात्मना तुष्टः स्थितप्रज्ञस्तदोच्यते ॥ ५५ ॥

श्री भगवान आज्ञा करी ।

छोड़ देवे जदी शारी, कामना मन मायली ।
आप शूँ आप में राजी, कहावे थिरबुद्धि वो ॥५५॥

जदी श्री भगवान आज्ञा करी के हे पार्थ अर्जुण, जदी सब कामना ने छोड़ देवे, और या शूधी ही बात है क्यूँके कामना तो मन में है ने मन री कामना मन में रे' जावा शूँ आपतो आपो आप सुखी रे; है यूँ' जदी वो स्थित प्रज्ञ (ठेरी थकी शमझ रो वाजे है ॥ ५५ ॥

दुःखेष्वनुद्विग्नमनाः सुखेषु विगतस्पृहः ।
वीतरागभयक्रोधः स्थितधीर्मुनिरुच्यते ॥ ५६ ॥

दुःख में घबरावे नी, सुख री चाह नी करे।
वना हेत भय क्रोध, वो मुनी थिर बुद्धि है ॥५६॥

अश्यो मनख दुःख में नी घबरावे क्यूँके सुख री चावना नी करे है। वीं रा तो प्रेम, भय ने क्रोध सारा ही न्यारा व्हे गिया है। अश्या विचार वालो हीज स्थितधीः (अडग समझ वालो) वाजे है॥५६॥

यः सर्वत्रानभिस्नेहस्तत्तत्प्राप्य शुभाशुभम्।
नाभिनन्दति न द्वेष्टि तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता॥ ५७ ॥

भली शूँ नी खुशी होवे, उदासी नी बुरी हुयाँ।
निंदे वंदे कणी ने नी, कहावे थिर बुद्धि वो ॥ ५७॥

वो आछो बुरो पावे जीं ने ही पायने वणी शूँ राजी वेराजी नी व्हे है। क्यूँके वणी रो कणी में ही मोह नी है अश्यी हीज समझ सदा थिर जाणणी ॥ ५७ ॥

यदा संहरते चायं कूर्मोऽङ्गानीव सर्वशः।
इन्द्रियाणीन्द्रियार्थेभ्यस्तस्यप्रज्ञाप्रतिष्ठिता ॥ ५८ ॥

इन्द्रियाँ रा सवादाँ शूँ, इंद्रयाँ ने यूँ समेट ले।
अंगाँ ने काछवो ज्यूँ ही, कहावे थिरबुद्धि वो ॥५८॥

ज्यूँ काछयो आपणा डीलने मुरजो व्हे जदी पाछो समेट लेवे ने कठी ने शूँ भी वारणे निकलतो नी राखे यूँ ही जदी सब इन्द्रियां वारणे शूँ मांयने समेट लेवे है अर्थात् वणा रा सवादां शूँ समेट लेवे जदी जाणणो के अणी री शमझ ठेर गी है ॥५८॥

विषया विनिवर्तन्ते निराहारस्य देहिनः ।
रसवर्जं रसोऽप्यस्य परं दृष्ट्वा निवर्तते ॥ ५९ ॥

भोगाँ ने छोड़वा पे भी, भोगाँ री वासना रहै ।
वासना नाश होवे वा, परब्रह्म मिले जदी ॥ ५९ ॥

सवाद तो इन्द्रियां ने रोक देवां शूँ भी छूट जावे है पण मांय ने सवादां री चावना रें जावे है। वा तो परमानन्द रूपी आत्मा ने पावा शूँ हीज छूटे है ॥ ५९ ॥

यततो ह्यपि कौन्तेय पुरुषस्य विपश्चितः ।
इन्द्रियाणि प्रमाथीनि हरन्ति प्रसभं मनः ॥ ६० ॥

इंद्रियाँ मतवाली ई, जोरी शूँ जाणकार रो ।
रोकताँ रोकताँ भी ले, मन ने खेंच अर्जुण ॥ ६० ॥

और वा इच्छा माय शूँ नी छूटे जतरे हे कुन्ती

रा कुँवर अर्जुण, घणो शमझणो व्हे ने वो यूँ चावे के अणा इन्द्रियां ने म्हूं रोक लूं तो भी ई जोरावर इन्द्रियाँ वणी शूँ नी रुक शके ने शवलाई वणी मनखं रा मन ने ले निकले क्यूँके ऐ घणी धाड़ेत है ॥ ६० ॥

तानि सर्वाणि संयम्य युक्त आसीत मत्परः ।
वशे हि यस्येंद्रियाणि तस्य प्रज्ञाप्रतिष्ठिता ॥ ६१ ॥

थिर व्हे ठे'रजा म्हाँ में, इंद्रियाँ ने समेट ने ।
इंद्रियाँ वश में जीं री, कहावे थिरबुद्धि वो ॥ ६१ ॥

अणी शूँ अणा इन्द्रियां ने समेट ने अणीज धुन में लागो थको ठे'रा जावे, वो ठे'रणो वीं रो म्हारे में व्हेणो चावे, यूँ जणी री इन्द्रियां वश में व्हे गी है वीं रीं हीज बुद्धि ठे'री थकी जाणणी॥६१॥

ध्यायतो विषयान्पुंसः सङ्गस्तेषूपजायते ।
सङ्गात्संजायते कामः कामात्क्रोधोऽभिजायते ॥ ६२ ॥

धावा शूँ विषयाँ ने ही, उलझे मन वीं' ज मे ।
वधे वणी शूँ इच्छा ने इच्छा शूँ क्रोध नीपजे ॥६२॥

ने जो यूँ म्हारे में नी ठे'रयो व्हे तो वणीरे

मांय ने इन्द्रियां रा सवाद आयां करे ने याद आवा शूँ पछे वणी रो शोख पैदा व्हे जाय ने पछे वणा ने भोगवा री इच्छा व्हे जावे ने पछे क्रोध व्हे जाय ॥[1] ६२ ॥

क्रोधाद्भवति संमोहः संमोहात्स्मृतिविभ्रमः ।
स्मृतिभ्रंशाद्बुद्धिनाशो बुद्धिनाशात्प्रणश्यति ॥६३॥

क्रोध शूँ भूलवा लागे भूल शूँ सुध वीशरे ।
पछे हे बुद्धि रो नाश जदी,नाश सबी व्हियो ॥६३॥

पछे वो वेंडा ज्यूँ व्हे जावे ने पछे ओशान (याद, भूल जावे ने पछे (वणी री ठे'राई थकी वात) आपो ही भूलाय जाय ने यूँ वो आप ही आप घाती व्हे जावे ॥ ६३ ॥

रागद्वेषवियुक्तैस्तु विषयानिन्द्रियैश्चरन् ।
आत्मवश्यैर्विधेयात्मा प्रसादमधिगच्छति ॥ ६४ ॥

खार हेत वना जो ई, इंद्रियाँ फरती फरे ।
आपो जो आप रे हाते, तो प्रसन्न रहे मन ॥६४॥

१—'निर्विचारवैशार द्येऽध्यात्मप्रसाद । योगसूत्र समाधि पाद सू ४७
६

ने ज्यो यूँ माँयने इन्द्रियां रा सवादां ने याद नी करे तो वीं रे कणी वात रो शोख भी नी व्हे ने शोख वना खार भी नी व्हे जणी शूँ वणी री इंन्द्रियाँ वणी रे अधीन व्हे ने वणी रे के'वा मुजब वणी रा काम करे अस्या री शमझ निर्मल व्हेवा लाग जावे है ॥ ६४ ॥

प्रसादे सर्वदुःखानां हानिरस्योप जायते ।
प्रसन्नचेतसो ह्याशु बुद्धिः पर्यवतिष्ठते ॥ ६५ ॥

प्रसन्न चित्त री बुद्धि, आप में थिर व्है रहे ।
शघळा दुःख रो नाश, वणी रो व्है वणी समे ॥ ६५ ॥

ने शमझ निर्मल व्हेवा शूँ सब दुःख मट जावे ने वणी निर्मल शमझ वाला री थिर शमझ व्हेतां देर नी लागे ॥ ६५ ॥

नास्ति बुद्धिरयुक्तस्य न चायुक्तस्य भावना ।
न चाभावयतः शान्तिरशान्तस्य कुतः सुखम् ॥ ६६ ॥

वना योग नहीं बुद्धी, वना योग न भावना ।
नी वना भावना शांती, वना शांति कठे सुख ॥६६॥

जों न जोगी है वणी रे या शमझ नी है ने वीं रे

या योग री भावना भी नी है। वना अणी भावना रे शांति कठा शूँ व्हे शके ने शांति रे वना और जगाँ सुख कठे है॥ ६६ ॥

इन्द्रियाणां हि चरतां यन्मनोऽनुविधीयते ।
तदस्य हरति प्रज्ञा वायुर्नावमिवाम्भसि ॥ ६७॥

जणी रो इंद्रियाँ लारे, मन यो दोड़तो फरे ।
उलटे वुद्धि यूँ वीं री, हवा शूँ नाव जीं तरे ॥६७॥

इन्द्रियाँ तो वणा रा कामां ने भोगे ही ज है पण अणा रे साथे जो मन भी लाग गियो तो अणी री शमझ डुल जावे है। ज्यूँ पाणी में चालतो चालतो डूँडो डूँज शूँ डुल जावे यूँ मन इन्द्रियाँ रे लारे लागो ने वुद्धि डुली॥ ६७ ॥

तस्माद्यस्य महाबाहो निगृहीतानि सर्वशः ।
इन्द्रियाणीन्द्रियार्थेभ्यस्तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता ॥ ६८ ॥

अणी शूँ जीं महा बाहु, रोकी है मन ही तरें ।
इंद्रियां विषयां में शूँ, कहावे थिर वुद्धि वो ॥ ६८॥

अणी वास्ते हे महाबाहु, अर्जुण, म्हारो के'णो

है के जणी इंद्रियां ने चोमेर[1] शूँ शोक ने वणा रा सवाद बिलकुल भूलाय दीधा है वणी री हीज समझ ने ठे'री थकी जाणणी ॥ ६८ ॥

या निशा सर्वभूताना तस्या जागर्ति संयमी ।
यस्यां जाग्रति भूतानि सा निशा पश्यतो मुनेः ॥ ६९ ॥

जीवाँ री ज्या कही रात, जोगी जागे वणीज में ।
जणी में जीव जागे ई, ज्ञानी रे रात है वठे ॥६९॥

वणी री शमझ ने ई दूसरा कोई नी जाण शके ने दूजाँ री शमझ ने वो नो जाणे[2] क्यूँ के सूता रा विचार जागतो नी जाणे ने जागता रा ने सूतो (सभावालो) नी जाणे यूँही शमझ ठे'री वणी रो ने चंचलाँ रो भेद है ॥ ६९ ॥

आपूर्यमाणमचलप्रतिष्ठं
समुद्रमापः प्रविशन्ति यद्वत् ।
तद्वत्कामायं प्रविशन्ति सर्वे
स शान्तिमाप्नोति न कामकामी ॥ ७० ॥

१—चौमेर शूँ केवा शूँ ज्ञान युक्त मन ने करणो सावत वे'है ।
२—जागणो सूवणों रात, रा नाम शूँ नियो है जागणो दन शमझणो ।

समुद्र में जाय शमाय पाणी,
वीं यूँ वणी रे नहि लाभ हाणी।
यूँ कामना सर्व शमाय जी में,
• है शान्ति वीं में नहिं चाह जीं में ॥ ७० ॥

ज्यूँ पूरा भरया थका समुद्र में पाणी भरावे तो भी वो समुद्र ओछो वत्तो नी व्हेवे यूँ ही सब कामना आवा थूँ ज्यो एक शरोखो रे'वे वोही शांति पावे है कामना वालो शांति नी पावे ॥ ७० ॥

विहायकामान्य. सर्वान्पुमाश्चराति नि.स्पृहः ।
निर्ममो निरहकार' स शातिमधिगच्छति ॥ ७१ ॥

ज्यो छोड कामना शारी, वना इच्छा सबी करे ।
म्हूं ने म्हारो करयो न्यारो, वो पावें सुख शांति नें॥७१॥

जो पुरुष सब कामना छोड़ ने वना कामना रे रे'वा वालो है जणी में म्हूँ ने म्हारो नी है वो हीज शांति रा सुख ने पावे है ॥ ७१ ॥

१—यूँ एक रस रे'वा वालो चेतन्य है कामना वालो चैतन्याभास है।

एषा ब्राह्मी स्थितिः पार्थ नैना प्राप्य विमुह्यति ।
स्थित्वास्यामन्तकालेऽपि ब्रह्म निर्वाणमृच्छति ॥ ७२ ॥

इति श्रीभगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्याया योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुन-
संवादे सांख्ययोगो नाम द्वितीयोऽध्याय ॥

ब्रह्म में थिरता या है, ईं पायाँ भ्रम नी रहे ।
अणी में ठे'र ने पावे, अन्तमें भी अनन्त ने ॥७२॥

ॐ तत्सत् इति श्री भगवद्गीता उपनिषद् में ब्रह्मविद्या योग शास्त्र में श्री कृष्णार्जुन-संवाद में सांख्य योग नाम दूजो अध्याय समाप्त व्हियो ।

हे पार्थ, अर्जुण, या थने ब्रह्म री थिरता की है। अणी ने पाय ने पछे कोई भी नी भटके है। और तो कई पण अंत री वेलाँ मे भी अणी में आय जावे तो भी अखड मोक्ष, जो ब्रह्म रो स्वरूप है वो मल जावे है ॥ ७२ ॥

ॐ वो साँचो "ब्रह्म" यूँ श्री कृष्ण अर्जुण री वात चीत में, श्री भगवान् री भाषो थकी उपनिषद् में ब्रह्मविद्या योगशास्त्र रो सांख्ययोग(तत्त्वयोग) नाम रो दूजो अध्याय समाप्तव्हियो ॥२॥

ॐ

तृतीयोऽध्यायः ।

अर्जुन उवाच ।

ज्यायसी चेत्कर्मणस्ते मता बुद्धिर्जनार्दन ।
तत्किं कर्मणि घोरे मां नियोजयसि केशव ॥ १ ॥

ॐ तीजो अध्याय प्रारम्भ ।

अर्जुण कही ।

आप री जाण में ज्ञान, कर्म शूँ ज्यो चड़ो जच्यो ।
घोर यो कर्म तो फे'र, क्यूँ कहो करवा म्हने ॥ १ ॥

ॐ तीजो अध्याय प्रारम्भ ।

अर्जुण कियो के, हे जनार्दन भगवान, आपरी राय में काम करवा चचे शमझ चत्ती है तो हे केशव, म्हने अणी हत्या रा घोर काम करवा री क्यूँ के'वो हो ॥ १ ॥

१—काम तो स्वतः हे रियो है, करे कूण है ने करे तो भाँजगड़ वणी री करवा वालो दूसरो कर्यो है । फल ने छोड़नें कर्म करणो चावे, अणी रो भी यो ही भाव है के वर्तमान ही कर्म है ने फल ही अवर्तमान है यो ही इच्छा छोड़णो है फल है हो नहीं कर्म हीज है ।

व्यामिश्रेणेव वाक्येन बुद्धिं मोहयसीव मे ।
तदेकं वद निश्चित्य येन श्रेयोऽहमाप्नुयाम् ॥ २ ॥

दो दो वाताँ कहो जाणे, बुद्धि में भे'म व्हे जशी ।
अणी शूँ एक नक्की को', जणी शूँ लाभ व्हे म्हनें ॥ २ ॥

जाणे अशी अणमेलू वात करने शामी म्हारी शमझ ने आप रावोला में पटक रिया व्हो ज्यूँ दीखे है। अणी वास्ते एक हीज वात जणी शूँ म्हारो भलो व्हे वा निश्चय करने म्हने हुकम करदो ॥२॥

श्रीभगवानुवाच ।

लोकेऽस्मिन्द्विविधा निष्ठा पुरा प्रोक्ता मयानघ ।
ज्ञानयोगेन साङ्ख्यानां कर्मयोगेन योगिनाम् ॥ ३ ॥

श्री भगवान आज्ञाकरी ।

पेली ही म्हें कह्या पंथ, दो तरे' शूँ अठेज ही ।
ज्ञान शूँ ज्ञान योग्याँ रो, कर्म शूँ कर्म योग रो ॥ ३ ॥

श्री भगवान आज्ञा कीधी, के हे अनघ, वना पाप रा अर्जुण, म्हें ठेट शूँ अठे दो तरे' री वातां

१—'ठेठ शूँ' रो भाव, स्वाभाविक जन्म रे साथे ही या वात है।
२—'अठे' के'वा शूँ, कर्मलोक में रो भाव है। अठे एक शूँ काम चाल ही नी शके, यो भाव।

हीज की' है। ज्ञानवानों रे वास्ते ज्ञान शूँ ने कर्म वानों रे वास्ते कर्म शूँ ठे'रवा री वात की है ॥ ३॥

न कर्मणामनारम्भान्नैष्कर्म्यं पुरुषोऽश्नुते ।
न च सन्यसनादेव सिद्धिं समधिगच्छति ॥ ४ ॥

कर्म कीधां वना कोई, कर्मा शूँ छूट नी शके ।
कोरा ही छोड वेठ्याँ शूँ, लाभ होवे कई नहीं ॥ ४ ॥

अणी शूँ एक हीज नी के'वाय शके के कर्म छोड दे या कर्म कर। कर्मा ने आरंभ ही नी करे ने निष्कर्म व्हे जावे या वात व्हे ही नी शके, क्यूँ के केवल छोड देणो हीज परम पद पाय लेवा रो उपाय नी है ॥ ४ ॥

न हि कश्चित्क्षणमपि जातु तिष्ठत्यकर्मकृत ।
कार्यते ह्यवशः कर्म सर्वं प्रकृतिजैर्गुणैः ॥ ५ ॥

कधी भी कोइ भी क्यूँभी, रहे कर्म वना नहीं ।
करावे कर्म जोरी शूँ, प्रकृती रा गुणान ही ॥ ५ ॥

१—ज्ञान शूँ रो [illegible], कर्म शूँ रा [illegible]
रो है पण है [illegible], [illegible], [illegible] है।

क्यूँ के कोई भी कदी भी एक जजम भर भी काम कीधा वना नी रे'वे है, क्यूँ के सब काम आपो आप गुणां रा सुभाव हीज करे है ॥ ५ ॥

कर्मेन्द्रियाणि संयम्य य आस्ते मनसा स्मरन् ।
इन्द्रियार्थान्विमूढात्मा मिथ्याचारः स उच्यते ॥ ६ ॥

देहने ठूँठ ज्यूँ राखे, मन जीं रो रुके नहीं ।
इन्द्रयाँरा स्वाद में दोड़े, बुगलाभक्त जाण वो ॥ ६ ॥

यूँ जदी सुभाव में होज करणो शमाय रियो है तो फेर हात पग आदि काम करवा वाली इन्द्रियाँ ने रोक ने मन माँय ने जो इन्द्रियाँ रा स्वादाँ ने लेने वैठ जावे वो मूढ़ पाखंडी वाजे है ॥ ६ ॥

यस्त्विन्द्रियाणि मनसा नियम्यारभतेऽर्जुन ।
कर्मेन्द्रियैः कर्मयोगमसक्तः स विशिष्यते ॥ ७ ॥

मन शूँ इंद्रियाँ रोके, आपणा कर्म ज्यो करे ।
उलझे नी वर्णा में ज्यो, सो सदा ही विशेप है ॥ ७ ॥

ने, जो मन माँयनूँ हीज स्वादाँ ने छोड़ ने पछे काम काज करे है, हे अर्जुण, वो कमेयोगी है, वो

नी डलभ्यो थको है, वणी री इन्द्रियां आधीन है ने वो हीज वडो है ॥ ७ ॥

नियत कुरु कर्म त्वं कर्म ज्यायो ह्यकर्मणः ।
शरीरयात्रापि च ते न प्रसिद्ध्येदकर्मणः ॥ ८ ॥

नी कर्‌यॉ शूँ कर्‌यो आछो, कर थूँ कर्म आपणा ।
कर्म कीधॉ वना पार्थ, देह भी ठे'र नी शके ॥ ८ ॥

कर्म करणो तो अनादि शूँ सायत हेरियो है, और यूँ नी करवा शूँ करवो हीज आछो है । यूँ नी करवा शूँ तो शरीर रो भी निरभाव नी हेगा जदी और तो कई व्हे शके ॥ ८ ॥

यज्ञार्थात्कर्मणोऽन्यत्र लोकोऽयं कर्मबन्धनः ।
तदर्थं कर्म कौन्तेय मुक्तसङ्गः समाचर ॥ ९ ॥

दूजा कर्म सबी बॉधे, यज्ञ रा कर्म रे वना ।
यज्ञ रे वासते कर्म, कर थूँ उज्झयावना ॥ ९ ॥

साधन[1] रा काम रे शिवाय यो आखो ही जगत कामॉ रो फंदो हीज है, बॉधवा वालो हीज है ।

१—यज्ञ साधन रा काम रो नाम है, धर्म रा विवाहादि भी कुल साधन

अणी वास्ते साधना रा कर्मां ने वना उलझयाँ करणा चावे ईंशूँ हे कुन्ती रा कुँवर, अर्जुन, थूँ भी यूँ हीज कर ॥ ९ ॥

सहयज्ञाः प्रजाः सृष्ट्वा पुरोवाच प्रजापतिः ।
अनेन प्रसविष्यध्वमेष वोऽस्त्विष्टकामधुक् ॥ १० ॥

सबाँ ने यज्ञ रे साथे, विधाता कर यूँ कह्यो ।
यज्ञ शूँ वधज्यो थाणे, यज्ञ ही कामधेनु है ॥ १० ॥

आगे शूँ ही सबाँ ने साधन सेती वणाय ने ब्रह्मा जी कियो के अणी साधन शूँ थाँणी थें हीज वधती करो और यो साधन हीज थाँने मनशा मुज व सुख देवा वालो है ॥ १० ॥

देवान्भावयतानेन ते देवा भावयन्तु वः ।
परस्परं भावयन्तः श्रेयः परमवाप्स्यथ ॥ ११ ॥

रिझावो यज्ञ शूँ[1] देव, देव थाँने करे सुखी ।
माहोंमाँयं करो राजी, पावोगा लाभ यूँ घणो ॥११॥

समझ ने करे तो साधन ही है जदी सब ही कर्म यज्ञ साधन हीज है, नजर रो फेर है ।

१—साधन रा त्याग ने करे तो वी कर्म नी बाँधे ज्यूँ गर्ज़ ने फर्ज़ ।

अणीज शूँ थें देवता ने राजी करो, यूँ आपश में एक दूसरा ने राजी राखवा शूँ थें घणी सुख पावोगा ॥ ११ ॥

इष्टान्भोगान्हि वो देवा दास्यन्ते यज्ञभाविताः ।
तैर्दत्तानप्रदायैभ्यो यो भुङ्क्ते स्तेन एव सः ॥ १२ ॥

देवेगा देवता थानें, भाग व्हे यज्ञ शूँ खुशी ।
देवे वॉ ने वना दीधॉ, खावे ज्यो चोर है सही ॥१२॥

देवता तो थांने यज्ञ रा साधन शूँ राजी कीधा थका मन मुजब सुख देवेगा हीज, वणा रा दीधा थका हीज सुखॉ में शूँ वणा देवतां ने वना दीधां जो खाय जावे तो वो चोर हीज है ॥ १२ ॥

यज्ञशिष्टाशिन सन्तो मुच्यन्ते सर्वकिल्विषै ।
भुञ्जते ते त्वघ पापा ये पचन्त्यात्मकारणात् ॥ १३ ॥

जी खावे यज्ञ गे बंच्यो, वी छूटे सब पाप शूँ ।
वी पापी पाप ने भोगे, रॉधे जी आप वासतें ॥ १३ ॥

यूँ जी साधन रा कर्म करता थका हीज वणीज साधन रे साथे आपणो खावा पीवा रो वे'वार करता रे'वे वी तो जाणे अमृत हीज खाय पीय रिया

है, क्यूँ के वी काम करता थकां भी सब पापां शूँ छूट रिया है; ने जी पापी साधन रे वास्ते तो नी करे ने आपणो पेट भरवा ने हीज रांधे, वी तो [1]पापां रो हीज भोग करे है ॥ १३ ॥

अन्नाद्भवन्ति भूतानि पर्जन्यादन्नसंभवः ।
यज्ञाद्भवति पर्जन्यो यज्ञः कर्मसमुद्भवः ॥ १४ ॥

अन्न शूँ उपजे शारा, वर्षा शूँ अन्न उपजे ।
यज्ञ शूँ उपजे वर्षा, कर्म शूँ यज्ञ नीपजे ॥ १४ ॥

अन्न शूँ हीज सब जनमे है। अन्न पाणी शूँ व्हे है। पाणी (वर्षा) साधन रा कर्म (पुन्न) शूँ व्हे है ॥ १४ ॥

कर्म ब्रह्मोद्भवं विधि ब्रह्माक्षरसमुद्भवम् ।
तस्मात्सर्वगतं ब्रह्म नित्यं यज्ञे प्रतिष्ठितम् ॥ १५ ॥

ब्रह्म शूँ कर्म होवे ने, ब्रह्म अक्षर शूँ व्हियो ।
सर्व व्यापक यूँ ब्रह्म, सदा ही यज्ञ में रहे ॥ १५ ॥

१—पापी यूँ, के करणो तो पडे ही जदी साधन री शमल ने क्यूँ नी करे (अनुसंधान मात्रेण योगोयं सिद्धिदायकः)

ने साधन कर्म शूँ व्हे है,. ने कर्म वेद (शास्त्र) शूँ व्हे है, ने वेद प्रकृति रूपी अक्षर ब्रह्म शूँ व्हे है, अणी वास्ते सर्व व्यापक अक्षर ब्रह्म साधन में हीज रेवे है ॥ १५ ॥

एवं प्रवर्तितं चक्रं नानुवर्तयतीह यः ।
अघायुरीन्द्रियारामो, मोघं पार्थ स जीवति ॥१६ ॥

चक्र यूँ फरतो आयो, जो नी चाले अणी परे ।
इन्द्रयाँ में जो रमे पापी, वणा रो जीवणो वृथा ॥ १६ ॥

अणी चाल शूँ अनादि चालता थका संसार चक्र रे साथे जो नी चाले वणी रो जन्म मरण पाप संचय करवा ने हीज व्हे है; क्यूँ के वो इन्द्रियां[२] रा सुखां ने हीज सुख शमझे है और अश्या रो जीवणो ही मरवा बरोबर है ॥ १६ ॥

यस्त्वात्मरतिरेवस्यादात्मतृप्तश्च मानवः ।
आत्मन्येव च सन्तुष्टस्तस्य कार्यं न विद्यते ॥ १७ ॥

२—संसार में साधन री अनुसन्धान डोंगा तरवा ज्यूँ है। डाघो तर नदी रे पार नी उधाय क्यूँ के वीं रो जोर घणो है।

आप ही में रहे राजी, आप ही मे खुशी करे ।
आपं शूँ और नी चावे, वणा रे सब ही व्हियो ॥ १७ ॥

ने जो मनख आप में हो प्रेमी ने आप में ही सुखी है ने आपां में हीज जीं रे संतोष है वणी रे कई भी करणो बाकी नी रियो ॥ १७ ॥

नैव तस्य कृतेनार्थो नाकृतेनेह कश्चन ।
न चास्य सर्वभूतेषु कश्चिदर्थव्यपाश्रयः ॥ १८ ॥

कर्‍याँ भी लाभ नी वीं रे, छोड्याँ भी लाभ नी कई ।
आपणा लाभ रे तावे, वीं रे कीं री जरूर नी ॥ १८ ॥

अश्या रे करवा शूँ भी कई फायदो नी, ने नी जो नी करवा शूँ कोई लाभ है। अश्या रे कणी शूँ भी कई भी नी चावे है ॥ १८ ॥

तस्मादसक्तः सततं कार्यं कर्म समाचर ।
असक्तो ह्याचरन् कर्म परमाप्नोति पूरुषः ॥ १९ ॥

अनासक्त मणी शूँ व्हे, आपणा कर्म यूँ कर ।
ई तरे' शूँ करे सो ही, पावे परम धाम ने ॥ १९ ॥

अणी वास्ते म्हूँ के'वूँ हूँ के पल भर री भी नेरपाई राख्या बना जो करवा रा काम है अणा ने

बरोबर सदा ही ठीकतरे शूँ कार्यां जा, पण अणां में उलझणो नी है या बात भूले मती, ने जो या बात बना भूल्यां काम करे है वो ऊलो आड़ो नी ठे'रे; वो'तो परमात्मा ने हीज पाय लेवे है। क्यूँ के वणी शिवाय और ठकाणो ही वीं रे नी है॥१६॥

कर्मणैव हि संसिद्धिमास्थिता जनकादयः ।
लोकसंग्रहमेवापि सम्पश्यन् कर्तुमर्हसि ॥ २० ॥

कर्म ही शूँ व्हिया सिद्ध, राजा जनक आद ले ।
लोगाँ रे लाभ तवे भी, करणो चाहिजे थने ॥ २० ॥

यूँ ही जाण ने पेल्यां भी जनक राजा आदि काम करता करता ही म्हने पाय गिया हा, ने अणी में एक यो भी लाभ है के गेलो नी बगडे है यूँ जाण ने काम करता रे'णो ॥ २० ॥

यद्यदाचरति श्रेष्ठस्तत्तदेवेतरोजनः ।
स यत्प्रमाणं कुरुते लोकस्तदनुवर्तते ॥ २१ ॥

ज्यो ज्यो बडा करे कर्म, देखा देखी सबी करे ।
छोटा भी आचरे वाताँ, बडा री आदरी थकी ॥ २१ ॥

क्यूँ के मनख सारा ही शमझणा नी व्हे है।

और तो बड़ा रे देखादेखो ज काम करे है। अश्या मनख तो बड़ा-शमझणा री शमझने नी देख शके। वी तो वो करे जणीज वात ने सही मान वणीज माफक करवा लाग जावे है ॥ २१ ॥

न मे पार्थास्ति कर्तव्यं त्रिषु लोकेषु किंचन ।
नानवाप्तमवाप्तव्यं वर्त एव च कर्मणि ॥ २२ ॥

तीन ही लोक में म्हारे, कई भी करणो नहीं ।
कई भी दूर नी ह्याँ शूँ, तो भी कर्म करूँ सदा ॥ २२ ॥

अणी ज वास्ते म्हूँ भी देख काम हीज करूँ हूँ। दू ज्यूँ हे पार्थ, म्हारे कई करणो बाकी है ज्यो म्हूँ करूँ ने कश्यो सुख म्हारे नी है जणी वास्ते म्हूँ काम करूँ ॥ २२ ॥

यदि ह्यहं न वर्तेयं जातु कर्मण्यतन्द्रितः ।
मम वर्त्मानुवर्तन्ते मनुष्याः पार्थ सर्वशः ॥ २३ ॥

आळशी होय ने ज्यो म्हूँ, धर्म कर्म परा तजूँ ।
देखा देखी सबी म्हारे, छोड़ देवे सुकर्म ने ॥ २४ ॥

म्हूँ ज्यो अणा कर्मां ने यूँ करणो छोड़ ने आलश कर लेवूँ तो हे पार्थ, अर्जुण, काले शारा

ही मनख आलशी व्हे ने जरूर काम करणो छोड़ बैठे ॥ २३ ॥

उत्सीदेयुरिमे लोका न कुर्यां कर्म चेदहम् ।
सकरस्य च कर्ता स्यामुपहन्यामिमा· प्रजाः ॥ २४ ॥

सबाँ रो नाश कर्ता म्हूँ, जो तजूँ कर्म तो वणू ।
वर्णसंकर व्हे जावे वे'जावे पाप में सबी ॥ २४ ॥

म्हूँ ईश्वर रूप शूँ काम नी करूँ तो यो सब संसार ही नाश व्हे जावे, ने अवतार रूप शूँ काम नी करूँ तो गवोलो करवा वालो म्हूँ व्हे जावूँ, ने मनख रूप शूँ नी करूँ तो अणा जीव जंतु समेत, सब मनखां रो नाश करवा वालो म्हूँ व्हे जावूँ ॥ २४ ॥

सक्ता कर्मण्यविद्वांसो यथा कुर्वन्ति भारत ।
कुर्याद्विद्वाँस्तथासक्ताश्चिकीर्षुर्लोकसंग्रहम् ॥ २५ ॥

अज्ञानी ज्यूँ करे कर्म, फल में उलझ्या थका ।
लोगाँ रे वासते ज्ञानी, त्यूँ करे उलझ्या विना ॥ २५ ॥

१—ज्यूँ के मनख वना मे'नत रे'वा (आलश) रो पक्ष करे है ।

अणी वास्ते काम तो ज्ञानी अज्ञानी सबाँ ने ही करणो पड़े; हे अर्जुण, अज्ञानो उळझ्यो धको करे ने ज्ञानो उळझ्याँ वना करे, क्यूँ के वो अणी वात रो जाणकार है के उळझणो जणी में है वणी में शूँ वना उळझवा वालो तो न्यारो ही ज है। वणो रो काम तो लोगां ने शिखावा वास्ते व्हे है ॥ २५ ॥

न बुद्धिभेदं जनयेदज्ञानां कर्मसङ्गिनाम् ।
जोषयेत्सर्वकर्माणि विद्वान्युक्तः समाचरन् ॥ २६ ॥

भे'म व्हे ज्ञान हीणा ने, वात वा करणी नहीं ।
ज्ञानी ने चाहिजे कर्म, करणो ने करावणो ॥ २६ ॥

पण या वात कर ने वणा मूर्खाँ रे समझ में गबोलो कदी नी न्हाखणो क्यूँ के वी तो उळझ रिया है। पण अणी वात ने जाणवा वाला ने चावे के घणाँ नखा शूँ काम हीज हाँश शूँ करावे ने साथे साथे खुद भी करे। ईं शूँ वणो रे कई नुकशाण तो व्हे ही नी है क्यूँ के वो तो शुलझ्यो हीज है ॥ २६ ॥

प्रकृतेः क्रियमाणानि गुणैः कर्माणि सर्वशः।
अहङ्कारविमूढात्मा कर्ताहमिति मन्यते ॥ २७ ॥

प्रकृती ही करे कर्म, गुणाँ शूँ सब ही सदा ।
अहंकार विचे मूढ़, म्हूँ करूँ म्हूँ करूँ करे ॥ २७ ॥

काम तो सुभाविक ही गुणा शूँ चौमेर व्हे हीज है पण म्हूँ पणा में भूल अज्ञानो म्हूँ करूँ हूँ यूँ मान लेवे है । यूँ मानणो अज्ञान ही है ॥ २७ ॥

तत्त्ववित्तु महाबाहो गुणकर्मविभागयोः ।
गुणा गुणेषु वर्तन्त इति मत्वा न सज्जते ॥ २८ ॥

गुण ने कर्म रो भेद, जाण ले जो सही सही ।
गुणा में गुण वर्ते यूँ, जाण ने उळझे नहीं ॥ २८ ॥

परन्तु हे महाबाहु, अर्जुण, गुण ने वणा रा काम रा मरम ने जाणवा वाळो तो यूँ जाणे है के गुण हीज गुण में उलझे है। यूँ जाणे वो कूँकर कर्णा में ही उलझ शके ॥ २८ ॥

प्रकृतेर्गुणसंमूढाः सज्जन्ते गुणकर्मसु ।
तानकृत्स्नविदो मन्दान् कृत्स्नविन्नविचालयेत् ॥ २९ ॥

जाणे जो भेद नी ई रो आणे वी पाप आप में ।
कर्म शूँ मतहीणा ने डगावे ज्ञानवान नीं ॥ २९ ॥

परन्तु सुभाविक गुणां में जणा ने शमझ नी है अर्थात् गुण ने देख ने भी जो नो देखे है, वी अज्ञानी गुणाँ रा कर्मां में उलझ्या रे'है। अस्या सब नी जाणवा वालां[1] ने—कम शमझ रा[2] ने—सब जाणवा वाळो[3] नो डगावे तो ठीक ॥ २९ ॥

मयि सर्वाणि कर्माणि सन्यस्याध्यात्मचेतसा ।
निराशीर्निर्ममो भूत्वा युध्यस्व विगतज्वरः ॥ ३० ॥

ज्ञान शूँ शघळा कर्म, म्हारे मे मेल व्हे सुखी ।
आशा ने ममता छोड़, बाण जोड़ कबाण पे ॥ ३० ॥

ईं शूँ थूँ सब कामाँ ने शमझ शूँ म्हारे में मेल दे। ईं शूँ ममता, (इच्छा) बना रो व्हे ने बना संताप रे लड़ ॥ ३० ॥

ये मे मतमिदं नित्यमनुतिष्ठन्ति मानवाः ।
श्रद्धावन्तोऽनसूयन्तो मुच्यन्ते तेऽपिकर्मभिः ॥ ३१ ॥

१—सब नी जाणणो = प्राकृत अंश में कणी ने कणी में लागा रे'णो।
२—कम शमझ कर्म शूँ हीज शमझ बधावे। ज्ञान शूँ नी बधे।
३—सब जाणवा वाळो = प्रकृति रा धणी अंश में नी उलझ्या वाळो।

म्हारी ई राय पे चाले मन में मान मानव ।
अणी में दोष नी देवे वणी में कर्म नी रहे ॥ ३१ ॥

जो मनख अणी सदा री शमझ पे चाले—ने या म्हारी अचल शमझ है अणी में तो विश्वास री हीज जरूरत है दूज्यूँ करणो कई नी है, ने विश्वास भी अंध नी पण खार नी राख यथार्थ वात मानणो है—शो जी अणी पे. विश्वास राखे या खार नहीं राखे, दोवां में शूँ एक वात भी जणा में होवे वी भी कर्मा शूँ छूट जावे जदी दो ही होवे वणी री तो के'णो ही कई ॥ ३१ ॥

ये त्वेतदभ्यसूयन्तो नानुतिष्ठन्ति मे मतम् ।
सर्वज्ञानविमूढाँस्तान्विद्धि नष्टानचेतसः ॥ ३२ ॥

लगावे दोष ई में जो, हिया फूट न आचरे ।
ना'र भी श्यान नी वाँ में, शिवा'वीत्यो अश्या नर॥३२॥

हे अर्जुण, अतरो सही सदा शूधो व्हेवा पे भी जो अणी म्हारा मत शूँ खार राखे वो ही

१—स्वाभाविक है हीज जणी पे ।

अणी पे नी चाल शके है। वणां ने थूँ मूर्ख ने बिलकुल अणजाण, आंधा शमझ। वणा में चेतना है तो भी नी रे बराबर–व्हीं ही अण व्हीं–है॥३२॥

सदृशं चेष्टते स्वस्याः प्रकृतेर्ज्ञानवानपि ।
प्रकृतिं यान्ति भूतानि निग्रहः किं करिष्यति ॥ ३३॥

ज्ञानी भी आचरे कर्म, आप री प्रकृती जस्यो ।
वहे प्रकृति में शारा, कोई कीं शूँ रुके नहीं ॥ ३३ ॥

अणी बात रा जाणकार भी स्वभाव शिवाय तो नी कर शके क्यूँ के अणव्हेती कूँकर व्हे। जदी जठे सब ही स्वभाव रे साथे ही चाले है तो वठे रोकणो ने नी रोकणो यो कई करेगा। अर्थात् यो भी तो सुभाव हीज है॥ ३३ ॥

इन्द्रियस्येन्द्रियस्यार्थे रागद्वेषौ व्यवस्थितौ ।
तयोर्न वशमागच्छेत्तौह्यस्य परिपन्थिनौ ॥ ३४ ॥

इन्द्रयाँ ने धर्म याँ रा में, रहे आछो बुरो सदा ।
अणा रे वश नी व्हे णो, अणी रा शेण ई नहीं ॥३४॥

इन्द्रियां ने इन्द्रियां रा सवादा में, आछो ने खोटो, सुवावणो ने नी सुवावणो, रे'वे हीज है।

या सुभाविक ही वात है। अणा रे वश नी व्हेणो ही आपणो धर्म है ने ई दोई ही धर्म रा शत्रु है॥-४॥

श्रेयान्स्वधर्मो विगुणः परधर्मात्स्वनुष्ठितात् ।
स्वधर्मे निधनं श्रेयः परधर्मो भयावहः ॥ ३५ ॥

आपणो निर्गुणी धर्म, पराया सब शूँ शरे।
मन्याँ भी आपणो आछो, परायो तो भयङ्कर ॥ ३५ ॥

आपणा धर्म में गुण नी है ने थां में गुण है। गुणा री वड़ाई वचे निर्गुण ही आछो। आपणां आपणां धर्म—स्वभाव—में ही मरजाणो वा मल रे'णो हो आछो है, पण दूसरा रा धर्म में मलणो खोटो है—वणो भयंकर सब दुःख रो कारण है ॥ ३५ ॥

अर्जुन उवाच ।
अथ केन प्रयुक्तोऽयं पापं चरति पूरुषः ।
अनिच्छन्नपि वार्ष्णेय बलादिव नियोजितः ॥ ३६ ॥

अर्जुण कही।
जदी ई जीव ने कूण, धकेले पाप कर्म में।
चाह्या वना ही ज्यूँ कोई, जाणे जोरावरी करे॥ ३६ ॥

अर्जुण कियो के हे वार्ष्णेय, कृष्ण भगवान्, जदी आपणा आपणा हीज सुभाव—धर्म—में रे'णो उत्तम है ने सब रे'वे हीज है तो सुभाव—धर्म—रो अठी रो उठी कणी रा सुभाव शूँ व्हे है, क्यूँ के खोटाई तो सुभाव शूँ ही कोई नी चावे है जदी जाणे जोरावरी अणी में अणी ने कूण सुभाव छोड़वा ने लाचार करे है ॥ ३६ ॥

श्री भगवानुवाच ।

काम एष क्रोध एष रजोगुणसमुद्भवः ।
महाशनो महापाप्मा विद्ध्येनमिह वैरिणम् ॥ ३७ ॥

श्री भगवान् आज्ञा करी ।

काम यो क्रोध भी यो ही, यो रजोगुण शूँ हियो ।
महा भूखो महा पापी, ईं ने वैरी विचार थूँ ॥ ३७ ॥

श्री भगवान् हुकम कीधो के यो लाचार करणो ने व्हेणो भी सुभावां रो गुणाव हीज है। प्रकृति शूँ हीज है। यो रजोगुण शूँ जन्म्यो थको है। अणी रो नाम है कामना, ने यो ही क्रोध भी है। अर्थात् यो काम सब खोटायां री जड़ है और वधतो हो जावे है। यो हीज वैरी है ने म्होटो वैरी

सदा शत्रु, असी अणो काम रूपो अग्नि, ज्ञान ने ढाँक दीधो है। या पूरी नी व्हेवा वाळी ने बाळवा वाळी कामना री वासदी रजो गुण शूँ व्हो है ने सतोगुण शूँ व्हेवा वाळो ज्ञान री शांति नँ ढाँके है ॥ ३९ ॥

इन्द्रियाणि मनो बुद्धिरस्याधिष्ठानमुच्यते ।
एतैर्विमोहयत्येष ज्ञानमावृत्य देहिनम् ॥ ४० ॥

इन्द्रियाँ मन ने बुद्धी, ईं री ईं तीन ही जगाँ ।
ज्ञान ने ढाँक यो याँ शूँ, जीव नें भरमाय दे ॥ ४० ॥

या वासदी मन, इन्द्रियाँ औराँ बुद्धि में रे'वे है ने अणा इन्द्रियाँ मन बुद्धि शूँ हीज ज्ञान ने ढांक अणी जीव ने भरमाय देवे है ॥ ४० ॥

तस्मात्वमिन्द्रियाण्यादौ नियम्य भरतर्षभ ।
पाप्मानं प्रजहिह्येनं ज्ञानविज्ञाननाशनम् ॥ ४१ ॥

अणी शूँ इन्द्रियाँ पे'ली, जीतने वीर अर्जुण ।
ईं पापी ने परो मार, यो वैरी ज्ञान ध्यान रो ॥ ४१ ॥

अणी वास्ते हे भरतर्षभ, पे'लो मुकाम अणो रो इन्द्रियां है। थूँ अणा ने वश में कर ने अणी ज्ञान 'ने समझ ने ढांकवा वाळा पापी रो बिलकुल नाश कर न्हाख ॥ ४१ ॥

इन्द्रियाणि पराण्याहुरिन्द्रियेभ्यः परं मनः ।
मनसस्तु परा बुद्धिर्यो बुद्धेः परतस्तु सः ॥ ४२ ॥

इन्द्रियाँ ने परे जाण, इन्द्रियाँ शूँ परे, मन ।
मन शूँ पर बुद्धी ने, बुद्धी शूँ पर सो बुही ॥ ४२ ॥

अणी रा नाश री या शूधी तरकीब (रीत) है के-इन्द्रियां शूँ सब दीखे या सब ही प्रत्यक्ष के' रिया है और इन्द्रियां मन शूँ, ने मन बुद्धि शूँ ने बुद्धि जीं शूँ दीखे वो तो वो हीज है ॥ ४२ ॥

एवं बुद्धेः परं बुद्ध्वा संस्तभ्यात्मानमात्मना ।
जहि शत्रुं महाबाहो कामरूपं दुरासदम् ॥ ४३ ॥

ॐ तत्सत् इति श्री भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्म-
विद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे कर्म-
योगो नाम तृतीयोऽध्यायः ॥

यूँ बुद्धी शूँ परे जाण, आप शूँ आप रोक ने ।
मार न्हाख महा वैरी, कामरूपी बड़ो छली ॥ ४३ ॥

ॐ तत्सत् इति श्री भगवद्गीता उपनिषद् में, ब्रह्मविद्या
योगशास्त्र में, श्री कृष्णार्जुनसंवाद में, कर्मयोग
नाम तीजो अध्याय समाप्त व्हियो ।

हे महाबाहु अर्जुण, अणी काम रूपी दुशमण ने थूँ मार न्हाख । यो दूजयूँ तो से'ल में हाते आवे जस्यो नी है, पण यूँ बुद्धि ने देखवा वाला रो पतो लागो ने तो थूँ आपो आप सहज ही में थिर व्हे ने ईं ने जीत लेगा ॥ ४३ ॥

ॐ वो सांचो है यूँ श्री कृष्ण अर्जुण री वात में,
श्रीभगवान री भाषी थकी उपनिषद् में, ब्रह्म-
विद्या योग शास्त्र में, कर्मयोग नाम रो
तीजो अध्याय समाप्त व्हियो॥३॥

ॐ

चतुर्थोऽध्यायः ।

श्री भगवानुवाच ।

इमं विवस्वते योगं प्रोक्तवानहमव्ययम् ।
विवस्वान्मनवे प्राह मनुरिक्ष्वाकवेऽब्रवीत् ॥ १ ॥

ॐ चौथो अध्याय प्रारम्भ ।

श्री भगवान आज्ञा करी ।

यो अखंड कह्यो योग, पे'लॉ म्हें हीज सूर्य ने ।
शिखायो मनु ने सूर्य, मनु इक्ष्वाकु ने कह्यो ॥ १ ॥

श्री भगवान् आज्ञा कीधी के यो कदी'नी मटे जस्यो योग पे'लाँ म्हें विवस्वान् (सूर्य) ने कियो हो । वणा सूर्य मनु ने कियो ने मनु इक्ष्वाकु नाम रा राजा ने समझायो हो ॥ १ ॥

एवं परम्पराप्राप्तमिमं राजर्षयो विदुः ।
स कालेनेह महता योगो नष्टः परन्तप ॥ २ ॥

परम्परा शूँ यूँ पायो, राजाँ में ऋषि हा वणाँ ।
घणाँ दनाँ शूँ वो योग, लोप होय गयो अठे ॥ २ ॥

यूँ परम्परा शूँ राजां में ऋषि हा वी अणी ने शुणता शमझता आया हा पण हे परंतप अर्जुण, नराई समय शूँ अठे वो योग शूँ शमझणो ने शमझावणो मेट व्हे गियो ॥ २ ॥

सएवाय मया तेऽद्य योग' प्रोक्त' पुरातनः ।
भक्तोऽसि मे सखा चेति रहस्य ह्येतदुत्तमम् ॥ ३ ॥

जुगादी गुप्त वो होज, योग आज थनें कह्यो ।
भक्त थूँ मित्र भी जीं शूँ, छुपायो नहिं उत्तम ॥ ३ ॥

वो हीज यो ठेठ रो (सदीव रो) योग आज थने म्हें पाछो कियो है; क्यूँ के यो उत्तम ने रहस्य (छुप्यो थको) है । पण थूँ तो म्हारो भक्त है ने म्हारो मित्र है जीं शूँ के' दीधो है ॥ ३ ॥

अर्जुन उवाच ।
अपरं भवतो जन्म परं जन्म विवस्वतः ।
कथमेतद्विजानीयां त्वमादौ प्रोक्तवानिति ॥ ४ ॥

१—मित्र (सखा) के' वा शूँ यो अभिप्राय के म्हूँ थारा उत्तम सुभाव शूँ ठीक वाकब हूँ, जींशूँ कियो है ।

अर्जुण कही ।

सूर्य हा जनम्या पे'ली, आप हो जनम्या अबे ।
आप पे'ली कह्यो या म्हूं, कीं तरे'शमझूं कहो ॥ ४ ॥

अर्जुण अर्ज कीधी के विवस्वान् तो पे'ली हिया हा ने आप तो अबार हीज जन्म लीधो है, जदी म्हारे या कूंकर शमझ मे आवे के आप पे'ली या वात विवस्वान् ने शमझाई ही ॥ ४ ॥

श्री भगवानुवाच ।

बहूनि मे व्यतीतानि जन्मानि तव चार्जुन ।
तान्यहं वेद सर्वाणि न त्वं वेत्थ परन्तप ॥ ५ ॥

भगवान् आज्ञा करी ।

म्हारा ने जन्म थारा भी, नराई वीर वीतग्या ।
म्हने वी याद है शारा, थने वी याद नी रह्या ॥ ५ ॥

श्री भगवान् हुकम कीधो के, हे अर्जुण, म्हारा ने थारा भी नराई जन्म पे'ली व्हे गिया है । म्हूँ वणां सवां ने जाणूँ हूँ पण, हे परंतप अर्जुण, थने वणा री खबर नी है ॥ ५ ॥

अजोऽपि सन्नव्ययात्मा भूतानामीश्वरोऽपि सन् ।
प्रकृतिं स्वामधिष्ठाय सम्भवाम्यात्ममायया ॥ ६ ॥

जन्मूँ नी म्हूँ मरूँ नी म्हूँ, सबाँ रो सरदार हूँ ।
म्हारी प्रकृति ने धार, माया म्हारीज शूँ वणूँ ॥ ६ ॥

अणी रो कारण यो है के म्हूँ अजन्मा हूँ तो भी, ने सबाँ रो मालक ने अविनाशी हूँ तो भी म्हारी माया शूँ म्हारी प्रकृति ने धारण कर ने म्हूँ भी स्वतन्त्र रे' ने मुरजी व्हे जश्यो वण-जावूँ हूँ ॥ ६ ॥

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत ।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम् ॥ ७ ॥

धर्म री घटती होवे, जीं जीं समय अर्जुण ।
अधर्म वधवा लागे, जदी म्हूँ अवतार लूँ ॥ ७ ॥

जदी जदी धर्म री घटती व्हेवे ने, हे भारत, अर्जुण, अधर्म वधवा लाग जावे है जदी म्हूँ म्हने वणाय लूँ हूँ (मुरजी व्हे जश्यो ही वण जावूँ हूँ) ॥ ७ ॥

परित्राणाय साधूनां, विनाशाय च दुष्कृताम् ।
धर्मसंस्थापनार्थाय, संभवामि युगे युगे ॥ ८ ॥

बुरा काम करे वाँने, गाळवा पाळ्वा भला ।
धर्म ने थापवा ने म्हूँ, जन्म लेऊँ जुगो जुग ॥ ८ ॥

और वो रूप म्हारो आछा मनखाँ री सा'य करणो ने खोडीलाँ रो नाश करणो अणी काम रो व्हे है। यूँ म्हूँ धर्म थापवा ने जुग जुग मे वणूँ हूँ ॥८॥

जन्म कर्म च मे दिव्यमेवं यो वेत्ति तत्त्वतः ।
त्यक्त्वा देहं पुनर्जन्म नैति मामेति सोऽर्जुन ॥ ९ ॥

जन्म कर्म अनोखा जो, म्हारा यूँ जाण ले सही ।
देह छोड़ म्हने पावे, फेर आवे कदी नहीं ॥ ९ ॥

हे अर्जुण, यूँ म्हारो जन्म ने काम और ही तरे' रा है। अणी मरम ने ठीक तरे' शूँ जो जाण जावे तो वो भी अणी शरीर शूँ न्यारो व्हे ने पाछो शरीर धारण नी करे क्यूँ के वो म्हारो रूप वण जावे है ॥ ९ ॥

वीतरागभयक्रोधा मन्मया मामुपाश्रिताः ।
बहवो ज्ञानतपसा पूता मद्भावमागताः ॥ १० ॥

रीश इच्छा डर वना, म्हाँ में राच्या जच्या हुवा ।
शुद्ध व्है ज्ञान तप शूँ, मिल्या म्हाँ में नरा' नर ॥ १० ॥

अश्या म्हारो रूप व्हियाथका वा म्हारे आशरे रे'वा वाळा रे हरेक वात री हर नी रे'वे है, जी शूँ डर ने रीश भी वणा री वीत जावे है यूँ नराई जणा या ज्ञान री तपस्या कर, पवित्र व्हे ने म्हारो रूप वण गिया है ॥ १० ॥

ये यथा मां प्रपद्यन्ते तांस्तथैव भजाम्यहम् ।
मम वर्त्मानुवर्तन्ते मनुष्याः पार्थ सर्वशः ॥ ११ ॥

ज्यों ज्यूँ भजे म्हने नित्य, वणी ने म्हूँ फळूँ वश्यो ।
म्हारा ही पंथ पे चाले, शारा ही नर अर्जुण ॥ ११ ॥

हे पार्थ, अर्जुण म्हारो आशरो तो शारा ही लेवे पण जश्यो भाव वणा रो व्हे वश्यो ही म्हूँ भी वणा रे वण जावूँ हूँ । ई सब मनख चौमेर फर रिया है सो सब म्हारे ही लारे (साथे) चाल रिया है, न्यारा नी चाले है ॥ ११ ॥

काङ्क्षन्तः कर्मणां सिद्धिं यजन्त इह देवताः ।
क्षिप्रं हि मानुषे लोके सिद्धिर्भवति कर्मजा ॥ १२ ॥

चावे जी कर्म री सिद्धि, रिझावे देवता अठे ।
कर्म शूँ सिद्धि व्हे आवे, झट ही नरलोक में ॥ १२ ॥

कर्मां रा फलां ने चावता थका मनख अठे देवतां ने पूजे है ने अणी मनखां रा लोक में काम रो फल झट ही मल जावे है, यूँ वी न्यारा न्यारा दीखे है ॥ १२ ॥

चातुर्वर्ण्यं मया सृष्टं गुणकर्मविभागशः ।
तस्य कर्तारमपि मां विद्ध्यकर्तारमव्ययम् ॥ १३ ॥

वणाई चार ही जातां, देख म्हें गुण कर्म ने ।
वणा री भी म्हने कर्ता, अकर्ता जाण एक शो ॥ १३ ॥

तो भी च्यार वर्ण (जातां) गुण रा कर्मां रे माफक म्हें हीज वणाई है। वणी वणावा रो वणणो भी म्हां शूँ हीज है। पण म्हूँ तो, वना वणावा वालो, कई नी करवा वालो ने अविनाशी हूँ ॥१३॥

न मां कर्माणि लिम्पन्ति न मे कर्मफले स्पृहा ।
इति मां योऽभिजानाति कर्मभिर्न स बध्यते ॥ १४ ॥

म्हने कर्म नहीं लेपे, नी चावूँ कर्म रो फळ ।
यूँ म्हने जाण लेवे जो, बंधे वो कर्म शूँ नहीं ॥ १४ ॥

ई शूँ म्हने चणावा रा कर्म नी लागे, नी जो म्हने कर्मों रा फल री इच्छा रे'वे। यूँ जो म्हने जाण लेवे तो वो भी अरयो ही व्हे जावे अर्थात कर्मों शूँ नी बंधे ॥ १४ ॥

एवं ज्ञात्वा कृतं कर्म पूर्वैरपि मुमुक्षुभिः ।
कुरु कर्मैव तस्मात्त्वं पूर्वैः पूर्वतरं कृतम् ॥ १५ ॥

यूँ ही जाण किया कर्म, मोच रा अभिलाषियाँ ।
सदा शूँ करता आया, ई शूँ थूँ कर कर्म ही ॥ १५ ॥

यूँ हीज जाण ने पे'ली भी संसार शूँ छुटवा री इच्छा राखवा वालां कर्म कीधा है, अणी शूँ थूँ भी यूँ ही नी करतो थको कर्म कर, क्यूँ के आगे यूँ ही करता आया है ॥ १५ ॥

किं कर्म किमकर्मेति कवयोऽप्यत्र मोहिताः ।
तत्ते कर्म प्रवक्ष्यामि यज्ज्ञात्वा मोक्ष्यसेऽशुभात् ॥ १६ ॥

अकर्म कर्म रे माँय, डा'वा भी डाक चूक व्हे ।
जणी शूँ दुःख यूँ छूटे, कहूँ म्हूँ कर्म वी थने ॥१६॥

करणो कीं ने के'वे ने नी करणो कई व्हे है, अणी में वड़ा वड़ा गचोला में पड़ गिया है। वा हीज

ात आज थने म्हूँ केवूँ हूँ के अणी ने जाण ने हीज थारा सब दुःख छेटी व्हे जायगा—छूट जायगा ॥ १६ ॥

कर्मणो ह्यपि बोद्धव्यं बोद्धव्यं च विकर्मणः ।
अकर्मणश्च बोद्धव्यं गहना कर्मणो गतिः ॥ १७ ॥

कर्म ने जाण णो चावे, जाण णो त्यूँ विकर्म ने ।
अकर्म जाणणो चावे, कर्म री गहरी गति ॥ १७ ॥

कर्म ने भी जाणणो चावे, खोटाई ने भी जाण णी चावे ने नी करवा ने भी जाणणो चावे, क्यूँ के या वात हीज बड़ी गहरी है (जाणवा जशी है) ॥ १७ ॥

कर्मण्यकर्म यः पश्येदकर्मणि च कर्म यः ।
स बुद्धिमान् मनुष्येषु स युक्तः कृत्स्नकर्मकृत् ॥ १८ ॥

अकर्म कर्म में देखे, देखे कर्म अकर्म में ।
वो योगी ज्ञान वाळो वो, वणी कर्म किया सबी ॥ १८ ॥

जो कर्म[1] में अकर्म देखे ने अकर्म में कर्म देखे,

१—कर्म-प्रकृति, अकर्म-पुरुष, अणा ने साथे देखे वो मुक्त ।

निराशीर्यतचित्तात्मा त्यक्तसर्वपरिग्रहः ।
शारीरं केवलं कर्म कुर्वन्नाप्नोति किल्बिषम् ॥ २१॥

आशा प्रपंच जीं छोड़्या, चित्त आत्मा किया वश ।
देह रा हीज कर्मां शूँ, पाप में वो पड़े नहीं ॥२१॥

वणी रा चित्त आदि सब थिर हीज है। वीं री चाहना छूट गी है वणी री सब ममता मट गी है। वो शरीर रा हीज काम करतो थको दीखे है तो भी वो ' त्ती मात्र नी करे ॥ २१ ॥

यदृच्छालाभसन्तुष्टो द्वन्द्वातीतो विमत्सरः ।
समः सिद्धावसिद्धौ च कृत्वापि न निबध्यते ॥ २२ ॥

मले वीं में रहे राजी, बुरो आछो न ईरषा ।
वएयाँ में विगड्याँ में भी, एकशो जो बँधे न वो ॥ २२ ॥

वो तो सब वाताँ में सुखी ही ज है क्यूँ के कणी शूँ भी वीं रे खार नी है ने दुविधा शूँ दूरो है। काम पूरो व्हे अथवा नी व्हे तो भी, ने कर ने भी वो कदी नी बँधे है ॥ २२ ॥

गतसङ्गस्य मुक्तस्य ज्ञानावस्थित चेतसः ।
यज्ञायाचरतः कर्म समग्रं प्रविलीयते ॥ २३ ॥

वो मनखाँ मे बुद्धिमान् है। वीं री अखँड समाधि है। वो ही सब कर्म करवा वालो है ।१८॥

यस्य सर्वे समारम्भाः कामसंकल्पवर्जिताः।
ज्ञानाग्निदग्धकर्माणं तमाहुः पण्डितं बुधाः॥ १९॥

जणी रा कर्म है शारा, मन री कामना बना।
बाल्दया जीं ज्ञान शूँ कर्म, वीं ने पंडत जाणणो॥ १९॥

जणी रा सब काम कामना ने संकल्प बना रा है, अणा तरे' जो काम संकल्प शूँ रहित जाणणो है सो ही ज्ञानाग्नि वाजे है, ने अणी तरे' शूँ जी रा अणी अग्नि शूँ कर्म बल गिया है वो हीज शमझणाँ में शमझणो वाजे है॥ १९॥

त्यक्त्वा कर्मफलासङ्गं नित्यतृप्तो निराश्रयः।
कर्मण्यभिप्रवृत्तोऽपि नैव किंचित्करोति सः॥ २०॥

फल रा संग ने छोड, निराधार रहे सुखी।
कर्म ने यूँ करे तो भी, करे है वो कई नहीं॥ २०॥

यूँ कर्म रा फल रा संग ने छोड़ ने कर्म री आमड़ बना रो, सदा तृप्त, काम करतो थको भी वो तो कोई भी काम नीज करे है॥ २०॥

निराशीर्यतचित्तात्मा त्यक्तसर्वपरिग्रहः ।
शारीरं केवलं कर्म कुर्वन्नाप्नोति किल्बिषम् ॥ २१॥

आशा प्रपंच जीं छोड्या, चित्त आत्मा किया वश ।
देह रा हीज कर्मां शूँ, पाप में वो पड़े नहीं ॥२१॥

वणी रा चित्त आदि सब थिर हीज है । वीं री चाहना छूट गी है वणी री सब ममता मट गी है। वो शरीर रा हीज काम करतो थको दीखे है तो भी वो . त्ती मात्र नी करे ॥ २१ ॥

यदृच्छालाभसन्तुष्टो द्वन्द्वातीतो विमत्सरः ।
समः सिद्धावसिद्धौ च कृत्वापि न निबध्यते ॥ २२ ॥

मले वीं में रहे राजी, बुरो आछो न ईरषा ।
वण्यॉं में विगड्यॉं में भी, एकशो जो बँधे न वो ॥ २२ ॥

वो तो सब वाताँ में सुखी ही ज है क्यूँ के कणी शूँ भी वीं रे खार नो है ने दुविधा शूँ दूरो है । काम पूरो व्हे अथवा नी व्हे तो भी, ने कर ने भी वो कदी नी बँधे है ॥ २२ ॥

गतसङ्गस्य मुक्तस्य ज्ञानावस्थितचेतसः ।
यज्ञायाचरतः कर्म समग्रं प्रविलीयते ॥ २३ ॥

हूँ पणो छोड़ ज्यो मुक्त, ज्ञान में थिर चित व्हे ।
करे जो यज्ञ रा कर्म, वणी रे कर्म नी रहे ॥२३॥

यूँ संग वना रो व्हेवा शूँ मुक्त व्हियो थको, ने ज्ञान व्हे जावा शूँ ही स्थिर चित्त ने निःसंग व्हियो थको व्हे, वणी रे साधन रे वास्ते कर्म कीधा थका व्हे है वी बिलकुल नी लागे है-एकभी-नाम भी ॥ २३ ॥

ब्रह्मार्पणं ब्रह्महविर्ब्रह्माग्नौ ब्रह्मणा हुतम् ।
ब्रह्मैव तेन गन्तव्यं ब्रह्मकर्मसमाधिना ॥ २४ ॥

ब्रह्म री अग्नि में होमें, ब्रह्म ने ब्रह्म ब्रह्म शूँ ।
ब्रह्म शूँ ब्रह्म ने पावे, ब्रह्म कर्म समाध शूँ ॥ २४ ॥

जणी शूँ देवे, वा जो वस्तु देवे, जणी में देवे, वा देवा वालो ने वीं रो फल सबाँ में ब्रह्म साथे है । या सब कर्मा में ब्रह्म समाधि है ॥ २४ ॥

दैवमेवापरे यज्ञं योगिनः पर्युपासते ।
ब्रह्माग्नावपरे यज्ञं यज्ञेनैवोपजुह्वति ॥ २५ ॥

देव रा यज्ञ री योगी, नराई सेवना करे ।
यज्ञ शूँ यज्ञ ने होमे, ब्रह्म री अग्नि में नरा ॥ २५ ॥

यूँ कतरा ही योगी देवतों रे साथे साधन करे है। यो भी वरयो ही है क्यूँ के ईंरी भी हर वगत साधना व्हे शके है कतरा ही चैतन्य ब्रह्म री अग्नि में साधन ने हीज होमवा रो साधन करे है ॥ २५ ॥

श्रोत्रादीनीन्द्रियाण्यन्ये संयमाग्निषु जुह्वति ।
शब्दादीन्विषयानन्य इन्द्रियाग्निषु जुह्वति ॥ २६ ॥

कान आदिक इन्द्र्यॉ ने, थिरता मॉय होम दे ।
इन्द्र्यॉ रा शघळा स्वाद, इन्द्र्यॉ में होम दे नरा ॥ २६ ॥

कतरा ही शब्द आदिक विषयॉ ने कान आदिक इन्द्रियॉ में होम दे है, और कतरा ही कान आदि इन्द्रियॉ ने संयम[1] की अग्नि में होम दे है ॥ २६ ॥

सर्वाणीन्द्रियकर्माणि प्राणकर्माणि चापरे ।
आत्मसंयमयोगाग्नौ जुह्वति ज्ञानदीपिते ॥ २७ ॥

आत्मा री थिरता अग्नी, ज्ञान शूँ शलगाय ने ।
इन्द्र्यॉ ने प्राण रा शारा, कर्मा ने होम दे नरा ॥ २७ ॥

1—संयम-त्रयमेकत्र संयम (यो० सू० ३-४) ध्यान, धारणा और समाधि तीन ही एकत्र होवे जी ने संयम कें'वे है।

कतराक तो सब इन्द्रियाँ रा कामाँ ने और प्राण रा कामां ने आत्म संयम रूपी योग रीं अग्नि में होम देवे है। या अग्नि ज्ञान शूँ शलगो थकी व्हे है ॥ २७ ॥

द्रव्ययज्ञास्तपोयज्ञा योगयज्ञास्तथा परे ।
स्वाध्यायज्ञानयज्ञाश्च यतयः संशितव्रताः ॥ २८ ॥

धन रा तप रा योग, वाणी रा यज्ञ ज्ञान रा ।
चित्त रोक सदा साधे, गाढ़ी कमर बाधने ॥ २८ ॥

यूँ धा'रती वस्तुवां रा साधन, तप रा साधन और योग रा साधन तथा पाठ शुमरण ने ज्ञान रा साधन वाला, मन रा गाढ़ा ने होश्यार मनख व्हियां करे है ॥ २८ ॥

अपाने जुह्वति प्राणं प्राणेऽपानं तथा परे ।
प्राणपानगती रुद्ध्वा प्राणायामपरायणाः ॥ २९ ॥

उशाँश शाँश में होमे, शाँश होमे उशाँश में ।
उशाँश शाँश ने रोके, प्राण री साधना करे ॥ २९ ॥

कतरा ही यो शांश आवे जावे ई री ही साधन करे है। यो ही वणा रे अखंड होम है। कतरा ही आवा

जावा री गति में जो रोक है वणीज ने करवा वाला—साधवा वाला—व्हे है। अणा रे सदा ही प्राणायाम व्हे है ॥ २६ ॥

अपरे नियताहाराः प्राणान्प्राणेषु जुह्वति ।
सर्वेऽप्येते यज्ञविदो यज्ञक्षपितकल्मषाः ॥ ३० ॥

कतरा साध आहार, प्राणाँ में प्राण होम दे ।
ई सबी यज्ञ ने जाणे, यज्ञ शूँ हीण पाप ई ॥ ३० ॥

कतराक वा'र शूँ लेणो शमेट ने शाँश ने शाँश में होम देवे है। मन री दौड़ रुकी ने शाँश आपो आप रुक जावे यो ही होमणो है। यूँ ई सब ही साधन ने जाणे है ने जाणणो ही होम है। यूँ यां शाधना शूँ ही दोष मट जावे है ॥ ३० ॥

यज्ञशिष्टामृतभुजो यान्ति ब्रह्म सनातनम् ।
नायं लोकोऽस्त्ययज्ञस्य कुतोऽन्यः कुरुसत्तम ॥ ३१ ॥

पावे वी ब्रह्म खावे जी, वंच्यो अमृत यज्ञ रो ।
वना यज्ञ न यो लोक, दूसरो तो कई जदी ॥ ३१ ॥

पछे साधन रो वंच्यो अमृत वी भोगे है। अखंड पर ब्रह्म ने पाय लेवे है। वना साधन रे यो

ही लोक नी वणे जदी हे कुरु सत्तम, दूसरा री तो आशा ही कूँकर व्हे शके॥ ३१॥

एवं बहुविधा यज्ञा वितता ब्रह्मणो मुखे।
कर्मजान्विद्धि तान्सर्वानेवं ज्ञात्वा विमोक्ष्यसे ॥ ३२ ॥

यूँ नरी भाँत रा यज्ञ, वेद विस्तार शूँ कह्या ।
कर्म शूँ यज्ञ ई शारा, यूँ जाएयाँ छूट जायगा ॥ ३२ ॥

यूँ नरा ही साधन वेदा में विस्तार शूँ आवे है, वणा सब साधनां ने कर्म शूँ व्हेवा वाला शमझणा यूँ जाणवा शूँ होज थूँ छूट जायगा; क्यूँ के थूँ तो कर्म शूँ व्हेवा वालो है ही 'नी ॥ ३२ ॥

श्रेयान्द्रव्यमयाद्यज्ञाज्ज्ञानयज्ञः परन्तप ।
सर्वं कर्माखिलम्पार्थ ज्ञाने परिसमाप्यते ॥ ३३ ॥

ज्ञान रो यज्ञ यज्ञाँ में, शरे मोक्ष सरूप है ।
सम्पूर्ण शघळा कर्म, ई में होवे समापत ॥ ३३ ॥

हे परंतप अर्जुण, अणा सब यज्ञां में-साधनां में-ज्ञान रो साधन शिरोमणि है क्यूँ के अणी में कई चीज़ नी चावे, ने ज्ञान व्हियो ने सब ही काम पूरा व्हे जावे, बाकी कई नी रेंवे । हे पार्थ,

अर्जुण, जीं शूँ सब काम पूरा करणो चावे वी ने ज्ञान कर लेणो चावे ॥ ३३ ॥

तद्विद्धि प्रणिपातेन परिप्रश्नेन सेवया ।
उपदेक्ष्यन्ति ते ज्ञानं ज्ञानिनस्तत्वदर्शिनः ॥ ३४ ॥

ई ने थूँ जाण सेवा शूँ पूछवा शूँ प्रणाम शूँ ।
ज्ञान ने उपदेशेगा, ज्ञानी जी पहुंच्या थका ॥ ३४ ॥

वणी ज्ञान ने थूँ नरमी शूँ सेवा कर ने पूछेगा तो पूरा ज्ञानी थने उपदेश करेगा ॥ ३४ ॥

यज्ज्ञात्वा न पुनर्मोहमेवं यास्यसि पाण्डव ।
येन भूतान्यशेषेण द्रक्ष्यस्यात्मन्यथो मयि ॥ ३५ ॥

अणी ने जाण थूँ फेर, पायगा दुःख यूँ नहीं ।
आप में जग सारा ने, म्हारा में देखशी पछे ॥ ३५ ॥

हे पाण्डव, वणी ज्ञान ने जाण ने अबाणूँ री नाई थने फेर कदी भी भ्रम ने अज्ञान नी आवेगा, जणी शूँ सब संसार था में हीज दीखवा लाग जायगा । अणी केडे थूँ भी म्हारे में दीख जायगा ॥ ३५ ॥

अपि चेदसि पापेभ्यः सर्वेभ्यः पापकृत्तमः ।
सर्वं ज्ञानप्लवेनैव वृजिनं सन्तरिष्यसि ॥ ३६ ॥

पाप्याँ में थूँ महापापी, जो व्हे तो पण पाप शूँ ।
ज्ञान री नाव में बैठ, से'ल में तर जायगा ॥३६॥

जतरा पाप करवा वाला है वणां में भी जो थूँ सब शूँ म्होटो पापी व्हेगा तो भी सब पाप शूँ अणी ज्ञान री नाव में बैठ ने तर जायगा ॥ ३६ ॥

यथैधांसि समिद्धोऽग्नि र्भस्मसात्कुरुतेऽर्जुन ।
ज्ञानाग्निः सर्वकर्माणि भस्मसात्कुरुते तथा ॥ ३७ ॥

टींडकाँ ने करे राख, लाय ज्यूँ शलगाय ने ।
यूँ ही या ज्ञान री लांय, सारा ही कर्म बाल दे ॥३७॥

हे अर्जुण, ज्यूँ खूब वधी थकी लाय टींडका ने राखोड़ो कर न्हाखे है, यूँ ही या ज्ञान री वास दी सब कर्मां रो राखोड़ो कर न्हाखे है ॥ ३७ ॥

नहि ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिह विद्यते ।
तत्स्वयं योगसंसिद्धः कालेनात्मनि विन्दति ॥ ३८ ॥

पवित्र ज्ञान शो दूजो, अठे और कई नहीं ।
आप ही में मले ज्ञान, कर्म योग शधे जदी ॥ ३८ ॥

थूँ नक्की जाण के ज्ञान शिवाय और आछो कई नी है। यो हीज अणी मनखा जनम रो लाभ है। पण अश्यो ज्ञान साधन सध जावे जदी आपां में हीज भगत पाय ने लाध जावे है ॥ ३८ ॥

श्रद्धावाँल्लभते ज्ञानं तत्परः संयतेन्द्रियः ।
ज्ञानं लब्ध्वा परां शान्तिमचिरेणाधिगच्छति ॥ ३६ ॥

विश्वासी ज्ञान ने पावे, लागे जो थिर चित्त शूँ ।
ज्ञान रे साथ ही शांति, आवे जावे कदी नहीं ॥ ३६ ॥

विश्वास वालो अणीज में लागो रे'वे ज्यो, ने इन्द्रियां ने जीतवा वालो ज्ञान ने पाय शके है, ने ज्ञान पायो ने परम शांति पावा में देर नी लागे क्यूँके ज्ञान को' के परम शांति को' एक है ॥३६॥

अज्ञश्चाश्रद्दधानश्च संशयात्मा विनश्यति ।
नायं लोकोऽस्ति न परो न सुखं संशयात्मनः ॥ ४० ॥

विश्वास हीन अज्ञानी, भे'मी पावे विनाशने ।
दो ही लोक मटे वीं रा, भे'मी रे सुख है नहीं ॥ ४० ॥

पण अजांण में वना विश्वास रो ने भे'मी तो आपणा पग पे आप ही कुराड़ी वा'वे है। ज्ञान

शूँ छेटी छेटी भागे है। जणी रे भे'म है वणी रे तो लोक परलोक दोई वगड़ गिया वो सुखी कूँकर व्हे ॥ ४० ॥

योगसन्यस्तकर्माणं ज्ञानसंछिन्नसंशयम् ।
आत्मवन्तं न कर्माणि निबध्नन्ति धनंजय ॥ ४१ ॥

कर्म ने योग शूँ छोड़े, ज्ञान शूँ भे'म जो तजे ।
आप ने पाय लेवे शो, कर्मा शूँ बंध नी शके ॥ ४१ ॥

हे धनंजय, अर्जुण, जणी रे साधन योग शूँ कर्म छूट गिया ने ज्ञान शूँ भे'म मट गियो, वो आप रूप व्हे गियो। वणी ने कर्म कधी भी नी बांध शके है ॥ ४१ ॥

तस्मादज्ञानसम्भूतं हृत्स्थं ज्ञानासिनात्मनः ।
छित्वैनं संशयं योगमातिष्ठोत्तिष्ठ भारत ॥ ४२ ॥

ॐ तत्सत् इति श्री भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्री कृष्णार्जुनसंवादे कर्मब्रह्मार्पणयोगो नाम चतुर्थोऽध्यायः ।

(१-२)—यो ही सांख्योग, ने कर्म करणो ने वीं ने छोड़णो है। अर्जुन रा अ० ३ श्लो० १ रो उत्तर है।

ईं शूँ अज्ञान रो भे'म, आपणा ज्ञान खड्ग शू ।
हिया मूं काट ने ऊठ, योग रो ठाट ठाट ले ॥ ४२ ॥

ॐ तत्सत् इति श्री भगवद्गीता उपनिषद् मे ब्रह्म विद्या
योगशास्त्र में श्री कृष्णअर्जुण संवाद में ज्ञान
योग नाम चौथो अध्याय समाप्त व्हियो ।

हे भारत, अर्जुण, अणी वास्ते थूं अणी भे'म ने काट ने छेटो न्हाख दे । यो ज्ञान री तरवार शूं हीज कटे है । वा तरवार आपणीज है । यो अज्ञान शूँ व्हे ने मन में रे'वे है । यूं ईं ने काट ने थूं काम कर । साधन कर, आळस छोड ने ऊठ जा ॥४२ ॥

ॐ वो सांचो है यूँ श्री कृष्ण अर्जुण री वात चीत में, श्री भगवान री भापी उपनिषद् में ब्रह्म-विद्या योग शास्त्र में ज्ञानयोग नाम रो चौथो अध्याय समास व्हियो ॥ ४ ॥

ॐ

पञ्चमोऽध्यायः ।

अर्जुन उवाच ।

सन्यास कर्मणां कृष्ण पुनर्योगं च शंससि ।
यच्छ्रेय एतयोरेकं तन्मे ब्रूहि सुनिश्चितम् ॥ १ ॥

ॐ पांचमो अध्याय प्रारंभ ।

अर्जुण कही ।

कर्म रा छोड़ णो के'ने, साथे ही करणो कहो ।
दोयाँ में होय आछो जो, शो कहो शोच ने म्हने ॥ १ ॥

ॐ पांचमो अध्याय प्रारंभ ।

अर्जुण कियो के हे कृष्ण, आप घड़ीक तो काम करवा री के'वो ने पाछी साथे ही काम छोड़[1]

1—'संन्यास' काम छोड़ देवा रो नाम है और 'सांख्य' ज्ञान रो, तत्वाँ रा (गुणाँ रा) सुभाव रो नाम है। गुणाँ रा सुभाव ने जाण ने करणो ही 'योग' नाम है। अणीन योग रो वर्णन हेवा शूँ गीता 'योगशास्त्र'

देवा री भी के' दो हो अणा दोई वातों में शूँ म्हने एक हीज वात आप ने के'णी चावे ने वा वात अशी व्हेणी चावे के जणी शूँ म्हारो दुःख मट जावे। अशी राँमवाण वात एक के'णी चावे ॥ १ ॥

श्री भगवानुवाच ।

संन्यासः कर्मयोगश्च निःश्रेयसकरावुभौ ।
तयोस्तु कर्मसंन्यासात्कर्मयोगो विशिष्यते ॥ २ ॥

श्री भगवान् आज्ञाकरी ।

त्याग ने कर्म रो योग, दो ही कल्याणकारक ।
अणाँ में कर्म छोड्याँ शूँ कर्म रो करणो भलो ॥ २ ॥

श्री भगवान् हुकम कीधो के काम छोड़णो ने करणो दोयां शूँ दुःख मटे है, ने बिलकुल मटे है पण अणा दोयां में भी काम छोड़वा बचे काम करणो घणो आछो है ॥ २ ॥

वाजे है। गुणाँ रो सुभाव जाण ऐणो सहज है पण घणी रो निश्चय नी व्हे तो वार वार हर एक काम में गुणा रा सुभाव ने देखतो रे'णो ही 'कर्मयोग' है। यो सब रे अनिवार्य है।

१—काम छोड़वा रो अभिप्राय खुद भगवान् आगे हुकम करेगा के 'घाँ ने ही संन्यासी जाणणो चावे के जी रे चाह अचाह नी व्हे'ने या वात ज्ञान शूँ व्हे है।

ज्ञेयः सनित्यसन्यासी यो न द्वेष्टि न काङ्क्षति ।
निर्द्वन्द्वो हि महाबाहो सुखं बन्धात्प्रमुच्यते ॥ ३ ॥

संन्यासी जाणणो वीं ने, जीं ने चाह अचाह नी।
जणी ने दोय नी दीसे, वणी ने बंध है कठे ॥ ३ ॥

हे महाबाहू (अर्जुण) वणी रा तो काम सदा ही छूटा थका ही जाणणा जो राग द्वेष नी करे है। जो राग द्वेष नी करे है वो और भी (सुख दुःख भलो बुरो आदि) कई नी करे है। वणी रे बंधन शूँ छूटवा री भी नी करणी पड़े, क्यूँ के छूट्या रो कई छूटे (छूटवा रो दुःख भी वीं ने नीं पड़े है)॥३॥

सांख्ययोगौ पृथग्बाला[१], प्रवदन्ति न पण्डिता ।
एकमप्यास्थित सम्यगुभयोर्विन्दते फलम् ॥ ४ ॥

छोड़णो करणो न्यारो, कहे मूढ़ न पंडित ।
एक भी आचर्यां आछयाँ दोयाँ रो फल पायले ॥४॥

थोड़ी शमझ वाळो ईज छोड़णो ने करणो न्यारो न्यारो जाणे है। जाणकार शमझणा तो दोई एक ही बात है यूँ जाणे है, क्यूँ के एक ही में वो

१—सांख्य = ज्ञान, योग = साधन, यो अर्थ करणों।

मेर शूँ लागो रे'वे वो दो ही रो फळ पाय लेवे (दो नाम है वात एक है जी शूँ)॥ ४॥

यत्सांख्यैः प्राप्यते स्थानं तद्योगैरपि गम्यते ।
एकं सांख्यं च योगं च यः पश्यति स पश्यति ॥ ५ ॥

योगी ने भी मलेवा ही, त्यागी ने ज्या जगाँ मले ।
एक ही त्याग ने योग, दीखे दीखे वणीज ने ॥ ५ ॥

जो अणा ने (करणो छोड़णो ने) एक ही देखे है, वो हीज देखे है, न्यारा देखे वणा रे आंखाँ नी है, क्यूँ के छोड़वा वाळा ने करवा वाळा एक हीज ठकाणो पावे है॥५॥

संन्यासस्तु महाबाहो दुःखमाप्तुमयोगतः ।
योगयुक्तो मुनिर्ब्रह्म नचिरेणाधिगच्छति ॥ ६ ॥

संन्यास तो घणो दो'रो, पावणो योग रे वना ।
योगी ने ब्रह्म पावा में, देर लागे घणी नहीं ॥ ६ ॥

हे महाबाहू (अर्जुण), यो ज्ञान शूँ छोड़णो ने साधन रो करणो एक ही है । पण ज्ञान वना छोड़णो घणो अवको है ने फेर साधन भी नो करे जदी तो के'णो ही कई, पण ज्ञान सहित वाळो तो घणो झट परमात्मा ने पाय लेवे

योगयुक्तो विशुद्धात्मा विजितात्मा जितेन्द्रियः ।
सर्वभूतात्मभूतात्मा कुर्वन्नपि न लिप्यते ॥ ७ ॥

योगी पवित्र रे तावे, आप ने इन्द्रियाँ सवीं ।
सबां री आतमा योगी, करे तो भी बँधे नहीं ॥ ७ ॥

ज्ञान सहित करवा वाळो है वो तो सदा ही शुद्ध है। वणी रे करवा रो कादो नी लागे है, वणी ज आपने जीत लीधो ने इन्द्रियां भी वणी रे हीज आधीन शमझणी, वो हीज आप हीज सबां री आत्मा हे रियो है वो करतो थको भी नी उळझे॥७॥

नैव किंचित्करोमीति युक्तो मन्येत तत्ववित् ।
पश्यञ्शृण्वन्स्पृशञ्जिघ्रन्नश्नन्गच्छन्स्वपञ्श्वसन् ॥ ८ ॥

कई भी म्हूँ करूँ नीज, माने ज्ञानी अडोल यूँ ।
देखे शुणे थड़े शूँघे, खावे शाँश चले सुवे ॥ ८ ॥

क्यूँ के वो तत्व ने (सांच बात ने) जाणे है, अणी वास्ते म्हूँ कई नी'ज करूँ हूँ, यूँ वणी रे निश्चय हे जावे है, ने अणी सांच रो वणी रे कदी वियोग नी हे है। वो देखतो थको, शुणतो थको, अटरुतो थको, शूँघतो थको, खावतो, सूवतो शांस लेतो थको ॥ ८ ॥

प्रलपन्विसृजन्गृह्णन्नुन्मिषन्निमिषन्नपि ।
इन्द्रियाणीन्द्रियार्थेषु वर्तन्तइतिधारयन् ॥ ९ ॥

बोले छोड़े तथा लेवे, आँखाँ मीचे उघाडले ।
इन्द्रयाँ रा धर्म इन्द्रयां ई, करे यूँ धारतो रहे ॥ ९ ॥

खूब बोळतो, खूब देतो ने खूब लेतो थको, ने आंखा खोलतो ने मींचतो थको भी वो या हीज जाणे है के इन्द्रियां आप आपणो काम करती रे'है ॥ ९ ॥

ब्रह्मण्याधाय कर्माणि सङ्गं त्यक्त्वा करोति यः ।
लिप्यते न स पापेन पद्मपत्रमिवाम्भसा ॥ १० ॥

ब्रह्म में मेल कर्मा ने, उळभ्याँ विन आचऱ्याँ ।
पाप लेपे नहीं ज्यूँ नी, लेपे कमळ में जळ ॥ १० ॥

यूँ ब्रह्म में कर्मा रो भार मेल ने, वणा री उळभण छोड़ने काम करे है, वो काम री उळभण में नी आय शके है, ज्यूँ कमल रा पाना पाणी शूँ नी भींजे, यूँ हीं वो कर्मा शूँ न्यारो हीज रे'वे है, क्यूँ के यो वींरो सुभाव है ॥ १० ॥

कायेन मनसा बुद्धया केवलैरिन्द्रियैरपि ।
योगिनः कर्म कुर्वन्ति सङ्ग त्यक्त्वात्म शुद्धये ॥ ११ ॥

काया शूँ मन बुद्धी शूँ, इन्द्रयाँ शूँ पण केवल
आपने शोधवा योगी. उलभ्याँ विन आचरे ॥ ११ ॥

काया शूँ, मन शूँ बुद्धि शूँ ने केवल इन्द्रयां शूँ भी योगी कर्म करे है, पण वी कर्म शूँ न्यारा रे'ने आप रा शोधन रे वास्ते हीज कर्म करे है, अर्थात् कर्म में अकर्म ने देखता रे'है ने अकर्म में कर्म ॥११॥

युक्तः कर्मफलं त्यक्त्वा शान्तिमाप्नोति नैष्ठिकीम् ।
अयुक्तः कामकारेण फले सक्तो निबध्यते ॥ १२ ॥

कर्म रा फळ ने छोड़, योगी परम शान्ति ले ।
अयोगी कामनाँ राखे, फळाँ में लाग ने बँधे ॥ १२ ॥

यूँ म्हारा में लागो थको कर्म रा फळाँ शूँ छूट जावे है ने सदा सुखी हे जावे है । पण म्हारा शूँ न्यारो रे'वा वाळो तो फळ में लागो रे'वे ने इच्छा शूँ बँध जावे है ॥ १२ ॥

सर्वकर्माणि मनसा सन्न्यस्यास्ते सुखं वशी ।
नवद्वारे पुरे देही नैव कुर्वन्नकारयन् ॥ १३ ॥

मन शूँ सन कर्मां ने, योगी छोड़ रहे सुखी ।
नो द्वार पुर में जीव, करावे नी करे कई ॥ १३ ॥

अणी नो पोळाँ री नगरी रो राजा तो नी तो अणी नगरी में कई करे, नी जो कई करावे है । या वात थूँ निश्चय जाण ले । वो तो सब कर्मां ने मन सेथी कजाणां कदकाई छोड़ ने आणन्द शूँ बैठो है, वो कणी रे ही आधीन नी है ॥ १३ ॥

न कर्तृत्व न कर्माणि लोकस्य सृजति प्रभु ।
न कर्मफलसयोग स्वभावस्तु प्रवर्तते ॥ १४ ॥

करे ईश्वर नी कीं रे, कर्म ने करता पणो ।
कर्म रा फळ नी जोडे, ई सुभाव करे सभी ॥ १४ ॥

ई जो थने कर्म, ने करवा वाळा, ने वणां कर्मां रा भोग, संसार में दीखे है अणा मेलो एक भी ईश्वर रो कीधो नी है, पण ई तो सुभाविक ही हो है ॥ १४ ॥

नादत्ते कस्यचित्पाप न चैव सुकृत विभु ।
अज्ञानेनावृत ज्ञान तेन मुह्यन्ति जन्तव ॥ १५ ॥

सर्वां में वस नी लेवे, कींरा भी पाप पुंन वो ।
ढंक्यो अज्ञान शूँ ज्ञान, जीव जी शूँ भमे सभी॥ १५ ॥

ई अतरा मनख पाप पुन्न करता दीखे है, वणां शूँ परमात्मा बिलकुल अटके ही नी है, या चो'त सही वात है, पण वो कणी शूँ छेटी भी नी है या एक फेर खूबी है। ई जीव जन्त जो आत्मा ने पाप पुन्न करवा वाळो के'है ईं रो कारण तो अणा रो अज्ञान है। अणी अज्ञान शूँ ज्ञान दब गियो है, जणीं शूँ अशी ऊंधी वात अणा रे मन मे शमाय गी है ॥ १५ ॥

ज्ञाने नतुतदज्ञान येषा नाशितमात्मन ।
तेषामादित्यवज्ज्ञान मकाशयति तत्परम ॥ १६ ॥

आपणों ज्ञान शूँ नाश, कन्यो अज्ञान रो जणा ।
वणा रो सूर्य शो ज्ञान, प्रकाशे पर ब्रह्म ने ॥ १६ ॥

ने जणां ज्ञान शूँ अणी वात ने जाण लीधी है वणा रो अज्ञान मट गियो ने ज्ञान हे गियो ने वणी ज्ञान आप शूँ ही पर ने जणाय दीदो, ज्यूँ दीवो, दीवो जोवा वाळा ने वतावे, ज्यूं सूर्य सब संसार ने वताव दे ॥ १६ ॥

तद्बुद्धयस्तदात्मानस्तन्निष्ठास्तत्परायणाः ।
गच्छन्त्यपुनरावृत्तिं ज्ञाननिर्धूतकल्मषाः ॥ १७ ॥

वो ही बुद्धी वुही आत्मा, ज्याँ रे आधार आश वो ।
कधी भी नी फरे पाछा, ज्ञान शूँ हीण पाप वी ॥ १७ ॥

ने एक दाण क्षण मात्र भी यूँ वीं ने जाण्या केड़े पछे वणी में हीज बुद्धि निश्चय ने वणी रो ही रूप ने वणी रो ही आशरो वा वणी रा शरणा वाळो हेवाय जाय, ने यूँ ज्ञान शूँ अज्ञान मट्यां केड़े पाछो फर ने अज्ञान तो कदी भी नी आय शके है ॥ १७ ॥

विद्याविनयसम्पन्ने ब्राह्मणे गवि हस्तिनि ।
शुनि चैव श्वपाके च पण्डिताः समदर्शिनः ॥१८॥

शुद्ध ब्राह्मण कुत्ता में, हाथी चंडाल गाय में ।
शाराँ में समता जाणे, वॉ ने पण्डित जाणणाँ ॥ १८ ॥

क्यूँ के विषमता ही अज्ञान है । वणा ने वड़ा भण्या गुण्या ब्राह्मण में, हाथी में, गाय में, भंगी में ने कुत्ता में, आप में है वो ही आत्मा शरीखो जणाय जाय है । ज्यूँ शोनी ने

में शोनो शरीखो ही दीखे। गे'णा और में शोनो एक ॥ १८ ॥

इहैव तैर्जितःसर्गो येषां साम्ये स्थितं मनः ।
निर्दोषं हि समं ब्रह्म तस्माद्ब्रह्मणि तेस्थिताः॥ १९ ॥

अठे ही जन्म वी जीत्या, जणाँ रे समता शधी ।
समता ब्रह्म निर्दोष, जीं शूँ वी ब्रह्म में रहे ॥ १९ ॥

अश्या समदर्शी ज्ञानी अठे हीज वणवा वगड़वा शूँ न्यारा हे गिया (जमारो जीत गिया)। क्यूँ के ब्रह्म में विषमता नी है अणीज वास्ते वी ब्रह्म में ठे'र गया ने ठोकरां मटी ॥ १९ ॥

न प्रहृष्येत्प्रियं प्राप्य नोद्विजेत्प्राप्यचाप्रियम् ।
स्थिरबुद्धिरसंमूढो ब्रह्मविद् ब्रह्मणि स्थितः ॥ २० ॥

बुरी शूँ घबरावे नी, आछी शूँ हर्ष नी करे ।
सचेत स्थिर बुद्धी रो, ज्ञानी रो वास ब्रह्म में ॥ २० ॥

आछा शूँ राजी हेणो नी चावे, पण हेवाय जाय क्यूँ के बुद्धि चञ्चळ हे ने अज्ञान वधो हेवा शूँ फर्क सूझे नी, पण ब्रह्मज्ञानी तो ब्रह्म में हीज रे'वे जद वणी में ई फ़ूँकर आप शके ॥ २० ॥

बाह्यस्पर्शेष्वसक्तात्मा विन्दत्यात्मनियत्सुखम् ।
स ब्रह्मयोगयुक्तात्मा सुखमक्षय मश्नुते ॥ २१ ॥

बा'रला स्वाद शूँ छूटे, पावे जो सुख आप में ।
वो योगी ब्रह्म रो रूप, वणी रो सुख नी मटे ॥ २१ ॥

बा'रला सुखां में तो वणी रो मन उळझे ही नी क्यूँ के सुख ने तो वो आप ही में पाय लेवे है। अश्यो ही ब्रह्म योग में लागो थको योगी वाजे है ने अखण्ड सुख वो हीज भोगे है ॥ २१ ॥

येहि संस्पर्शजा भोगा दुःखयोनय एव ते ।
आद्यन्तवन्तः कौन्तेय न तेषु रमते बुधः ॥ २२ ॥

बा'रला सुख सारा ही, दुःखां री हीज खान है ।
वणे ने वगडे यॉ में, ज्ञानवान रमे नहीं ॥ २२ ॥

हे कौन्तेय अर्जुण, बा'रला सुखां शूँ हीज मनख अपार दुःख पावे है। अणी में कई सन्देह नी है, क्यूँ के अणा रो आदि ने अन्त है जीं शूँ समझणा असां में नी रमे है॥ २२ ॥

१—बा'रला सुख ने मायला सुख में यो ही भेद है के यो तो वणी बा'रली वस्तु में दीखे ने यो आपणे में हीज दीखे सुख तो यो हीज एक ही है

है। जण रो अज्ञान मट्यो वी तो काम क्रोध शूँ न्यारा, साधु, ने मन जीतवा वाळा होज है ॥२६॥

स्पर्शान्कृत्वा बहिर्बाह्यांश्चक्षुश्चैवान्तरे भ्रुवोः ।
प्राणापानौ समौ कृत्वा नासाभ्यन्तरचारिणौ॥ २७ ॥

टीकी आड़ी करें कीकी, बा'रली वात वीशरे ।
नाशा में आवणो जाणो, शाशाँ रो ज्यो समाय ले॥२७॥

यूँ बा'रळा सुखाँ ने बा'रणे होज जाण ने बा'रणे कर देणा और पछे भुँवाराँ रे वचे नजर ठे' राय देणी अणी शूँ नाक में आवो जावा वाळो श्वास ठे'र जाय है ॥ २७ ॥

यतेन्द्रियमनोबुद्धिर्मुनिर्मोक्षपरायणः ।
विगतेच्छाभयक्रोधो यः सदा मुक्त एव सः ॥ २८ ॥

इन्द्रियाँ मन बुद्धी ने, जीत ज्यो आप में रमे ।
वना इच्छा भय क्रोध, सो सदा मुक्त हीज है ॥ २८ ॥

जदी वणी रे मन बुद्धि भी अधीन व्हे जावे ने वणी री साँची वाताँ में रुचि वध जावे। पछे तो इच्छा छूट जावा शूँ भय क्रोध वणी में कूँकर रे' वे

ने जणी री अस्यो मन हे गयो वणी रे अखंड मोक्ष हेवा में कई बाकी रियो वो तो पेली ही मुक्त होज हो ने सदा मुक्त रूप हीज है ॥ २८ ॥

भोक्तारं यज्ञतपसां सर्वलोकमहेश्वरम् ।
सुहृदं सर्वभूतानां ज्ञात्वा मां शान्तिमृच्छति ॥ २६ ॥

ॐ तत्सदिति श्री भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे कर्मसंन्यासयोगो नाम पंचमोऽध्यायः ।
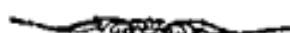
भोगी यज्ञ तपस्या री, सबां री नाथ भी म्हने ।
म्हने ही मित्र सारॉं री, जाण ने शान्ति पाय ले॥ २६ ॥

ॐ तत्सत् इति श्री भगवद्गीता उपनिषत् में ब्रह्मविद्या योगशास्त्र में श्रीकृष्ण अर्जुन संवाद में कर्म संन्यासयोग नाम री पाँचमो अध्याय समाप्त व्हियो ॥

जतरे खुद ही यज्ञ तपस्या री भोगवा वाळो वणे ने म्हने सब शुभ कर्मां री भोगवा वाळो नी गणे जतरे वींने सुख कूँकर हे । जो म्हने सबाँ में महा सामर्थ्य देवा वाळो सबाँ री भलो करवा

वाळो जाण लेवे वो सुख ने वधावे है ने अनन्त सुख पाय लेवे है ॥ २९ ॥

ॐ वो साँचो है यूँ श्रीकृष्ण अर्जुण री चर्चा में
श्री भगवान् री भाषी थकी उपनिषद् में
ब्रह्मविद्या योगशास्त्र में कर्म संन्यास-
योग नाम रो पाँचमो अध्याय
समास व्हियो ॥ ५ ॥

ॐ

षष्ठोऽध्यायः ।

श्री भगवानुवाच ।

अनाश्रितः कर्मफलं कार्यं कर्म करोति यः ।
स सन्यासी च योगी च न निरग्निर्न चाक्रिय: ॥ १ ॥

ॐ छट्टो अध्याय प्रारम्भ ।

श्री भगवान आज्ञाकरी ।

कर्म रा फळ ज्यो छोड़े, धर्म रा कर्म आचरे ।
वो संन्यासी वुही योगी, नी वना घरबार रो ॥ १ ॥

ॐ छट्टो अध्याय प्रारम्भ ।

श्री भगवान हुकम कीधो के, जो करवा रा काम तो करतो रे'वे पण वणी काम रा फळ री आड़ी नी झुके वणी रो हीज काम करणो (योग)

१—फल री इच्छा नी राखणो, सांख्य ने सत्य मानणो हीज है अर्थात् आत्मा ने अलग [illegible] लेणो ही [illegible] री [illegible] है ।

ने छोड़णो (संन्यास) सनद है; पण आपणा घर्म कर्म (अग्नि ने क्रिया) छोड़वा शूँ कोई योगी ने संन्यासी थोड़ो ही व्हे शके है ॥ ० ॥

यं संन्यासमिति प्राहुर्योगं तं विद्धि पाडव ।
न ह्यसंन्यस्तसंकल्पो योगी भवति कश्चन ॥ २ ॥

जीं ने लोग कहे त्याग, योग वो हीज जाण थूँ ।
योगी कोई नहीं होवे, चावना त्यागियाँ वना ॥ २ ॥

हे पांडव (अर्जुण), जीं ने छोड़णो[1] के'वे है वो करणो हीज है, ने करणो वो छोड़णो हीज है। मन रा विचाराँ ने नी छोड़े जतरे कोई भी योगी (करवा वाळो) नी व्हे शके ॥ २ ॥

आरुरुक्षोर्मुनेर्योगं कर्म कारणमुच्यते ।
योगारूढस्य तस्यैव शमः कारणमुच्यते ॥ ३ ॥

योग पे चढ़णो चावे, वो मुनी कर्म शूँ चढ़े ।
योगारूढ़ रहे वो ही, ध्यान शूँ योग पे थिर ॥ ३ ॥

१—छोड़णो = न्यारो करणो, आत्मा रो ज्ञान ही करणो ने छोड़णो दो ही है, यो भाव है ।

अश्या संन्यास वा योग पे चढ़वा रे वास्ते पे' ली काम करणो ही पड़े (वना गाय दूध कूँकर व्हे) ने वो करवा वाळो हीज जदी योगारूढ़ व्हे जावे पछे तो शांति हीज वणी रे उपाय रे'जावे। कणी भी काम री वा छोड़वा री नी रे'वे ॥ ३ ॥

यदा हि नेन्द्रियार्थेषु न कर्मस्वनुषज्जते ।
सर्वसंकल्पसंन्यासी योगारूढस्तदोच्यते ॥ ४ ॥

इन्द्रयाँ रा धर्म कर्मां में, ज्यो कधी उळझे नहीं ।
मन री दोड़ छोड़े ज्यो, योगारूढ़ कहाय वो ॥ ४ ॥

योगारूढ़ वीं ने के'वे है के जणी रा विचार न्यारा व्हे जावे (ज्यूँ हाथ सूँ लखड़ी छूट जावे) जदी वो नी तो इंद्रियाँ रा स्वादां में उळझे ने नी जो कणी काम में उळझ शके (जाणे वेकरड़ा री थेली हाथ सूँ पडगी) ॥ ४ ॥

उद्धरेदात्मनात्मानं नात्मानमवसादयेत् ।
आत्मैव ह्यात्मनो बधुरात्मैव रिपुरात्मनः ॥ ५ ॥

चढ़ाणो आप ने आप, आप ने पाडणो नहीं ।
आप ही आप रो वैरी, आप ही शेण आप रो ॥ ५ ॥

अणी योगारूढ़ पणा ने पावा रे वास्ते आपणी हीज दृढ़ बुद्धि काम दे है, अणी में कदी भी बेपरवाही कर ने आप घात नी करणो। थूँ नक्की जाण के मनख आप ही आप रो वेरी है ने आप ही आपरो शेण है ॥ ५ ॥

बंधुरात्मात्मनस्तस्य येनात्मैवात्मना जितः ।
अनात्मनस्तु शत्रुत्वे वर्तेतात्मैव शत्रुवत् ॥ ६ ॥

आप शूँ आप ने जीत्यो, आप रो शेण आप वो ।
आप शूँ आप नी जीत्यो, वेरी वो आप आप रो ॥ ६ ॥

जणी आपणे ऊपरे आपणो अधिकार कर लीधो वो आप ही आप रो शेण है ने जणी यूँ नी कर ने आपणो आपो खोय दीधो वणी जाणे आपणे साथे आप ही वेरी रो वर्ताव कर लीधो (जो आपाँ पे अधिकार नी कर रियो है वो आपणे साथे ही दुशमणी कर रियो है) ॥ ६ ॥

जितात्मनः प्रशान्तस्य परमात्मा समाहितः ।
शीतोष्णसुखदुःखेषु तथा मानापमानयोः ॥ ७ ॥

पायो वो परमात्मा ने, आपने जीत ज्यों सुखी ।
समान सुख दुःखादि, मान ने अपमान भी ॥ ७ ॥

यूँ जणी आपा ने अधीन कर लीधो वीं ने परमात्मा मिल गियो ने नी विछड़े जश्यो मिल गियो वो शांति ने पाय गियो (क्यूँ के कर कशर अठे ही है वठे नी)। जणी यूँ परमात्मा ने पाय लीधो वणी रे पछे ठंड गर्मी ने मान अपमान आदि में कणी भो वगत वो पाछो गमे नहीं ॥ ७ ॥

ज्ञानविज्ञानतृप्तात्मा कूटस्थो विजितेन्द्रियः ।
युक्त इत्युच्यते योगी समलोष्टाश्मकाञ्चनः ॥ ८ ॥

ज्ञान ने ध्यान में राजी, इंद्रियाँ जीत एक शो ।
योगारूढ़ हुयो वीं रे, धूळो धन समान है ॥ ८ ॥

क्यूँ के वो बारणे ने मायने परमात्मा ने जाण ने धाप गियो है, वीं रे अबे कई बाकी नी रियो है वो वणी अविचल जगा ठे'र गियो है ने इंद्रियाँ इग्यारा ही वणी आछी तरे'जीत लीधी है, गारो ने शोनो वणी रे शरीखो ही व्हे रियो है अश्यो योगी ही लागो ने परम (पद) पायो थको वाजे है (दूज्यूँ वीं री तो वो हीज जाणे) ॥ ८ ॥

सुहृन्मित्रार्युदासीनमध्यस्थद्वेष्यबंधुषु ।
साधुष्वपि च पापेषु समबुद्धिर्विशिष्यते ॥ ९ ॥

पराय आपणा शारा, वैरी शेण उदाश में ।
पापी ने पुंन वाळा में, समता सो सदा बड़ो ॥ ६ ॥

आपणा शुभ चिंतक, मित्र, सदाचारी, उदास, गवाही, वैरी, लागती रा, पापी ने पुन वाळा में भी अस्यो सम बुद्धि वाळो होज सदा वत्तो गणणो (करम छोड़वा वाळा तो ओछा है) ॥ ६ ॥

योगी युञ्जीत सततमात्मानं रहसि स्थितः ।
एकाकी यतचित्तात्मा निराशीरपरिग्रहः ॥ १० ॥

योगी साधे सदा योग, बैठ एकान्त एकलो ।
आशा ने ममता छोड़े, ठे'रावे देह चित्त ने ॥ १० ॥

ईं शूँ योगी ने (साधन करवा वाळा ने) चावे के बरोबर आपाँ ने परमात्मा रे आगे होज राख बा रो मा'वरो राखतो रे'वे अणी वात ने कदी नी भूले के म्हारे ने वणी रे वचे और कोई नी आय शके । यूँ एकंत में एकलो जम ने बैठ जावे मन ने शरीर ने ठे'राय देवे आशा ने ममता छोड़बा शूँ यूँ व्हे शके है ॥ १० ॥

शुचौ देशे प्रतिष्ठाप्य स्थिरमासनमात्मनः ।
नात्युच्छ्रितं नातिनीचं चैलाजिनकुशोत्तरम् ॥ ११ ॥

आछी जगा जमावे वो, समान थिर आशण ।
कुश पे मृगछाला रो, वस्त्र रो सब ऊपरे ॥ ११ ॥

पे'ल्री तो आछो जगा अणी कामरे वास्ते विचार ले अठे शूँ पछे डग पच आपणो नी व्हे। अशी जगा पे पे'ली ड़ाभ रो आशण विछावे वणी पे हरण री खाल रो ने वणी पे कपड़ा रो आशण विछावणो चावे, पण वो घणो ऊँचो वा घणो नीचो भी नी रे'णो चावे अर्थात् एक शरीखो जम जाय ॥ ११ ॥

तत्रैकाग्रं मनः कृत्वा यतचित्तेन्द्रियक्रियः ।
उपविश्यासने युञ्ज्याद्योगमात्मविशुद्धये ॥ १२ ॥

वठे आशण पे वैठ रोक ने चित्त इन्द्रियाँ ।
आपने शोधवा योगी, ठे'रावे मन आप में ॥१२॥

अश्या आशण पे वैठने इन्द्रियाँ, मन री चाल ने शरीर री चाल जणी रे तावे व्हेगी व्हे वो योगी मन ने एक कानी हीज जोड़े । अणी तरे' शूँ फे'र आपने सुधारे, ऊँचो चढ़ावे ॥ १३ ॥

१—घणो ऊँचो नीचो शरीर नेत्र मन रो कोई भी आशण नी रे'णो चावे।

हीज यो सुख मले है, हे अर्जुण, यूँ ही खूब पड्या २ नींद काड़वा शूँ वा जागवा शूँ हीज या शान्ति मलती व्हे या भी वात नी है ॥ १६ ॥

युक्ताहारविहारस्य युक्तचेष्टस्य कर्मसु ।
युक्तस्वमावबोधस्य योगो भवति दुःखहा ॥ १७ ॥

हरणो फरणो काम, करणो परमाण रो ।
वणी रा योग शूँ दुःख, शघळा मट जाय है ॥१७॥

खावणो पीवणो[1] हरणो फरणो अथवा हरेक काम अन्दाज रो करवा वाळा (कामने हकशर करवा वाळा) रे यो दुःख मटावा वाळो योग व्हे है क्यूँ के वणी रो शोवणो ने जागणो भी योग में हीज व्हे है ॥ १७ ॥

यदा विनियतं चित्तमात्मन्येवावतिष्ठते ।
निःस्पृहः सर्वकामेभ्यो युक्त इत्युच्यते तदा ॥ १८ ॥

जदी यो रुकियो चित्त, आपही में रहे थिर ।
रहे नी कामना कोई, सोई योगी व्हियो सही ॥१८॥

१—आशणाँ री समता शधी ने पछे मन्न तो दूज्यूँ ही सम हीज है। अठी री समता शधी ने वा समता आई ने वा जाणी ने या आई; एक ही वात है ॥

जदी यूँ शध्यो थको आप में हीज ठे'र जावे है जदी वीं रो साधन पूरो व्हियो शमभ लेणो क्यूँ के सब कामना चणीं रा अंतश में शूँ मट जावे है ॥१८॥

यथा दीपो निवातस्थो नेङ्गते सोपमा स्मृता ।
योगिनो यतचित्तस्य युञ्जतो योगमात्मनः ॥ १९ ॥

रहे ज्यूँ लोळ दीवा री, एकशी वायरा बना ।
यूँ रहे चित्त योगी रो, लाग ने आपमें थिर ॥१९॥

वणी वगत, ज्यूँ वायरो नी लागतो व्हे वणी जगा रो दीवो वना हाल चाल रो एक शरीखो शलगतो रे'[1] है, वशी हालत व्हे जाय है; क्यूँ के वो मायला मन ने आपणे में हीज (म्हा में) लगावतो रे' है। अणी शूँ म्हारे शवाय वणी साधक री और गती ही नी' है जीं शूँ वो (यतचित्त) अधीन चित्त वाळो वाजे है ॥ १९ ॥

यत्रोपरमते चित्तं निरुद्धं योगसेवया ।
यत्र चैवात्मनात्मानं पश्यन्नात्मनि तुष्यति ॥ २० ॥

१—क्यूँ के और जगाँ जावे जदी हाले वणी शिवाय और जगाँ कठे है के वणी शूँ हाले अर्थात् डगे। डगवा में भी तो वो अडग है। (नाशी में अविनाशी ने जाणे सो ही सुजाग है)

जदी यूँ शमटे चित्त, योग शूँ शाधियो थको ।
जदी यो आप शूँ आप, देख है आप में सुखी ॥२०॥

यूँ योग री सेवा (साधना) करताँ करताँ जठे वणी रो मन ठें'र जावे है, क्यूँ के वो मन रोकवा शूँ नी पण योग सेवा शूँ स्वतः रुक्यो थको व्हे जाय, वणी वगत आप शूँ आप में हीज आप ने देखतो थको तृप्त व्हे जाय है ॥ २० ॥

सुखमात्यन्तिकं यत्तद्बुद्धिग्राह्यमतीन्द्रियम् ।
वेत्ति यत्र न चैवायं स्थितश्चलति तत्त्वतः ॥ २१ ॥

अनंत सुख दीखे वो, बुद्धि शूँ इन्द्रियाँ वना ।
वीं ने पायाँ पछे वीं शूँ, यो कधी भी हटे नहीं ॥२१॥

वणी रो सुख हीज साँचो ने अखंड सुख है । वींने वणी रो जीव हीज जाणे है अणाँ इन्द्रियाँ शूँ वो नी दीख शके । जठे यूँ अणी सुख ने जाणे है वठा शूँ असल में देख ने देखाँ तो यो नीज डगे है ॥ २१ ॥

यं लब्ध्वा चापरं लाभं मन्यते नाधिकं ततः ।
यस्मिन्स्थितो न दुःखेन गुरुणापि विचाल्यते ॥ २२ ॥

जणी लाभ वचे वत्तो, श्रोर लाभ गणे नहीं ।
श्रणी में ठे'र ने म्होटा, दुःख शूँ भी डगे नहीं ॥२२॥

क्यूँ के अणी शिवाय और कोई वत्तो लाभ-(सुख) हे ही नी ने वो माने ही नी है ने वठा शूँ म्होटा शूँ म्होटो दुःख भी ई ने नी हलाय शके है ॥ २२ ॥

त विद्याद्दुःखसंयोगावियोगं योगसज्ञितम् ।
स निश्चयेन योक्तव्यो योगोऽनिर्विण्णचेतसा ॥ २३ ॥

योग नाम अणी गे यो, वियोग दुख रो करे ।
जरूर शाधणो योग, नाम नी घबरावणो ॥ २३ ॥

अणीज ने योग के'वे है, ने जाणणो, के जठे 'ख रा संयोग रो वियोग व्हे जावे है। अणी वास्ते सदा सुखी रे'वा रे वास्ते योग में मन लगाय ने साधन करणो चावे क्यूँ के धीरप शूँ व्हेतो व्हे तो ही व्हे है ॥ २३ ॥

1—दुःख रो वियोग तो हर कीं रे ही व्हे तो रे'वे है ने वो हीज सुख वाजे है पण दुःख रा संयोग रो वियोग नी व्हेवा शूँ पाछो दुःख आय जावे है । दुःख रा संयोग रो वियोग व्हियाँ केड़े पछे पाछो दुःख आय ही नी शके यो रहस्य है ।

सङ्कल्पप्रभवान्कामांस्त्यक्त्वा सर्वानशेषतः ।
मनसैवेन्द्रियग्रामं विनियम्य समन्ततः ॥ २४ ॥

मन री कामना शारी, शेमूळी भूल जावणी ।
इंद्रयाँ ने सब आड़ी शूँ, मन शूँ ही शमेट ने ॥ २४ ॥

मन रा विचाराँ शूँ हीज इच्छा हुवे है, ने इच्छा ही अनर्थ रो मूल है, अणी वास्ते इच्छा ने तो शेमूळी मटाय देणी । या इन्द्रियाँ ने रोकवा शूँ मटे है पण इंद्रियाँ ने भी मन शूँ हीज रोकणी चावे ने चोमेर शूँ रोकणी चावे बारणे शूँ रोके ने मायने खुली रे'वे जदी तो रुकी नी रुकी बरोबर ही है ॥ २४ ॥

शनैः शनैरुपरमेद् बुद्धया धृतिगृहीतया ।
आत्मसंस्थं मनः कृत्वा न किंचिदपि चिन्तयेत्॥ २५ ॥

बुद्धी में धीरता धार, धीरे धीरे शमावणो ।
आप में मन ने मेल, कंई भी चिन्तणो नहीं ॥ २५ ॥

पे'ली तो अणी बात री नक्की कर लेणी, पछे वींने डगवा नी देणी, पछे धीरे २ अणीज में रंगाय जाणो । झट निकळ जावा शूँ गे'रो रंग नी चढ़े

जीं शूँ अणी में डूब जाणो चावे। आप में लागने पछे कई नी विचारणो ॥ २५ ॥

यतो यतो निश्चरति मनश्चञ्चलमस्थिरम् ।
ततस्ततो नियम्यैतदात्मन्येव वशं नयेत् ॥ २६ ॥

थिरता छोड ने जावे, जीं जीं पे मन चंचल ।
आप रे मांय ले आवे, वीं वीं में शूँ शमेट ने ॥ २६ ॥

एक दाण में होज यूँ नी व्हेवाय है क्यूँ के मन रो सुभाव चळवींदो है जीं शूँ वीं ने एकजगा ठे'रणो नी सुवावे है। जीं शूँ यो जठी जठी जावे वठी वठी शूँ ले ने पाछो आपणे ही आधीन करदे। यूँ धीरप ने निश्चय शूँ करवा शूँ मन ने ठे'रवा में सुख दीखवा लाग जावेगा ॥ २६ ॥

प्रशान्तमनसं ह्येनं योगिनं सुखमुत्तमम् ।
उपैति शान्तरजसं ब्रह्मभूतमकल्मषम् ॥२७॥

मन शान्त व्हिया योगी, ब्रह्म रूपी महा सुखी ।
करणो छूट ने वीं रो, तरणो पाप शूँ हुवो ॥ २७ ॥

1—जठे जठे मन जाय वठे ही वठ ब्रह्म वना रो भी है। ब्रह्म वना अणी रो जावणो आवणो ही यूँ कर व्हे शके? यो तो कर्ता है भोक्ता यां कर्ता ने कूण जाणे?

जदी अणी साधक ने असली सब शूँ वत्तो सुख आवा लागेगा (सहज में शगत हो आय जायगा) क्यूँ के अणी री चंचलता तो पे'ली धोवायगी साधन शूँ, पछे छेटी जाणेतो ज्य' नजीक आयगी, जदी फेर करणो कई बाकी रियो। पछे तो हेरे तो वणीज रो रूप आप व्हे गियो ॥२७॥

युञ्जन्नेवं सदात्मान योगी विगतकल्मषः ।
सुखेन ब्रह्मसंस्पर्शमत्यन्तं सुखमश्नुते ॥ २८ ॥

यूँ साधतो सदा योग, होय निर्मल पाप शूँ ।
से'ल में पाय लेवे वो, परमानन्द ब्रह्म ने ॥ २८ ॥

उपरे किया माफक निरंतर वणी रे सन्मुख रे'वा रो मा'वरो करवा शूँ वणी योगी रो मेल मट जावे है ने पछे तो से'ल में ही शगत ब्रह्म वणी रे आय ने लपट जावे है ने ईं'रो मिलणो ही वड़ो ने अनंत सुख है सो मिल जावे है ॥ २८ ॥

सर्वभूतस्थमात्मानं सर्वभूतानि चात्मनि ।
ईक्षते योगयुक्तात्मा सर्वत्र समदर्शनः ॥ २९ ॥

सवाँ में आप ने देखे, सवाँ ने आप मायने ।
सवाँ में समता देखे, सदा योगी व्हियो सुखी ॥ २९ ॥

पछे तो जठे जठे मन जावे वठे वठे ही आपो आप दीखे (सब आप में ने सबाँ में आप ने देख्याँ करे है)। यूँ देखवा रो कारण वणी ने असली वात (ब्रह्म) लाध गीयो है ने लाधवा रो कारण वणी रो साधन है, ईं शूँ ही सर्वत्र एक ही एक दीखे है॥२९॥

यो मां पश्यति सर्वत्र सर्वं च मयि पश्यति ।
तस्याहं न प्रणश्यामि स च मे न प्रणश्यति ॥ ३० ॥

ज्यो म्हने सब में देखे, म्हा में देखे सबी सदा ।
म्हूँ नी छोड़ शकूँ वीं ने, वो नीं छोड़ शके म्हने ॥ ३० ॥

यूँ ज्यो म्हने सर्व में देखे ने म्हा में सर्व ने देखे वणी रे ने म्हारे अस्यो मेळ व्हे जाय के पछे म्हा चावाँ तो ही न्यारा नी व्हे शकाँ ॥ ३० ॥

सर्वभूतस्थितं यो मां भजत्येकत्वमास्थितः ।
सर्वथा वर्तमानोऽपि स योगी मयि वर्तते ॥ ३१ ॥

एकता पाय ज्यो जोगी, सबाँ मांय म्हने भजे ।
शारा काम करे तो भी, म्हारे में हीज वो रहे ॥ ३१ ॥

१—यत्र यत्र मनो याति तत्र तत्र समाधयः ।

जो आपणो एक पणो वना मटायाँ अनेकाँ में म्हने एक ने जाणे है; जाणे कई एक हीज व्हे गियो है; अशी हालत में वणी रो तो रूँ रूँ म्हारे में व्हे गियो है। अबे वो चावे ज्यूँ ही रे'वे धावे ज्यो ही करे तो भी म्हारे में हीज वणी रा सब काम व्हे है। वणी रा कई म्हारा हीज के'णा चावे ॥३१॥

आत्मौपम्येन सर्वत्र समं पश्यति योऽर्जुन।
सुखं वा यदि वा दुःखं स योगी परमो मतः ॥ ३२ ॥

सबाँ रा सुख दुःखाँ ने, आपशा जाण लेय ज्यो।
भिन्न भाव नहीं जीं रे, वो योगी सब शूँ बड़ो ॥ ३२ ॥

यूँ जो सबाँ ने आपणी नाँई ही (मुक्त) एक शरीखा देख लेवे ने सुख दुःख भी वणा रे ज्यूँ ही आपाणे ने आपाणे ज्यूँ ही दूजा रे जाण लेवे वो तो परम योगी है अणी में कई भे'म शरीखी वात नो है ॥ ३२ ॥

अर्जुन उवाच।

योऽयं योगस्त्वया प्रोक्तः साम्येन मधुसूदन।
एतस्याहं न पश्यामि चञ्चलत्वात्स्थितिं स्थिराम् ॥३३॥

अर्जुण कही ।

यो जो आप कह्यो कृष्ण, समता योग उत्तम ।
मन चंचल होवा शूँ, थिर ठे'र शके न यो ॥ ३३ ॥

अर्जुण अरज[1] करी के हे मधुसूदन, यो जो आप समता रो योग हुकम कीधो यो यूँ थिर कूँकर रे'तो व्हेगा। जाण्यो, थोड़ी देर ठे'र भी जावे तो भी सदा ही तो यूँ नी रे' शके ॥ ३३ ॥

चञ्चलं हि मनः कृष्ण प्रमाथि बलवद्दृढं ।
तस्याहं निग्रहं मन्ये वायोरिव सुदुष्करम् ॥ ३४ ॥

जोरावर घणो गाढ़ो, मन चंचल उद्धमी ।
अणी रो रोकणो दो'रो, वायरो रोकवा जश्यो ॥ ३४ ॥

हे कृष्ण, यो मन तो चळवींदो है ने उथल पाथल करदे है, बळ वाळो ने हठीलो है, गाढो है, अश्या मनरो रोकणो दोरो है। भलेई कोई अणी वायरा ने ढाब ले पण मन तो नी ढबे ॥३४ ॥

१—अठे दोड़ता थका मन में भी समता बताई है, या बात अर्जुण रे आढ़ो नी आई जीं शूँ पूछे है ।

श्री भगवानुवाच ।

असंशयं महाबाहो मनो दुर्निग्रह चल ।
अभ्यासेन तु कौन्तेय वैराग्येण च गृह्यते ॥ ३५ ॥

श्री भगवान् आज्ञा करी ।

मन रो रोकणो दो'रो, साचो ही मन चंचल ।
साधना और वेराग, होय तो मन नी डगे ॥ ३५ ॥

श्री भगवान फरमाई के हे महाबाहू अर्जुण, थूँ सॉची के'है । यो मन हाते आवे जश्यो नी है, क्यूँके अणी रो सुभाव ही चळचींदो है । पण हे कुन्ती रा कुँवर, साधना ने वेराग व्हे तो मन से'ल[1] में ही पकड़ाय जाय ॥ ३५ ॥

असंयतात्मना योगो दुष्प्राप इति मे मति ।
वश्यात्मना तु यतता शक्योऽवाप्तुमुपायत ॥ ३६ ॥

योग रो पावणो दो'रो, जणा रे मन हात नी ।
मन हात सदा साधे, पाय लेवे उपाय शूँ ॥ ३६ ॥

१—से'ल में रो भाव यो है के ज्यूँ दोड़ती रेल ने पकड़े तो हाते नी आवे, पण टेशण प टिकट ले ने माँय बैठ जावे जदी तो दोड़ तो ही पकड़ी थकी है । टिकट = साधन, बैठणो = वैराग, टेशण = सत् संगति ।

अणी मन ने पकड़वा रो साधन वैराग शिवाय और उपाय ही नी है ने, जणी रो जीव हत्तु नी व्हे, वो साधन वैराग कूँकर कर शके। जीं शूँ जीव हत्तु व्हे ने उपाय करे, तो मन हात आवताँ देर नी लागे। दू ज्यूँ तो म्हारी जाण में दो'रो हीज है ॥३६॥

अर्जुन उवाच ।

अयतिः श्रद्धयोपेतो योगाचलितमानसः ।
अप्राप्य योगसंसिद्धिं कां गतिं कृष्ण गच्छति ॥ ३७ ॥

अर्जुण कही ।

योग में लायगा चित्त, वचे ज्यो रुक जायगा ।
पायगा ब्रह्म नी वो, तो, जायगा जायगाँ कणी ॥ ३७ ॥

अर्जुण अर्ज कीधी के हे कृष्ण भगवान, सब छोड़ ने मन पकड़वा री करे ने फेर भी मन हाते नी आवे तो वीं री कई गत व्हेती व्हेगा क्यूँ के मन रो हाते आवणो तो से'ल नी है ॥ ३७ ॥

कच्चिन्नोभयविभ्रष्टश्छिन्नाभ्रमिव नश्यति ।
अप्रतिष्ठो महाबाहो विमूढो ब्रह्मणः पथि ॥ ३८ ॥

वखरया वादळा ज्यूँ वो, वचे ही नाश व्हे कई ।
ब्रह्म रा पंथ में भूल्यो, निराधार व्हियो थको ॥ ३८ ॥

ने वैराग शूँ सब छोड़ ने योग रो होऊसाधन पकड़े ने यो भी पूरो नी व्हे जदी कई वो दोई आड़ी शूँ परो जाय ? ज्यूँ वादळो वखर जाय, यूँ ही कई वो वखर जावे है । हे महाबाहू, यो सवाल वणी रे वास्ते है के मुकाम तो नी मल्यो ने गेला में ही अंधारो व्हे गियो सो गेलो नहीं दीखे ॥ ३८ ॥

एतन्मे संशयं कृष्ण च्छेत्तुमर्हस्यशेषतः ।
त्वदन्यः संशयस्यास्य च्छेत्तानह्युपपद्यते ॥ ३९ ॥

सेमूळो काटणो चावे, म्हारो यो भे'म केशव ।
अणी ने काटवा वाळो, और आप वना नहीं ॥ ३९ ॥

हे कृष्ण, अणी भे'म शूँ म्हूँ उळझाय रियो हूँ सो आप अणी भे'म ने विलकुल काट शको हो । ई रे मत्याँ वना म्हारे शूँ कई नी व्हे शकेगा, ई शूँ यो भे'म तो नाम ही म्हा रे आप मती रे'वा दो। आप रे शिवाय दूसराँ शूँ यो भे'म मटे जश्यो भी

नी' है, क्यूँके जीं ने अठा री ही खबर नी' है जदी अणी ने छोड्याँ केडली वींने कई खबर व्हे ॥३९॥

श्री भगवानुवाच ।

पार्थ नैवेह नामुत्र विनाशस्तस्य विद्यते ।
नहि कल्याणकृत्कश्चिद्दुर्गतिं तात गच्छति ॥ ४० ॥

श्री भगवान् आज्ञाकरी ।

अठे वठे कठेई भी, वणी रो नाश होय नी ।
भलाई कर ने भाई, बुराई पाय कोइ नी ॥ ४० ॥

श्री भगवान् हुकम कीधो के हे पार्थ, वो अठा शूँ छूटे नी है, शामो अठा रो काम वीं रे पे'ली शूँ आछो व्हेवा लागे है। नी जो वचे कोई वणी रे वगड़वा री वात है। हे भाई, भलॉ आछो काम करवा वाळा रे बुराई कूँकर व्हेगा (वणी रे तो अठा री भलाई गणे, जणी ने ही बुराई गणी जाय है) वठा रो खोटो ने अठा रो आछो बरोबर है ॥४०॥

प्राप्य पुण्यकृतॉल्लोकानुषित्वा शाश्वती.समा ।
शुचीना श्रीमता गेहे, योगभ्रष्टोऽभिजायते ॥ ४१ ॥

सुखाँ रा लोरू पावे वो, वितावे वर्ष मोकळा ।
पवित्र धन वाळाँ रे, घर में जन्म ले पछे ॥ ४१ ॥

जठे दूसरा म्होटा म्होटा पुन्न करवाऽवाळा जावा री चावना राखे है, वठे ई योग रा वगड्या थका से'ल में ही घणाँ वर्षां तक वास करे है (आनन्द करे है)। जणा ने अठे घणा पवित्र ने धनवान मान्या जाय है, वणा रे अठे फेर वठा शूँ पड़ने वी आराम पावे है और ई ने वी भ्रष्ट व्हेणो गणे है ॥ ४१ ॥

अथवा योगिनामेव कुले भवति धीमताम् ।
एतद्धि दुर्लभतरं लोके जन्म यदीदृशम् ॥ ४२ ॥

अथवा बुद्धिमानाँ रे, योग्याँ रे हीज जन्म ले ।
घणो दुर्लभ यो हीज, अस्याँ रे घर जन्मणो ॥ ४२ ॥

पण आछा योगी व्हे ने फेर भी कई कारण शूँ पायाँ पे'ली ही दूसरो जन्म लेणो पड़े तो वी आछा समझणा जोग्याँ रे घरे हीज जन्म लेवे है, ने यो हीज वणा रे गेला रो विश्राम है जठा री मदत शूँ फेर वी आछा नवा उत्साह शूँ आगे वधे है। अस्यो जन्म पावणो हीज घणो दुर्लभ है॥४२॥

तत्र तं बुद्धिसंयोगं लभते पौर्वदेहिकम् ।
यतते च ततो भूयः संसिद्धौ कुरुनन्दन ॥ ४३ ॥

पे'ली री साधना सो हीं, पाछी आय मले अठे ।
आगे छूटा वठै साधे, साधना ब्रह्म पाववा ॥ ४३ ॥

दूसरा ऊँचा लोकाँ में वा धनवानां रे जन्मवा वचे योगी रे घरे जन्मवा में यो लाभ है के वचे वणी रे उलझण नी व्हेने पे'ली री साधना हीज वींने पाछी आय मले है, जींशूँ वणी रे वचे तार नी टूटे जींशूँ फेर वो बाकी रो गेलो झट ही पूरो कर लेवे है। हे कुरुनन्दन, क्यूँके वो तो मुकाम पे पूगणो ही आपणो काम गणे है जदी कूँकर रुके॥४३॥

पूर्वाभ्यासेनतेनैव ह्रियते ह्यवशोऽपि सः ।
जिज्ञासुरपि योगस्य शब्द ब्रह्मातिवर्तते ॥ ४४ ॥

खेंच ले आप री आड़ी, पे'ली री साधना सही ।
चावना ब्रह्म पावा री, सारा ही पुन्न शूँ शेरे ॥ ४४ ॥

नवो वींने कई नी करणो पड़े वो तो आपो आप ही पे'ली योग रो प्रारम्भ कर दीधो जणी शूँ मुकाम री कानी खेंचायो थको चल्यो जाय है,

ठे'रणो चा'वे तो भी नी रुक शके है, जो योगने जाणणो चावे वो भी शब्दाँ रा जंजाल ने उलाँघ जावे जदी योग में लाग जावे.वीं री तो कई के'णी ॥ ४४॥

प्रयत्नाद्यतमानस्तु योगी संशुद्धकिल्विषः ।
अनेकजन्मसंसिद्धस्ततो याति परां गतिम् ॥ ४५ ॥

लाग ने योग ने साधे, धोय ने पाप आप रा ।
अनेक जन्म शूँ सिद्ध, होवे पावे परंपद ॥ ४५ ॥

यूँ नराई जन्माँ[1] रा सत्कर्म शूँ जणी योगी रा दोष धुप जावे है, क्यूँके वीं रो अभ्यास बरोबर विधि युक्त चालतो हीज रे'वे है, पछे वो बचे विलंब नी लगाय ने योग्याँ रा कुल में जन्म ले ने परम पद पाय लेवे है। परम पद पावा रो पे'लो पगत्यो योग्याँ रा[2] कुल में आवणो है ॥४५॥

१—नराई जन्म पे'ली किया जी ऊंचा जन्म, वणी शूँ पाप धुपणो सुरा वासना भी मिटणो, यो भाव है।

२—योग करवा रा जाणो योग्याँ रा कुल में आवणो वाजे है।

तपस्विभ्योऽधिको योगी ज्ञानिभ्योऽपि मतोऽधिक ।
कर्मिभ्यश्चाधिको योगी तस्माद्योगी भवार्जुन ॥४६॥

तपस्वी शूँ वडो योगी, वडो है ज्ञानवान शूँ ।
कर्मी शूँ भी वडो जाँ शूँ, योगी अर्जुण होव थूँ ॥ ४६ ॥

क्यूँके तपस्वी शूँ भी योगी वत्तो है अणी शूँ ज्ञानी शूँ भी वत्तो है ने कर्मी शूँ भी वत्तो है, जाँ शूँ अर्जुण, थूँ योगी हीज व्हे जा ॥ ४६ ॥

योगिनामपि सर्वेषा मद्गतेनान्तरात्मना ।
श्रद्धावान्भजते यो मा स मे युक्ततमो मत ॥ ४७ ॥

ॐ तत्सत् इति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुन सवादे आत्मसयमयोगो नाम षष्ठोऽध्याय ॥६॥

म्हां, में ही मन ने मेल, प्रेम शूँ ज्यो भजे म्हने ।
शारा ही योग वाळाँ में, वो म्हारी राय मे वडो ॥ ४७ ॥

ॐ तत्सत् इति श्री मद्भगवद्गीता उपनिषत् में ब्रह्मविद्या योगशास्त्र में श्रीकृष्णार्जुन संवाद में आत्मसंयमयोग नाम छठो अध्याय समाप्त व्हियो ॥ ६ ॥

१—अठै कोरा तपस्वी, कोरा ज्ञानी, कोरा कर्मी, यो भाव है ।

फेर सब योग्याँ में भी जो म्हने भक्ति शूँ भजे है ने अंतश म्हारे में जणी रो छेंट गियो है वो होज म्हारी जाण में पूरो योगी है ॥ ४७ ॥

ॐ वो साँचो है यूँ श्रीभगवान री कथी थकी उपनिषत् में ब्रह्मविद्या योगशास्त्र में श्रीकृष्ण अर्जुण रा संवाद में आत्म संयम योग नाम रो छट्टो अध्याय समाप्त व्हियो ॥ ६ ॥

ॐ

सप्तमोऽध्यायः ।

श्री भगवानुवाच ।

मय्यासक्तमनाः पार्थ योगं युञ्जन्मदाश्रयः ।
असंशयं समग्रं मां यथा ज्ञास्यसि तच्छृणु ॥ १ ॥

ॐ सातमो अध्याय प्रारम्भ ।

श्री भगवान् आज्ञा करी ।
म्हारे में मन ने मेल, म्हारे में योग साध ने ।
वना संदेह शारो यूँ, थूँ म्हने जाणशी शुण ॥ १ ॥

ॐ सातमो अध्याय प्रारम्भ ।

श्री भगवान् हुकम कीधो के हे पार्थ, म्हारे में

१—पे'ली ६ ठा अध्याय में अन्त में हुकम कीधो के—अणा आत्म संयमी योगियाँ में, जणा में थने वच्चे भटकवा रो भे'म है वणा वच्चे ही उत्तम, वे खटका रो उपाय म्हारे में लाग ने काम करता रे'णो है । यो ही म्हारो भजन है । अबे अठे अणी बात ने हुकम करे के यूँ कूँकर हो है । दो ही कूँकर व्हे है रो जवाब यो अध्याय है ।

ही साधन ने म्हारे में ही सिद्धि, दोही मल्या ही चाले, अश्यो उत्तम योग थने के'वूँ हूँ। म्हारो आशरो राख ने सब काम करणो ही परम योग है। यूँ म्हने थूँ जरूर हूँ ज्यूँ जाण लेगा। अणी में कोई भे'म भटकवा री बात नी है। ईं ने शुण ने जाण्यो ने म्हने पावो ॥ १ ॥

ज्ञानं तेऽहं सविज्ञानमिदं वक्ष्याम्यशेषतः ।
यज्ज्ञात्वा नेह भूयोऽन्यज्ज्ञातव्यमवशिष्यते ॥ २ ॥

ज्ञान संसार रा साथे ब्रह्म ज्ञान कहूँ सभी ।
ईं ने जाण्या पछे फे'र नी बाकी जाणणो रहे ॥ २ ॥

म्हूँ थने कठी ने ही छोड़ा मेलो नी कराय ने से'ल में रे'बे ज्यूँ ही रे'बा दे ने सब ज्ञान के'वूँ हूँ। ने यो अश्यो उत्तम ज्ञान है के ईं ने अवार हीज जाण लीधो ने पछे फेर कई भी बाकी करणो जाणणो नी रियो ॥ २ ॥

मनुष्याणां सहस्रेषु कश्चिद्यतति सिद्धये ।
यततामपि सिद्धानां कश्चिन्मां वेत्ति तत्वतः ॥ ३ ॥

हजाराँ मनखाँ में शूँ योग कोईक आचरे ।
म्हने हजार योग्याँ मूँ सही कोईक ओळखे ॥ ३ ॥

अश्या म्हने पावा रा उपाय ने हजारों मनखाँ में शूँ कोईक हीज करे है। युँ तो फेर भी नराई उपाय भी करे ने वणां रा उपाय सिद्ध भी व्हे जावे, तो भी म्हने तो ज्यूँ तो कोईक हीज जाणे है ॥ ३ ॥

भूमिरापोऽनलो वायु ख मनो बुद्धिरेव च ।
अहङ्कार इतीय मे भिन्ना प्रकृतिरष्टधा ॥ ४ ॥

मन बुद्धि जमी पाणी, अग्नि आकाश वायरो ।
अहंकार हुई म्हारी, प्रकृती आठ भाँत या ॥ ४ ॥

भूमि जळ अग्नि वायरो आकाश मन अहंकार ने बुद्धि तो मुख्य है हीज, बस या यूँ म्हारी प्रकृती हीज आठ तरे'रो हेगो है ॥ ४ ॥

अपरेयमितस्त्वन्या प्रकृतिं विद्धि मे पराम् ।
जीवभूता महाबाहो ययेद धार्यते जगत् ॥ ५ ॥

या म्हारी प्रकृती ऊली, ई शूं पेली अवे शुण ।
जाण थूँ जीव रूपी वा, धार्यो जगत यो जणी ॥ ५ ॥

हे महाबाहु अर्जुण, या प्रकृति जो आठ तरे' री की है या तो ऊलीज है, पण अबे अणी सूँ भी

आगे री परम प्रकृति है वींने हीज थूँ जाण ले क्यूँके यो जगत वणी परा प्रकृति हीज धारण कर राख्यो है। या हीज कुल प्रकृति री जीव है वणी शिवाय कोई नी है ॥ ५ ॥

एतद्योनीनि भूतानि सर्वाणीत्युपधारय ।
अहं कृत्स्नस्य जगतः प्रभवः प्रलयस्तथा ॥ ६ ॥

शारा ई प्रकृती शूँ ही, होवे निश्चय जाण या ।
उत्पत्ति नाश म्हाँ शूँ ही, होवे संसार सर्व रो ॥ ६ ॥

जतरा कई देख्या शुण्या जाय है सब जड़ चेतन अणीज प्रकृति रा स्वरूप है अणाँ शूँ न्यारी अणी ने थूँ जाणणो चावे तो कदी नी जाण शकेगा। या नक्की कर लीजे और अणी श्राखा संसार रो हुणो नी हुणो म्हारे शूँ हीज है या भी निश्चय है ॥६॥

मत्तः परतरं नान्यत्किंचिदस्ति धनञ्जय ।
मयि सर्वमिदं प्रोतं सूत्रे मणिगणा इव ॥ ७ ॥

म्हारे शूँ और वत्तो नी, दूसरो कोइ अर्जुण ।
म्हाँ में ही सब ई पोया, ज्यूँ पोया सूत में मण्या ॥ ७ ॥

हे धनञ्जय, म्हारे शूँ भी कोई फेर वत्तो हेगा अस्यो थूँ विचार तो हे तो मोटी भूल या हीज थूँ करे है। ई थूँ जतरा विचारे ने देखे है सब म्हारे में हीज यूँ पोया थका है ज्यूँ डोरा में माळा रा मणयाँ, सब मणयाँ डोरा रे आशरे हीज रे' है ॥७॥

रसोऽहमप्सु कौन्तेय प्रभास्मि शशिसूर्ययोः।
प्रणवः सर्ववेदेषु शब्दः खे पौरुषं नृषु ॥ ८ ॥

शब्द आकाश में ॐ हूँ, वेद में जळ में रस ।
चाँद सूरज मे जोत, नराँ माँय उपाय म्हूँ ॥ ८ ॥

हे कुन्ती रा कुँवर, ईं ने थूँ यूँ शमझ के पाणी में रस, चन्द्र सूरज में उजाळो सब वेदाँ में ॐ, आकाश में शब्द, मनखाँ, में मनख पणो ॥ ८ ॥

पुण्यो गंधः पृथिव्याञ्च तेजश्चास्मि विभावसौ।
जीवनं सर्वभूतेषु तपश्चास्मि तपस्विषु ॥ ९ ॥

पवित्र गन्ध पृथ्वी में, अग्नी में तेज हूँ म्हुँ ही ।
जीवाँ में जीवणो जाण, तपसी में म्हुँ ही तप ॥ ९ ॥

१—ज्यूँ सर्वाँ रो हूणो म्हारे शूँ सावत हे रियो है यूँ ही म्हारो भी दूसरा शूँ हे सो हेगा या वात नी हे शके—यो भाव है।

धरती में गन्ध म्हूँ हूँ तो भी पवित्र[1] हूँ, अग्नि में ऊँना पणो भी म्हूँ हूँ, सबाँ रो जीवन, ने तपसी में तप म्हूँ होज हूँ ॥ ९ ॥

बीजं मां सर्वभूतानां विद्धि पार्थ सनातनम् ।
बुद्धिर्बुद्धिमतामस्मि तेजस्तेजस्विनामहम् ॥ १० ॥

सदा शूँ बीज शाराँ रो, म्हने ही जाण अर्जुण ।
बुद्धी हूँ बुद्धि वाळाँ में, तेज हूँ तेजवान में ॥ १० ॥

यूँ हीं हे पार्थ जो कई हे है, सत्ता है, वणी सत्ता री सत्ता (बीज) भी थूँ म्हने जाण। पण बीज बगड़ ने रूँख वणे ज्यूँ म्हारे विकार नी ह्विया है। म्हूँ तो बीज रो बीज होज सदा शूँ हूँ या थूँ शमझ लीजे। यूँ हीं बुद्धिमानाँ में बुद्धि, तेज वाळाँ में तेज भी म्हने जाण जे ॥ १० ॥

बलं बलवतां चाहं कामरागविवर्जितम् ।
धर्माविरुद्धो भूतेषु कामोऽस्मि भरतर्षभ ॥ ११ ॥

बल हूँ बल वाळा में, मोह ने कामना बना ।
धर्म रो काम शाराँ में, म्हने जाण धनञ्जय ॥ ११ ॥

१—सबाँ में आपणो होणो बतायो ने वणाँ रा विकाराँ शूँ न्यारा रे'णो भी वच्चे वच्चे "पवित्र" आदि शब्द दे ने बतायो।

घल वार्ळो में बल भी म्हूँ हीज हूँ, पण कामना री जो फन्दो राग (अनुराग) वाजे है वणी शूँ बिलकुल अलग हूँ, या वात थूँ कठे ही भूल जावे मती। (अणीज वास्ते वचे वचे या वात म्हूँ थने चेतावतो जाय रियो हूँ) क्यूँ के म्हारे संसार रे साथे म्हने शमझावणो है या पे'लो ही म्हे थने की ही। हे भरतर्षभ, सबाँ में ज्यो काम है वो भी म्हूँ हीज हूँ परन्तु तो भी म्हूँ वणी में मल नी जाऊँ हूँ पण न्यारो हीज रे'ने भेळो रे'ऊँ हूँ॥ ११ ॥

ये चैव सात्त्विका भावा राजसास्तामसाश्च ये ।
मत्त एवेति तान्विद्धि नत्वहं तेषु ते मयि ॥ १२॥

सात्विकी राजसी और, तामसी सब जी ह्विया ।
म्हूँ वॉमें नहिं वी म्हा मे, म्हाँ शू ही जाण वी सबी॥१२॥

अबे यूँ कठा तक कियाँ जाऊँ। जो कुछ सतो गुण शूँ रजो गुण शू वा तमो गुण थूँ कई हे तो ह्वेवावतो दीखे है वो सब म्हारे शू हीज है या थूँ निश्चय जाण लीजे, साथे ही या भी याद राखजे के ई नी तो म्हारे में है ने नो जो म्हूँ अणा में हूँ॥ १२॥

त्रिभिर्गुणमयैर्भावैरेभिः सर्वमिदं जगत् ।
मोहितं नाभिजानाति मामेभ्यः परमव्ययम् ॥ १३ ॥

अणाँ तीन गुणा सूँ ही, मोहियो जग यो सबी ।
म्हने याँ सूँ नहीं जाणे, गुणाँ सूँ पर एकशो ॥ १३ ॥

जो कुछ है सब अणाँ तीन गुणाँ रो हीज फेलाव है और अणी गुणाँ री गुळझी में हीज आखो जगत उळझ ने हिया हीण व्हे रियो है (घे' क रियो है)। या तो सूधी बात है के गुण म्हने नाम भी नी जाण शके ने सब ही गुणाँ रा हीज रूप है जदी म्हने कोई कूँकर जाण शके। क्यूँ के ई तो ई नी के' शके ने हरबो फरबो भी अणा रो सुभाव है पण म्हूँ तो सदा एकरस अजअविनाशी हूँ या हीज साबत कर दिया है म्हारे के'वा री कई जरूर है ॥ १३ ॥

दैवी ह्येषा गुणमयी मम माया दुरत्यया ।
मामेव ये प्रपद्यन्ते मायामेतां तरन्ति ते ॥ १४ ॥

दैवी गुणाँ री या माया, म्हारी कठिन है घणी ।
म्हारे ही शरणे आवे, माया सूँ तर जाय वी ॥ १४ ॥

यूँ अणाँ गुणाँ री जतरी जतरी छाण करो

वतरा ही गुण ही गुण में उळझाय है अणी वास्ते अणी ने छोड़ ने जो म्हारे शरणे आय जावे वो हीज अणाँ गुणाँ री माया जाळ शूँ निकळ शके है दूज्यूँ ई शूँ निकळणो दो'रो है ॥ १४ ॥

न मां दुष्कृतिनो मूढा प्रपद्यन्ते नराधमाः ।
माययापहृतज्ञाना आसुरं भावमाश्रिताः ॥ १५ ॥

कुकर्मी मूढ़ नी आवे, शरणे नर नीच वी ।
दानवी भाव नी पाया, माया शूँ मोहिया थका ॥ १५ ॥

मूर्ख, पापी, मनखाँ में नीच, म्हारे शरणे तो भी नी आवे क्यूँ के या तो शूधो आछी वणी वणाई वात है (अणी में करणो कई है) । अणी रो कारण यो है के वी माया जाळ में गे'धूल हे रिया है, जणी शूँ दानवी सुभाव हीज वणा ने आछो लागे है (अर्थात् खोटायाँ छोड़णो ने मरणो वणाँ ने शरीखो ही लागे है) ॥ १५ ॥

चतुर्विधा भजन्ते मां जनाः सुकृतिनोऽर्जुन ।
आर्तो जिज्ञासुरर्थार्थी ज्ञानी च भरतर्षभ ॥ १६ ॥

भागवान भजे लोग, म्हने ई चार भाँत रा ।
दुःख शूँ लाभ शूँ और, जाणवा जाण ने पण ॥ १६ ॥

हे अर्जुण, चार तरें रा मनख होज म्हने भजे है। ई चार ही पुण्यात्मा ने म्हारा भक्त है। वण में एक तो दुःख हे जणी शूँ भजे, एक म्हने जाणवा रे वास्ते भजे, एक लोभ, सुख, री चावनाशूँ भजे और एक ज्ञानी म्हारा भक्त हीज है॥ १६॥

तेषां ज्ञानी नित्ययुक्त एकभक्तिर्विशिष्यते ।
प्रियो हि ज्ञानिनोऽत्यर्थमहं स च मम प्रियः ॥ १७ ॥

ज्ञानी सदा बड़ो यॉं में, जणी रे भक्ति एक ही ।
म्हूँ ज्ञानी ने घणो प्यारो, ज्ञानी प्यारो म्हने घणो ॥१७॥

अणा में ज्ञानी हीज सबाँ शूँ बदे है, क्यूँ के वणी री हीज सांची भक्ति है। वो सदा ही म्हारे में लाग गियो है। वणी रों ने म्हारो बिछोह असंभव है। सब शूँ वत्तो प्यारो ज्ञानी ने म्हूँ हूँ ने म्हने भी ज्ञानी सब शूँ वत्तो वा'लो है॥ १७॥

उदाराः सर्व एवैते ज्ञानी त्वात्मैव मे मतम् ।
आस्थितः स हि युक्तात्मा मामेवानुत्तमां गतिम्॥ १८॥

मारा ही भक्त ई तो भी ज्ञानी म्हारीज आतमा ।
सब शूँ श्रेष्ठ म्हारे में ज्ञानी नित्य मिल्यो रहे ॥ १८॥

यूँ तो सारा ही भक्ताँ पे म्हने मोह है हीज अणी में कई भे'म नी है, क्यूँ के चावे ज्यूँ ही हो वी म्हने हीज भजे है, पण ज्ञानी तो म्हारा जीव हीज है। या वात म्हारी अन्तस रो थने की है। म्हारे शूँ वत्तो कई नी है ने ज्ञानी या जाए निखा-व्रस म्हारे में हीज हर वगत वसयो रे' है, क्यूँके वो ने म्हूँ तो सेळ भेळ व्हे रियाँ हाँ ॥ १८ ॥

बहूना जन्मनामन्ते ज्ञानवान्मां प्रपद्यते ।
वासुदेवः सर्वमिति स महात्मा सुदुर्लभः ॥ १९ ॥

घणो दुर्लभ यूँ ज्ञानी होवे जन्म नराइ शूँ ।
जणी ने सब ही दीखे वासुदेव सरूप ही ॥ १९ ॥

नराई[1] जन्माँ रो अन्त व्हे जदी ज्ञानी व्हे ने म्हारे शूँ मले है। (वणी री घणा जन्म री कमाई व्हे है) सब ही में म्हने वासुदेव ने जाणे वो ही महात्मा दुर्लभ है। यूँ जाणणो ही जाणणो है ॥१९॥

1—नराई जन्मा रो अन्त व्हेगो ही ज्ञानी व्हेणो है नराई जन्म = नराई विचार, अन्त = विचार रो दृष्टा ॥

कामैस्तैस्तै र्हृतज्ञानाः प्रपद्यन्तेऽन्यदेवताः ।
तं तं नियममास्थाय प्रकृत्या नियताः स्वया ॥ २० ॥

जीं जीं सुभाव रा वीं वीं काम शूँ वींज भाँत शूँ ।
वीं वींज देव ने पावे अज्ञानी छोड़ने म्हने ॥ २० ॥

यूँ या शूधी वात है तो भी तरे' तरे' री कामना शूँ आँधा व्हे रिया है जीं शूँ आँपणा सुभाव रे माफक वंध्या थका न्यारा न्यारा देवता रो आशरो ले है (शूधा गेला पे भी आँधा वना कूण भटके) ॥ २० ॥

यो यो यां यां तनुं भक्तः श्रद्धयार्चितुमिच्छति ।
तस्य तस्याचलां श्रद्धां तामेव विदधाम्यहम् ॥ २१ ॥

जो जणीं देह वे भक्त, पूजे विश्वास राख ने ।
वणीज देह में वीं रो, म्हूँ विश्वास जमाय दूँ ॥ २१ ॥

यूँ ज्यो जणी शरीर[1] ने विश्वास भक्ति शूं भजणो चा'वे वणींज शरीर में वणीं रो म्हूँ हीज भरोशो वधाय ने जमाय दूँ हूँ ॥ २१ ॥

1—शरीर भगवान नी है जदीज शरीर री न्यारा पणो के' ने वणी में सकामता बताय ने वणींने अज्ञानी बताया क्यूँ के घणाँ श्रम में थोड़ो मानमान ‹— पावा ने · ˜ है ॥

स तया श्रद्धया युक्तस्तस्याराधनमीहते ।
लभते च ततः कामान्मयैव विहितान्हि तान् ॥ २२ ॥

वणी विश्वास शूँ वीं री, भक्त आराधना करे ।
देवाँ शूँ फळ पावे वी, म्हारों हीज दियो थको ॥ २२ ॥

यूँ भरोशो आय जावा शूँ वो वणीज शरीर ने भजवा लाग जावे वणी शिवाय कई नी चावे ने वणी शूँ वणी री कामना भी सब पूरी हे पण वी वणी शरीर शूँ नी, वो म्हारे शूँ हीज पूरी हे है (पण वो शरीर शूँ जाणे) ॥ २२ ॥

अन्तवत्तु फलं तेषां तद्भवत्यल्पमेधसाम् ।
देवान्देवयजो यान्ति मद्भक्ता यान्ति मामपि ॥ २३ ॥

ओछी अक्कल वाळाँ रे, फळ वो ठे'र नी शके ।
देवाँ रा भक्त देवाँ ने, म्हारा पावे म्हने सदा ॥ २३ ॥

परन्तु कामनाँ[1] रो पूरो हेणो थोड़ा दना रो है तो भी वणाँ रे गाढ़ी शमझ नी हेवा शूँ वी ने ही पूरी शमझ ले है। वस म्हारे में ने दूसरा देवताँ

१—म्हारे शूँ आत्म रूप ने दूसरा शूँ शरीर रो भाव है। दूज्यूँ तो दोष आवे पण तो भी नी शमझे ॥

में यो हीज भेद है। यूँ ही देवता रा भक्त देवता ने पावे ने म्हारा हे जो म्हने भी[2] पावे पण अणी पावा पावा में नरो ही फरक है॥ २३॥

अव्यक्तं व्यक्तिमापन्नं मन्यन्ते मामबुद्धयः।
परं भावमजानन्तो ममाव्ययमनुत्तमम्॥ २४॥

देह माने म्हने मूढ़, म्हारो यो भाव भूल ने।
निराकार सदा सत्य, सब शूँ श्रेष्ठ एक सो॥ २४॥

वी देवाँ रा भक्त शाँची ही वना श्यान रा हीज है, दूज्यूँ अणी दीखे जणी में हीज भक्ति क्यूँ करता। यो तो नाशमान नीचो भाव है ने कलो आड़ी री वात है, पण ईं ने जाणवा वाळो तो ऊपर लो-अविनाशी सर्वोत्तम अणी शूँ न्यारो है। पण वींने नी जाणे जदीज अतरी मेनत शूँ न कामी वात चा'वे, से'ल उत्तम नो चावे॥ २४॥

नाहं प्रकाशः सर्वस्य योगमायासमावृतः।
मूढोऽयं नाभिजानाति लोको मामजमव्ययम्॥ २५॥

२—भी यूँ पावे कई पायो थको हीज हूँ पण व्यवहार यो ही है॥

आव्ले योगमाया रे म्हॅं शूॅं सब ने नहीं ।
मूढ़ संसार नी जाणे अजन्म्यो एक सो म्हने ॥ २५ ॥

अश्यो शूधो भी म्हूँ सब ने प्रासे नो ह्वेऊँ अणी रो कारण केवल म्हारी योग माया[1] हीज है। अणी शूँ म्हॅं पलेटाय गियो व्हॅं ज्यूॅं हे गियो हूॅं, जीं शूँ दीखतो हीं नो दीखूँ हूँ। अणी योग माया में वेंडो ह्वियो थको यो संसार म्हने अणी शूॅं न्यारो, वना जनम्यो, ईं शूँ ही अविनाशी, नी जाण शके है। म्हूँ तो जाणे तो सब कानो हूॅं ॥ २५ ॥

वेदाह समतीतानि वर्त्तमानानि चार्जुन ।
भविष्याणि च भूतानि मा तु वेद न कश्चन ॥ २६ ॥

जाणॅू म्हॅं हे गया ज्यॉं ने, जाणॅू म्हॅं हे रया सबी।
म्हॅं जाणॅू होगया मो भी, नी जाणे कोइ भी म्हने॥२६॥

म्हूँ हीज ह्वेगी ज्यो ने हे री है ज्यो ने ह्वेगा ज्यो सब वातॉं जाणूँ हूँ। पण अश्यो नखे हीज धाड धाड करता थका म्हने कोई भी नी जाणे। अणी शिवाय महा मूर्खता कई ह्वेगा (देखे ने के'वे के ऑखॉं नी है) ॥ २६ ॥

१—योग माया = जड़ चेतन रो योग चमत्कारी ही माया है।

इच्छाद्वेषसमुत्थेन द्वन्द्वमोहेन भारत ।
सर्वभूतानि सम्मोहं सर्गे यान्ति परंतप ॥ २७ ॥

जन्म शूँ साथ लागा ई, जंजाळ सुख दुःख रा
भटके भूल ने यॉ में, खार ने हेत शूँ सवी ॥ २७ ॥

आछो बुरो, आछो बुरो, अणी धन्ध शूँ हे भारत, अरजुण, वणा री शमफ ढंक री है जणी शूँ वणे जणीज वगत रा सब ही ई भूर्ख हे रिया है, अर्थात् जन्म रा ही वेंडा है। हे परंतप, या वात थूँ नक्की जाण जे। दूज्यूँ म्हने जाण ने पछे तो वेंडो कोई हे ही नो शके पण ई तो ठेठ शूँ ही है॥ २७ ॥

येषां त्वन्तगतं पापं जनानां पुण्य कर्मणाम् ।
ते द्वन्द्वमोहनिर्मुक्ता भजन्ते मां दृढव्रताः ॥ २८ ॥

नराँ रा पुन्न वाळॉ रा जणा रा पाप खूटग्या ।
द्वन्द रा फन्द शूँ छूट वी भजे लाग ने म्हने ॥ २८ ॥

थूँ सबाँ रे ही वेंडपणो रे'णो हीज है या तो वात नी है। जणाँ पुण्यात्मा रे पाप पूरा हे गिया है वी अणी आछा बुरा रा धन्ध शूँ छुः

ने म्हने हीज भजवा लाग जावे । पछे वणा रो वो भजन छूट ही नी शके । छूट्यो तो पे'ली ही कश्यो हो पण शमभ् नी ही ॥ २८ ॥

जरामरण मोक्षाय मामाश्रित्य यतन्ति ये ।
ते ब्रह्म तद्विदुः कृत्स्न मध्यात्म कर्म चाखिलम् ॥ २६ ॥

म्हारे ही आशरे लागे, जरा मरण मेटवा ।
वी शारा ब्रह्म ने जाणे, अध्यात्म कर्म भी सबी ॥ २६ ॥

यूँ जरा ने मौत सदा ई छूट जावे अणी रे वास्ते म्हारो आशरो ले ने जी उपाय करे है (काम करे है) अस्या हीज वास्तव में वणी ब्रह्म ने जाणे ह । दूज्यूँ तो ऑंधा री हाथी कर राख्यो है, ने वी हीज ठीक ठीक अध्यात्म ने सब कर्म जाणे है ॥ २६ ॥

साधिभूताधिदैव मा साधियज्ञ च ये विदुः ।
प्रयाणकालेऽपि च मा ते विदुर्युक्तचेतसः ॥ ३० ॥

ॐ तत्सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्याया
योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे ज्ञान-विज्ञान-
योगो नाम सप्तमोऽध्यायः ॥७॥

अधिभूत अधीयज्ञ, अधिदैव समेत ज्यो ।
जाणे सो ही म्हने जाणे, योगी वो अंत में पण ॥३०॥

ॐ तत्सत् इति श्री मद्भगवद्गीता उपनिषत् में ब्रह्मविद्या योगशास्त्र में श्रीकृष्णार्जुन संवाद में ज्ञानविज्ञान योग नाम सातमो अध्याय समाप्त ह्वियो ॥७॥

यूँ ही जो अधिभूत अधिदैव और अधि यज्ञ सेती म्हने जाण ले है वी आखर री वेळ्याँ ने हरताँ फरताँ भी म्हने जाणे है; क्यूँ के वणा रो मन तो म्हारो मन व्हे गियो ने वो म्हारा व्हे गिया।३०।

ॐ वो साँचो यूँ श्री भगवान् री भाषी थकी उपनिषत् में ब्रह्मविद्या योगशास्त्र में श्री कृष्ण अर्जुण रा सवाद में ज्ञान-विज्ञान योग नाम सातमो अध्याय समाप्त ह्वियो ॥७॥

॥ ॐ ॥

अष्टमोऽध्यायः ।

अर्जुन उवाच ।

किं तद् ब्रह्म किमध्यात्मं किं कर्म पुरुषोत्तम ।
अधिभूतं च किं प्रोक्तमधिदैवं किमुच्यते ॥ १ ॥

ॐ आठमो अध्याय प्रारम्भ ।

अर्जुण कही ।

कई यो ब्रह्म अध्यात्म, कई है कर्म केशव ।
अधिभूत कहे कीं ने, कई है अधिदेव भी ॥ १ ॥

ॐ आठमो अध्याय प्रारम्भ ।

अर्जुण कियो के हे पुरुषोत्तम भगवान्, वो ब्रह्म कई है । अध्यात्म कीं नें के' है । कम कई वाजे है । अधिभूत ने भी जाणणो चावूं हूँ और अधिदैव भी कीं ने के'वे है ॥ १ ॥

अधियज्ञः कथं कोऽत्र देहेऽस्मिन् मधुसूदन ।
प्रयाणकाले[1] च कथं ज्ञेयोऽसि नियतात्मभिः ॥ २ ॥

अठे ई देह में कूण, अधियज्ञ कणी तरे'।
योगी कणी तरे' जाणे, आप ने अंतकाळ में ॥ २ ॥

हे मधुसूदन कृष्ण, अणी देह में अठे हीज अधियज्ञ कूण है ने कूँकर है और अंत री वगत में समझणा आदमी आप ने कूँकर जाणे है ॥ २ ॥

श्री भगवानुवाच ।
अक्षरं ब्रह्म परमं स्वभावोऽध्यात्ममुच्यते ।
भूतभावोद्भवकरो विसर्गः कर्मसंज्ञितः ॥ ३ ॥

श्री भगवान् आज्ञा करी ।
अविनाशी पर ब्रह्म, जो अध्यात्म सुभाव वो ।
जणीं यूँ सब ही होवे, कर्म नाम कहाय वो ॥३॥

श्री भगवान् हुकम कीधो के जो अमिट है वो ही पर ब्रह्म वाजे है और सुभाव ने अध्यात्म के' वे

[1]—नियतात्मा (स्थिर मन) रो प्रयाण कूँकर ने प्रयाण री वगत (चंचलता में) ज्ञेय कूँकर व्हे (जाण्या कूँकर जावे) क्यूँ के स्थिर शूँ भी जाणणो सहज नी वो प्रयाण में कूँकर जणावे । या वात 'च' शूँ भी सूचित व्हे है के स्थिरता में जणावो सो तो ठीक पण चलता में कूँकर जणावो । या प्रश्न व्हे जरूरी वात है ।

है। अणाँ सबाँ रो ही फैलणो ने शमटणो जणी शूँ व्हे है वो ही कर्म रा नाम शूँ कियो जाय है ॥३॥

अधिभूतं क्षरो भावः पुरुषश्चाधिदैवतम् ।
अधियज्ञोऽहमेवात्र देहे देहभृतां वर ॥ ४ ॥

नाशमान अधीभूत, जीव सो अधिदैव है ।
अठे ई देह में जाण, म्हने ही अधियज्ञ थूँ॥ ४ ॥

खरवा वाळी जी चीजाँ है वी अधिभूत वाजे है। पुरुष (जीव) अधिदैव वाजे है। अणीज देह में अठे हीज म्हूँ हीज अधियज्ञ हूँ। हे देहभृतां-वर, (देहधारियाँ में श्रेष्ठ) अर्जुण, अणी वात ने मनख हीज जाणवा रो अधिकारी है। थूँ तो मनखाँ में भी श्रेष्ठ है ॥ ४ ॥

अन्तकाले च मामेव स्मरन्मुक्त्वा कलेवरम् ।
यः प्रयाति स मद्भावं याति नास्त्यत्र संशयः ॥ ५ ॥

१—अधियज्ञ म्हूँ हीज हूँ ने अठ हीज हूँ अणी वास्ते कणी भी वगत थीं म्हूँ मी छेटी नी पड़ूँ। अणी वास्ते म्हने जाणे वणी रे वास्ते प्रयाण ने स्थिर काल सारीखा ही है, पण देहभृतां वर, अर्थात् मनुष्य हीज विरला अरथो म्हने जाण शके है। और देहभृत (शरीरधारी) म्हने नी जाण शके है। 'मामेव' रो भाव यो के दूसरा भाव में भी म्हने हीज समझे। दूसरा भाव प' छी रा प्रश्ना रा समझणा।

अन्त में भी म्हने ही जो, चिंततो देह ने तजे।
म्हने ही पाय लेवे वो, अणी में भे'म नी रती ॥५॥

अन्तकाल में भी म्हने हीज सुमरण करतो थको जो शरीर ने छोड़ ने जावे है वो और जगाँ कठे ही नी जावे है पण म्हारो हीज रूप व्हे जावे है अणी में नाम भी भे'म नी है ॥ ५ ॥

यं यं वापि स्मरन्भाव त्यजत्यन्ते कलेवरम् ।
तं तमेवैति कौन्तेय, सदा तद्भावभावितः ॥ ६ ॥

जीं जीं ने चिंतता छोड़े, देह ने अन्तकाल में।
वीं वीं ने पाय लेवे वो, सदा री भावना शुँ ही ॥६॥

यूँही जणी ने याद करतो थको शरीर ने छोड़े वींज ने वो पाय लेवे है। अर्जुण, अणी रो कारण यो है के सदाही रो मा'वरो अन्त में भी याद आपो आप ही आय जावे है ॥ ६ ॥

तस्मात्सर्वेषु कालेषु मामनुस्मर युद्धय च ।
मय्यर्पितमनोबुद्धिर्मामेवैष्यस्यसंशयम् ॥ ७ ॥

ई शूँ सदा म्हने हीज, याद में राख ने लड़।
मन ने बुद्धि जो म्हाँ में, तो म्हाँ में मलशी सही ॥७॥

अणी वास्ते थूँ लड़्याँ भी कर ने म्हने भी हर वगत में भूले मती। बस, पछे थारे म्हने पावा में देर नी है। मन ने बुद्धि जणी म्हारे भेट कर दीधा पछे वो म्हने भूल ही कूँकर शके वो तो म्हने पावे है अणी में संशय कूँकर करणी आवे भलाँ ॥ ७ ॥

अभ्यासयोगयुक्तेन चेतसा नान्यगामिना ।
परमं पुरुषं दिव्यं याति पार्थानुचिन्तयन् ॥ ८ ॥

अडोल चित्त शूँ चिंते, साधना शूँ सध्या थका ।
परं पुरुष ने पावे, अलौकिक अनूप ने ॥ ८ ॥

यूँ नी व्हे तो अभ्यास रो म्हारे शूँ योग करणो ने मन ने ओ'ठे नी जावा देणो । अणी शूँ पछे मन रे भी आगे रो अनोखो पुरुष है वीं ने तो साधक घड़ी २ रो याद करतो थको पायलेवे है। हे पार्थ, या शागे है ॥ ८ ॥

कविं पुराणमनुशासितारमणोरणीयांसमनुस्मरेद्यः ।
सर्वस्य धातारमचिन्त्यरूपमादित्यवर्णं तमसः परस्तात् ॥९॥

कवी पुराणो सन शूँ महीं नो,
जगत् पती ने शुमिरे सदा ज्यो ।

अचिंत आधार सदा सवाँरो,
सूर्य स्वरूपी न वठे अँधारो ॥ ६ ॥

जो अणी बोलता, पुराणा, सबाँ रा गवाळ, ना'ना शूँ ना'ना, सब रा आधार अचिंतरूप, सूर्य शरीखा, अंधारा शूँ आगे, (छेटी) रे'वा वाळा अणी ने शुमरे, सब रे साथे याद करे, वो अणी ने पाय लेवे है ॥ ६ ॥

प्रयाणकाले मनसाऽचलेन भक्त्या युक्तो योगबलेन चैव ।
भ्रुवोर्मध्ये प्राणमावेश्य सम्यक् स तं परं पुरुष मुपैति दिव्यम् ॥१०॥

मरे जणी वार चढाय प्राण,
भक्ती तथा साधन जोर आण ।
वचे भ्रुँवारा मन ने शमेट,
अनूप पावे परधाम ठेट ॥ १० ॥

अश्यो शरीर छोड़ती वगत भक्ति ने योग रा बल वाळो मन ने ठे'राय आछी तरे शूँ भ्रुँवारा रे वचे जीव ने जमाय ने वणी अलौकिक परम पुरुष ने पाय लेवे है (आछी तरे शूँ पाय लेवे है) ॥१०॥

यदक्षरं वेदविदो वदन्ति विशन्ति यद्यतयो वीतरागाः ।
यदिच्छन्तो ब्रह्मचर्यं चरन्ति तत्ते पदं सङ्ग्रहेण प्रवक्ष्ये ॥११॥

जीं ने कहे वेद विनाश हीण,
जती विरागी जिण माँय लीण
जो धाम चावे सब ब्रह्मचारी,
थोडाक में वोहि कहूँ विचारी ॥ ११ ॥

जणी जगाँ ने वेद जाणवा वाला अविनाशी के' है। जणी ने वेरागी इन्द्रियाँ ने जीतवा वाळा पावे है। जणी रे वास्ते ब्रह्मचर्य रो साधन करे है। वा जगाँ थने थोडा में ही के, वूँ हूँ ॥ ११ ॥

सर्वद्वाराणि सयम्य मनो हृदि निरुद्ध्य च ।
मूर्द्न्याधायात्मन प्राणमास्थितो योगधारणाम्॥१२॥

रोक ने सब द्वाराँ ने, हिया में मन रोक ने ।
माथा में मेल ने प्राण, योग री धारणा कर ॥१२॥

सब बारणा बंद कर मन ने हिया[1] में रोक लेणो अणी शूँ आपणो मायलो बळ ताळवा री जगाँ में थोड़ीक जगाँ में भेलो व्हे जावे है। अणी रो नाम योग री धारणा है। और जगाँ में

1—बारणा बंद व्हे तो भी मन ज्यूँ रो ज्यूँ रे'वे पण हिया में चेतन है जणी शूँ उठे रोकवा शूँ यो बणो शूँ मळ जावे यो भाव है।

धारणा करवाशूँ मन हालतो रे'वे है। पण अणी शूँ एक साथे सब कानो शूँ शमट जावे है ॥ १२ ॥

ओमित्येकाक्षरं ब्रह्म व्याहरन्मामनुस्मरन्।
यः प्रयाति त्यजन्देहं स याति परमां गतिम् ॥ १३ ॥

एक अक्षर ॐ ब्रह्म, कहतो चिंततो म्हने।
जो देह तज ने जावे, पावे वो परमा गती ॥१३॥

पछे एक अविनाशी शब्द ॐकार हीज रे' जावे है ने वणी रे साथे ही म्हारो स्मरण रहे है। यूँ जो शरीर ने छोड़ देवे वो परमगती पाय लेवे है ॥ १३ ॥

अनन्यचेताः सततं यो मां स्मरति नित्यशः
तस्याहं सुलभः पार्थ नित्ययुक्तस्य योगिनः ॥१४॥

थिर चित म्हने चिंते, सदा ही ज्यो निरंतर।
वो मल्यो नित ही म्हाँ में, वीं रे सुलभ म्हूँ घणो ॥१४॥

हे पार्थ, अर्जुण, यूँ कठीने ही मन नी जावे अश्यो म्हारो अखंड भजन करे है वणी रे म्हूँ घणो सुलभ

२—ज्यूँ दर्पण पे भाफ ॥

व्हे जावूँ हूँ । यातो केवारी रीत है. दूज्यूँ वो तो म्हारे मे हीज रे'वे है फेर सुलभ दुर्लभ कई रियो ॥ १४ ॥

मामुपेत्य पुनर्जन्म दु खालयमशाश्वतम् ।
नाप्नुवन्ति महात्मान संसिद्धिं परमा गता ॥ १५ ॥

नाशमान नहीं पावे, दुःखाँ रा घर जन्म वी ।
म्हने पाया महात्मा वी, पाया परम सिद्धि ने ॥१५॥

यूँ म्हने पाय लेवे है वणी रो पछे जन्म व्हे णो बंद व्हे जावे है । यो जन्म व्हेणो ही दुःखां रो घर है, क्यूँ के जन्म्या ने दुःख लारे लागा ने फेर मरणो भी पड़े ने फेर यूँ रो यूँ व्हियाँ ही करे । पण जी महात्मा व्हे जावे वणा रो जन्म कूँकर व्हे शके वी तो परम सिद्धि ने पाया है ॥ १५ ॥

आब्रह्मभुवनाल्लोका पुनरावर्तिनोऽर्जुन ।
मामुपेत्य तु कौन्तेय पुनर्जन्म न विद्यते ॥ १६ ॥

पाछा फेरे धरे जन्म, पाया जी ब्रह्मलोक भी ।
म्हने पाया पछे पाछो, कोई जन्म कदी नहीं ॥१६॥

हे अर्जुण, ब्रह्म लोक तक यूँ भी मन पाछो

जन्म मरण रा फेरा में आय जावे है जदी औराँ री तो केणी ही कई। पण हे कौन्तेय, कुन्ती रा पुत्र, एक अश्यो तो म्हूँ हीज हूँ के जठे गियाँ केड़े, फेर जनम व्हेणो रे'वे ही नी ॥ १६ ॥

सहस्रयुगपर्यन्तमहर्यद् ब्रह्मणो विदुः ।
रात्रिं युगसहस्रान्तां तेऽहोरात्रविदो जनाः ॥ १७ ॥

हजार युग री रात, हजार युग रो दन ।
रात ने दन ने जाणो, ब्रह्म रा ज्ञानवान यूँ ॥ १७ ॥

हजार युग पूरा व्हेवो ब्रह्मा रो एक दन मान्यो जाय ने यूँ ही हजार युग री ब्रह्मा री एक रात व्हे है। अणा ब्रह्मा रा रात दन ने जाणे जो हीज रात दन ने ओळखवा वाळा है[1] ॥ १७ ॥

अव्यक्ताद्व्यक्तयः सर्वाः प्रभवन्त्यहरागमे ।
रात्र्यागमे प्रलीयन्ते तत्रैवाव्यक्तसंज्ञके ॥ १८ ॥

मले अलख में राते, होवे अलख शूँ दने।
यूँ वणे वगड़े शारा, ब्रह्म रा दन रात में ॥ १८ ॥

१—रात दन ने ओळखे यो रात दन शूँ न्यारो व्हे जावे ब्रह्मा रा रात ने दन प्रकृति ने विकृति है। याने जाणे सो ही ज्ञानी है यो भाव है ॥

दन व्हे जणी वगत अव्यक्त प्रकृति में यूँ ई व्यक्त वस्तुवाँ वण जावे है ने राते पाछा अणीज अव्यक्त नाम री प्रकृति में मल जावे है ॥ १८ ॥

भूतग्रामः स एवायं भूत्वा भूत्वा प्रलीयते ।
रात्र्यागमेऽवशः पार्थ प्रभवत्यहरागमे ॥ १९ ॥

अणी तरे' यूँ ई लोक, हे हे ने वगड़े सवी ।
आपो आप दने होवे, विलावे रात ने परा ॥१९॥

हे पार्थ अर्जुण, यो रो यो ही सब संसार यूँ रो यूँ हे हे ने पाछो शमटतो जावे है (ज्यूँ श्वास आवे ने जावे है) यूँ ही आपो आप राते शमटे दने पाछो वण जावे ॥ १९ ॥

परस्तस्मात्तु भावोऽन्योऽव्यक्तोऽव्यक्तात्सनातनः ।
यः स सर्वेषु भूतेषु नश्यत्सु न विनश्यति ॥ २० ॥

लखे अलख यो जी यूँ, वो यूँ अलख ओळख ।
मेटे तो भी मटे नी वो, ऊला अलख ने लख ॥२०॥

१—नी दीखे ज्यो । २—दीखे ज्यो ।

परन्तु अणी शमटवा फैलवा, अव्यक्त ने व्यक्त शूँ भी आगे एक भाव वस्तु है। वो अणी फैलवा ने तो देखे हीज है पण अव्यक्त भी वणीज शूँ सावत हे है। या वस्तु अव्यक्त ने व्यक्त शूँ और हीत्तरे' री है सदा शूँ एक शरीखी है और वा वस्तु अशी है के सबाँ रे मटवा पे भी वा कदी नो मटे है ॥ २० ॥

अव्यक्तोऽक्षर इत्युक्तस्तमाहुः परमा गतिम् ।
यं प्राप्य न निवर्तन्ते तद्धाम परमं मम ॥ २१ ॥

अलेख अविनाशी वो, वो हीं है परमा गती ।
जठा शूँ नी फरे पाछो, म्हारो परमधाम वो ॥ २१॥

अणी ने अव्यक्त अक्षर, यूँ शास्त्राँ में के'वे है और अणी ने हीज परम गति भी के'वे है, और जठा शूँ पाछो कदी नो फरे वो म्हारो परम धाम भी यो हीज है ॥ २१ ॥

पुरुषः स परः पार्थ भक्त्या लभ्यस्त्वनन्यया ।
यस्यान्तःस्थानि भूतानि येन सर्वमिदं ततम् ॥ २२ ॥

परं पुरुष भी वो हीं, वो मले एक भक्ति शूँ।
जणी में सब यो आयो, ज्यो आयो सब मांयने॥२२।

और परम पुरुष भी यो हीज है अनन्य भक्ति शूँ हीज यो मले है जणी माँयने सब ई शमट जावे ने जणी शूँ सब फैले है वो भी यो हीज है (अर्थात् जणी में ई सब है ने ज्यो सब में है) ॥ २२ ॥

यत्र काले त्वनावृत्तिमावृत्तिं चैव योगिनः ।
प्रयाता यान्ति तं कालं वक्ष्यामि भरतर्षभ ॥ २३ ॥

जीं समै जन्म लै पाछो, पाछो जन्मे न जीं समै ।
वो समै म्हूँ कहूँ पार्थ, योगी रे देह त्याग रो ॥२३॥

पण हे भरतर्षभ, जणी वगत योगी पाछो आवे ने यूँ ही जणी वगत पाछो नी फरे वीं वगत ने म्हूँ थने के' वूँ हूँ, क्यूँ के चालती वगत पे'ली मुकाम रो गम कर लेणी ॥ २३ ॥

अग्निर्ज्योतिरहः शुक्लः षण्मासा उत्तरायणम् ।
तत्र प्रयाता गच्छन्ति ब्रह्म ब्रह्मविदो जनाः ॥२४॥

अग्नी जोत उजाळो व्हे, दन सूरज उत्तर ।
ई समे देह छोड़े ज्यो, वो ज्ञानी ब्रह्म में मले ॥२४॥

अग्नी[1] व्हे, उजाळो व्हे, दन व्हे शुक्ल पत्त व्हे,

१—अग्नि शूँ मतलब कोरा उजाळा रो है ज्यूँ अंगोरा रो। उजाला शूँ

ने पछे उत्तरायण रा छ महीना व्हे अशी वगत में निकळ्या थका योगी ब्रह्म ने पाय लेवे है। अश्या योगी ब्रह्मविद् वाजे है ॥ २४ ॥

धूमो रात्रिस्तथा कृष्णः षण्मासा दक्षिणायनम् ।
तत्र चान्द्रमसं ज्योतिर्योगी प्राप्य निवर्तते ॥२५॥

धुँवो रात अँधारो हे, सूर्य व्हे दक्षिणायन ।
उजाळो चाँद री पाय, योगी पाछो फरे वठूँ ॥२५॥

यूँही धुंवो व्हे, रात व्हे कृष्ण पक्ष व्हे, ने छ महीना दक्षिणायन रा व्हे वणी वगत योगी चन्द्र मा री ज्योति ने पाय ने पाछो फर जांवे है ॥२५॥

मतलब शरणगती अग्नि री है ज्यूँ दीवा री। यूँ उत्तरोत्तर ज्ञान बढ़तो जावे वो दक्षिण मार्ग समझणो। निष्काम कर्म या ज्ञान योग ही उत्तरायण है। अणी में क्रम क्रम शूँ उजालो वधतो जावे क्यूँ के या गति प्रकाश शूँ होज प्रारंभ व्हे है ने पूर्ण प्रकाश उत्तरायण तक पुगावे है। पण सकाम कर्म मार्ग अंधारा शूँ शुरू व्हे ने थोड़ो सो शुभ्र चन्द्रमा री नाँई क्षययुक्त पाय ने योगी पाछो चक्कर में पड़ जावे है। अणी रो अर्थ दूसरो भी नराई प्रकार रो व्हे है पण भगवान रो भाव तो ऊपरे लख्यो जी शूँ होज है। क्यूँ के अणी गेला रा मर्म ने जाण ने कोई योगी नी भटके (श्लो. २७) ने वेद तप यज्ञ दान रा सकाम मार्ग ने छोड़ निष्काम में आयजावे (श्लो० २८) या स्वयं श्री मुख शूँ ही की है।

शुक्लकृष्णे गती ह्येते जगतः शाश्वते मते ।
एकया यात्यनावृत्तिमन्ययाऽऽवर्तते पुनः ॥ २६ ॥

अँधारा री उजाळा री, सदा संसार री गंती ।
एक पाय फरे पाछो, एक शूँ फेर नी फरे ॥२६॥

ई उजाळा रा ने अंधारा रा दो ही गेला संसार में सदा शूँ व्हे रिया है । अणा ने अधिकारी जाणे है । वणा में एक उजाळा रा गेला शूँ तो पाछो नी फरे ने दूसरा अंधारा रा गेला शूँ पाछो फर जावे है ॥ २६ ॥

नैते सृती पार्थ जानन् योगी मुह्यति कश्चन ।
तस्मात्सर्वेषु कालेषु योगयुक्तो भवार्जुन ॥ २७ ॥

ई गेला जाण ने योगी,कोई भी भटके नहीं ।
ई शूँ थूँ योग में लाव, सदा ही मन अर्जुण ॥२७॥

हे पार्थ ! अणा गेला ने जाणे वो योगी गे-भूल नी रे'वे भलेई चावे ज्यो ही योगी व्हो पण भट सावधान व्हे जावे । अणी वास्ते हे अर्जुण, थूँ भी सदा ही योग में हीज लागो रीज्ये अणी में भूल करे मती ॥ २७ ॥

वेदेषु यज्ञेषु तपः सु चैव
दानेषु यत्पुण्यफलं प्रदिष्टम् ।
अत्येति तत्सर्वमिदं विदित्वा
योगी परं स्थानमुपैति चाद्यम् ॥२८॥

ॐ तत्सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योग-
शास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे अक्षरब्रह्म-
योगोनामाष्टमोऽध्यायः ॥८॥

वेदाँ शुँ यज्ञाँ शुँ तपाँ शुँ पाया
दानाँ शुँ जी पुंन नरा बताया
यो जाण ई सर्व उलाँघ जावे
योगी परं धाम अनादि पावे ॥ २८ ॥

ॐ तत्सत् इति श्री भगवद्गीता उपनिषद् में ब्रह्मविद्या
योगशास्त्र में श्रीकृष्ण अर्जुण संवाद में अक्षर-
ब्रह्म-योग नाम आठमो अध्याय समाप्त
व्हियो ॥ ८ ॥

क्यूँ के वेदाँ में यज्ञाँ में तपाँ में और दान देवा में भी जी जो महा पुण्य मान्या है ने व्हे है वाँ रो फल अणी बात ने जाण ने योगी कई गणे ही नी है, ने शूधो आदि स्थान जो परम पद है वीं ने

पाय लेवे है, ने यूँ नी जाणे तो वो भटक ने अन्धारा रे गेले लाग ने ऊपरे किया वणाँ फळाँ में उळझ ने पाछो चक्कर में आय पड़े है ॥ २८ ॥

ॐ वो साँचो यूँ श्री भगवान् री कथी थकी
उपनिषद् में ब्रह्मविद्या योगशास्त्र में श्री
कृष्ण अर्जुण री वाताँ में अक्षर
ब्रह्मयोग नाम आठमो अध्याय
समाप्त ह्वियो ॥ ८ ॥

ॐ नवमो अध्याय प्रारम्भ ।

श्री भगवान हुकम कीधो के, या तो म्हूँ थने घणोज गे'री वात केवूँ हूँ, क्यूँ के थूँ म्हारी वात रा गुणाँ ने शमझे है ने अणी में खोटायाँ नी देख है । यो ब्रह्म ज्ञान अणी संसारी ज्ञान रे साथे होज केवूँ हूँ जी ने जाण[2] ने अशुभ शूँ छूट जायगा ॥१॥

राजविद्या राजगुह्य पवित्रमिदमुत्तमम् ।
प्रत्यक्षावगमं धर्म्यं सुसुखं कर्तुमव्ययम् ॥ २ ॥

राजविद्या घणी गुप्त, पवित्र श्रेष्ठ धर्म हैं ।
शागे ने अविनाशी भी, सुख शूँ शध भी शके ॥२॥

१—भगवान राज विद्या सांख्य ने हुकम करे है। यणी में प्रकृति, ने पुरुष तीन किया है। प्रकृति रो ज्ञान ही अव्यक्तोपासना है ने यणी दो री है पण विकृति में साक्षी री उपासना ही व्यक्त वा साकारो पासना है । यूँ नी जाणा ने नराई पुरुष साकार ने निराकार मान ने लडे है। या तो घोटे धाढे भूल है। उपासना तो निर्गुण री हो नी शके। हाँ व्यक्त अव्यक्त व्हे है जो की' है।

२—जाणवा शूँ हीज ॥

या विद्या री राजा है जीशूँ राजविद्या वाजे है ने राजा भी अणी ने नी जाणे है क्यूँ के या गें राई में भी राजा है। यूँ ही या पवित्र है, उत्तम है, प्रत्यक्ष प्राप्त है, धर्म है, सुख शूँ हो शके ने अविनाशी है ॥२॥

अश्रद्दधाना पुरुषा धर्मस्यास्य परन्तप ।
अप्राप्य मा निवर्तन्ते मृत्युसंसारवर्त्मनि ॥

ई पे विश्वास नी ज्यॉ रो, नरॉ रो
मोत रा पंथ इंद्रयॉ में, रवडे

हे परंतप, पण मनख अण

तो भी विश्वास नी करे ने
रा घर ने बना पायॉ[3] ही
है वणी मे रवड़ता फरे है ॥

1—राजविद्या है पण घणी गें'री व्हेवा शूँ
पवित्र। यूँ ही सब विशेषण अणी री

२—कोई वात अदी नी के जणी शूँ अणी
अविश्वास है।

३—पाया यका छोड़ ने फरे ई शूँ

मया ततमिदं सर्वं जगदव्यक्तमूर्तिना ।
मत्स्थानि सर्वभूतानि न चाहं तेष्ववस्थितः ॥४॥

अरूपी रूप म्हूँ व्याप्यो, अणीं संसार सर्व में ।
म्हारे में सब ही ई है, म्हूँ अणा मॉयने नहीं ॥४॥

दूज्यूँ भलाँ मोत रा रस्ता में फरवा री वात ही कई है । म्हें हीज म्हारी अव्यक्त[1] मूर्ति शूँ यो आखो संसार फेलाय राख्यो है ने म्हारे में हीज ई सब है पण म्हूँ अणा माँयने नी हूँ या थूँ भूले मती ॥ ४ ॥

न च मत्स्थानि भूतानि पश्य मे योगमैश्वरम् ।
भूतभृन्न च भूतस्थो ममात्मा भूतभावन ॥ ५ ॥

म्हाँ में ई कोइ भी नी है, देख म्हारी अलेपता ।
सबाँ ने धार ने न्यारो, सबाँ रो करता म्हुँ ही ॥५॥

ने फेर देख ने देखे[2] तो ई कोई भी म्हारे में नी है । यो तो म्हारा योग[3] रो विभव है । ईं ने थूँ

१—प्रकृति ।
२—पुरुष प्रकृति री भिन्नता बताई है ।
३—योग प्रकृति पुरुष रो संयोग, ईं शूँ एक एक में जणावे है ।

या विद्या[1] री राजा है जीशूँ राजविद्या वाजे है ने राजा भी अणी ने नो जाणे है क्यूँ के या गे राई में भी राजा है। यूँ ही या पवित्र है, उत्तम है, प्रत्यत्त प्राप्त है, धर्म है, सुख शूँ हे शके ने अविनाशी है ॥२॥

अश्रद्दधानाः पुरुषा धर्मस्यास्य परन्तप ।
अप्राप्य मां निवर्तन्ते मृत्युसंसारवर्त्मनि ॥ ३ ॥

ई पे विश्वास नी ज्यॉ री, नराँ री भागहीण वी ।
मोत रा पंथ इंद्रयॉ में, रवड़े छोड़ ने म्हने ॥ ३ ॥

हे परंतप, पण मनख अणी आपणा धर्म पे तो भी विश्वास नी करे[2] ने अणी अविश्वास शूँ वणा रा घर ने वना[3] पायाँ ही मौत री गेलो जो संसार है वणी मे रयड़ता फरे है ॥ ३ ॥

१—राजविद्या है पण घणी गे'री व्हेवा शूँ मनख [नी जाणे, पण है पवित्र। यूँ ही सब विशेषण अणी री सहज प्राप्ति रा है।

२—कोई बात अठी नी के जणी शूँ अणी विद्या शूँ विमुख रे'वे केवल अविश्वास है।

३—पाया थका छोड़ ने फरे ईं शूँ "निवर्तन्ते" कियो।

मया ततमिदं सर्वं जगदव्यक्तमूर्तिना।
मत्स्थानि सर्वभूतानि न चाहं तेष्ववस्थितः ॥४॥

अम्मी रूप म्हूँ व्याप्यो, अणीं संसार सर्व में।
म्हारे मे सब ही ई है, म्हूँ अणा मॉंयने नहीं ॥४॥

दूज्यूँ भलॉं मोत रा रस्ता में फरवा री वात ही कई है। म्हें हीज म्हारी अव्यक्त[1] मूर्ति शूँ यो आखो संसार फेलाय राख्यो है ने म्हारे मे हीज ई सब है पण म्हूँ अणा मॉंयने नी हूँ या थूँ भूले मती ॥ ४ ॥

न च मत्स्थानि भूतानि पश्य मे योगमैश्वरम्।
भूतभृन्न च भूतस्थो ममात्मा भूतभावनः ॥ ५ ॥

म्हाँ में ई कोइ भी नी है, देख म्हारी अलेपता।
सबॉ ने धार ने न्यारो, सबॉ रो करता म्हूँ ही ॥५॥

ने फेर देख ने देखे[2] तो ई कोई भी म्हारे में नी है। यो तो म्हारा योग[3] रो विभव है। ईं ने थूँ

१—प्रकृति।
२—पुरुष प्रकृति री भिन्नता बताई है।
३—योग प्रकृति पुरुष रा सयोग, ई शूँ एक एक में जणावे है।

गौर करने देख जे क्यूँ के यो ही म्हारो रहस्य है। सवाँ री भरण कर ने भी म्हूँ वणा शूँ न्यारो हूँ क्यूँ के म्हारा रूप में हीज सवाँ री भावना है ॥५॥

यथाकाशस्थितो नित्य वायुः सर्वत्रगो महान् ।
तथा सर्वाणि भूतानि मत्स्थानीत्युपधारय ॥६॥

सदा आकाश में रे'वे वायरा ज्यूँ मची जगाँ।
यूँ हीज सब ही रे'वे, म्हारे मॉय चराचर ॥ ६ ॥

ज्यूँ घड़ो ने वेग शूँ दौड़वावाळो ने सब जगाँ जावावाळो वायरो सदा ही आकाश में हीज स्थित है। आकाश रे बारणे नी रे'[1] शके। यूँ ही अणा सवाँ ने म्हारा में रे'वा वाळा है यूँ थूँ खूब निश्चय कर, ने निश्चय ने भी म्हा में हीज निश्चय जाण ले ॥ ६ ॥

सर्वभूतानि कौन्तेय प्रकृतिं यान्ति मामिकाम् ।
कल्पक्षये पुनस्तानि कल्पादौ विसृजाम्यहम् ॥ ७ ॥

१—ज्यूँ वायरो खूब दौड़े ठे' रे तो भी आकाश में हीज है। यूँ ही संसार रो फेलाव ने शमटणो म्हारा में है।

जुगाँ रा अंत में सारा, म्हारी प्रकृति में मले ।
जुगाँ रा आद में पाछा, म्हूँ याँ ने उपजाय दूँ ॥७॥

हे कौन्तेय, ई सब म्हारीज प्रकृति में मले है, शमटे है, वो कल्प रो क्षय वाजे है । फेर पाछो कल्प रो प्रारंभ व्हे जदी अणा सबाँ ने म्हूँ छोड दूँ हूँ अर्थात् उधेड़ न्हाखूँ हूँ ॥ ७ ॥

प्रकृतिं स्वामवष्टभ्य विसृजामि पुनः पुनः ।
भूतग्राममिमं कृत्स्नमवशं प्रकृतेर्वशात् ॥ ८ ॥

वार वार करूँ त्यार, म्हारी प्रकृति धार यूँ ।
प्रकृती रे पराधीन, होवे संसार यो सरो ॥ ८ ॥

यो शमेटवा रो ने उधेड़वा रो काम म्हारो सुभाविक ही व्हे है । म्हारी प्रकृति रे म्हू[1] आधीन व्हे ने, यो काम नी करूँ पण प्रकृति ने म्हारे आधीन कर ने करूँ हूँ । यूँ यो आखो संसार आपो आप ही प्रकृति रे आधीन व्हियो थको वणे वगड़े[2] है ॥ ८ ॥

१—भाव यो है के म्हारा शूँ ई सब यावत व्हे है ने अणी शूँ म्हूँ बंध नी जाऊँ ज्यूँ सूर्य शूँ सब व्हे ने भी अलग है यूँ ।
२—यूँ आखो ही संसार प्रकृति रे आधीन है । एक म्हूँ हीज अणी शूँ वच्यो हूँ पण हाको तो म्हारो भी उठ गियो है ।

न च मा तानि कर्माणि निबध्नन्ति धनञ्जय ।
उदासीनवदासीनमसक्तं तेषु कर्मसु ॥ ९ ॥

प्रकृती रा किया कर्म, म्हने बाँध शके नहीं।
एकशो बैठ देखूँ म्हूँ, अणा में उळझूँ नहीं ॥ ९ ॥

हे धनंजय, ई संसार रा कर्म म्हने अणीज वास्ते नी बाँध शके है क्यूँ के म्हूँ प्रकृति शूँ बना ही अड्याँ ई करू हूँ। म्हने कर्म नी बाँधे जीं रो कारण यो हीज है के म्हूँ अणा कर्मां में परोक्ष री नाँई हीज निश्चल बैठो रेवूँ हूँ, अर्थात् अणा रा राग द्वेष में राग द्वेष नी करूँ हूँ ॥ ९ ॥

मयाध्यक्षेण प्रकृतिः सूयते सचराचरम् ।
हेतुनानेन कौन्तेय जगद्विपरिवर्तते ॥ १० ॥

करे प्रकृति संसार म्हारी ही देख रेख में ।
अणी कारण शूँ सारो धारो ससार रो चले ॥१०॥

अरया उदासीन, अचल, म्हारी आधीन में हीज या प्रकृति चराचर ने उपजावे है ने जीं शूँ हीज जगत रो धंधो चाल रियो है। हे कौन्तेय, या वात सहज शमझवा जशी है। ॥ १० ॥

अवजानन्ति मां मूढा मानुषीं तनुमाश्रितम् ।
परं भावमजानन्तो मम भूतमहेश्वरम् ॥ ११ ॥

मानवी देह में म्हारो, मान नी मानवी करे ।
जाणे जी रूप नी म्हारो, सबाँ रो परमेश्वर॥ ११ ॥

पण मूरख यूँ तो नी शमझे ने शामो मनख शरीर रे आशरे म्हने माने । भलाँ अणी शवाय म्हारो और कई अनादर व्हेतो व्हेगा के जणी रे आशरे आखो विश्व है वीं' ने एक साड़ा तीन हात रा शूगला नाशमान शरीर रे आशरे गणे । पण वीतो मूरख ठें'स्या जतरी कँधी शमझे वतरी ही थोड़ीज है । वीं' म्हारो परम भाव जो सबाँ रो महेश्वर पणो है वणी ने नी जाणता थकाँ यूँ करे है॥ ११ ॥

मोघाशा मोघकर्माणो मोघज्ञाना विचेतसः ।
राक्षसीमासुरीं चैव प्रकृतिं मोहिनीं श्रिताः॥ १२ ॥

नकामाँ जाण वाँरा थूँ, आशा करम ज्ञान ने ।
राक्षसी आसुरी माया, मोहनी में अचेत वी ॥१२॥

वी हियो फूटा व्हेवा शूँ म्हारो विश्वाधार रो

आशरो तो नी लेवे ने राक्षसी, देताँ रो ने, वात या है के, मोहनी प्रकृति रो आशरो वणा ने आछो लागे है जणी शूँ वणा री आशा, काम, ने ज्ञान सब फोगट परा जावे है ॥ १२ ॥

महात्मानस्तु मां पार्थ दैवीं प्रकृतिमाश्रिताः ।
भजन्त्यनन्यमनसो ज्ञात्वा भूतादिमव्ययम् ॥ १३ ॥

महात्मा तो म्हने हीज, भजे देव सुभाव रा।
जाण ने सब रो आदी, अविनाशी निरंतर ॥ १३ ॥

पण हे पार्थ, महात्मा तो देवता राँ सुभाव रो आशरो ले है। क्यूँके महात्मा[1] में यो सुभाव आपो आप आवे है। वी म्हने सबाँ रो आदी अविनाशी जाण लेवे है अणी वास्ते वणा रो मन और जगाँ कठे जावे ॥ १३ ॥

सततं कीर्तयन्तो मां यतन्तश्च दृढव्रताः ।
नमस्यन्तश्च मां भक्त्या नित्ययुक्ता उपासते ॥ १४ ॥

म्हाँ में जतन म्हाँ में ही, बोलणो दृढ़ताव्रत ।
म्हाँ शूँ ही मिलिया सेवे, भक्ति शूँ नमता थका ॥१४॥

१—महात्मा = मनख शरीर रे आशरे म्हने (आत्माने) नी माने पण म्हाँ आशरे सब ने माने जी महात्मा बाजे ।

वणाँ रा तो शघळा उपाय भी म्हारे में हीज व्हे है। वणा रे रात दन रो म्हारो हीज कीर्तन है। वी तो भक्ति प्रेम शूँ म्हने हीज नमे है। वी तो सदा ही म्हारा शूँ अरश परश हीज रे'वे है ने या हीज वणा री दृढ़ श्रद्धा है दूज्यूँ तो थारा ही है तो अरथ हीज पण विश्वास रो हीज फेर है ॥ १४ ॥

ज्ञानयज्ञेन चाप्यन्ये यजन्तो मामुपासते ।
एकत्वेन पृथक्त्वेन बहुधा विश्वतोमुखम् ॥ १५ ॥

सर्व रूपी म्हने सेवे, ज्ञान रा यज्ञ शूँ नरा।
भजे अनेक भाँतां शूँ, भेद शूँ ने अभेद शूँ ॥१५॥

ने कतराक तो ज्ञान रा होम में सब होम ने असीज ज्ञान यज्ञ शूँ म्हारी उपासना सेवा करे है ने यूँ भी म्हने हीज पावे है। म्हूँ तो चोमेर हूँ ने अनेक तरे' शूँ हूँ अबे भले ई म्हारी एकता[1] शूँ एक ही समझ ने उपासना करो, भावे अनेक रूप शूँ करो ॥ १५ ॥

१—एकत्व प्रकृति में जाणणो, पृथक्त्व विकृति में जाणणो, या साकार निराकर उपासना है। दोयाँ शूँ ही म्हूँ मलूँ हूँ पण प्रकृति में

अहं क्रतुरहं यज्ञः स्वधाहमहमौषधम् ।
मन्त्रोऽहमहमेवाज्यमहमग्निरहं हुतम् ॥ १६ ॥

म्हूँ ही क्रतु म्हुंही यज्ञ, स्वधा म्हूँ औषधी म्हुँही ।
मंत्र म्हूँ घृत भी म्हूँ ही, अग्नि ने होम भी म्हुँ ही ॥१६॥

म्हूँ ही क्रतु नाम रो यज्ञ, ने होम नाम रो यज्ञ, स्वधा जो यज्ञ में (पित्रेश्वराँ रे निमित्त) के' वे ने औषध जो होमे, मंत्र, घृत, अग्नि, ने आहुति भी म्हूँ हीज हूँ ॥ १६ ॥

पिताहमस्य जगतो माता धाता पितामहः ।
वेद्यं पवित्रमोङ्कार ऋक् साम यजुरेव च ॥ १७ ॥

दादो माता पिता म्हूँ हूँ, आधार सबरो म्हुँ ही ।
जाणवा जोग ॐकार, पवित्र वेद भी म्हुँ ही ॥१७॥

अणी आखा जगत रो पिता माता ने पिता मह भी म्हूँ हीज हूँ, यूँ ही एक अनेक म्हूँ हूँ जाणवा योग्य जो पवित्र ॐकार है वो ही म्हूँ हूँ,

---

उपासना करणी पे' ली कठिन है। अणी वास्ते अनेक में (विकृति में) म्हने सुमरणो सहज है। अणी बात ने भगवान ठेठ बारमाँ अध्याय तक समझाई है ने अर्जुण रे भी आड़ी आई है सो विचार लेणी ॥

जदी वणी शूँ ह्विया थका ऋक्, साम, यजुर्वेद भी म्हूँ हूँ होज ॥ १७ ॥

गतिर्भर्ता प्रभुः साक्षी निवासः शरणं सुहृत् ।
प्रभवः प्रलयः स्थानं निधानं बीजमव्ययम् ॥ १८ ॥

मित्र भर्ता प्रभू साक्षी, निवास शरणो गती ।
उत्पती नाश रो स्थान, खान म्हूँ बीज एक सो ॥१८॥

सवाँ री गति, पाळवावालो, समर्थ, ने साक्षी भी म्हूँ हूँ ने रे'वा री जगाँ आशरो (शरणो) ने मित्र भलो चा'वा वाळो ने उपत खपत री जगाँ कई खजानो ने अविनाशी बीज भी म्हूँ होज हूँ ॥१८॥

तपाम्यहमहं वर्षं निगृह्णाम्युत्सृजामि च
अमृतं चैव मृत्युश्च सदसच्चाहमर्जुन ॥ १९ ॥

तपूँ म्हूँ वरपूँ म्हूँही, लेवा देवो करूँ म्हूँही ।
म्हूँही अमृत ने मौत, साँच ने झूँठ भी म्हूँही ॥१९॥

म्हूँ होज तपूँ हूँ, वर्पूँ हूँ, ने जल ने खेंच ने छोड भी देवूँ हूँ । अमृत तो म्हूँ हूँ होज पण मौत भी हूँ ने हे अर्जुण, साँच ने झूँठ भी म्हूँ हूँ, अब के' म्हने कोई कूँकर भूले ॥ १९ ॥

त्रैविद्या मां सोमपाः पूतपापा,
यज्ञैरिष्ट्वा स्वर्गतिं प्रार्थयन्ते ।
ते पुण्यमासाद्य सुरेन्द्रलोक-
मश्नन्ति दिव्यान्दिवि देवभोगान् ॥२० ॥

जी देवता रूप म्हने रिझावे,
जी यज्ञ शूँ स्वर्ग पवित्र चा'वे ।
भले वर्षाँ ने सुख देवताँ रा,
जठाक ताँई शुभकर्म वाँरा ॥ २० ॥

पण तो भी यूँ नी जाणवावाळा[1] वे'क जावे है । वी वेद ने जाणे है, सोम (पवित्र रस) पीवे है, यज्ञ शूँ म्हने राजी करे है, पण चा'वे स्वर्ग रा सुखाँ ने है । अश्या पुरुषा शूँ वी इन्द्रलोक ने पाय ने देवताँ रा अनोखा ऊँचा सुखाँ ने भुगते है ॥ २० ॥

१—यूँ म्हारी सर्वाँ में उपासना नी करवावाळा ने कोरा ही सत्कर्म करवा वाळा अश्या म्होटा २ काम कर ने भी विमुख होज रे' जावे है ने म्हारी सर्वत्र उपासना करवा वाळा म्हने से'ल में ही पाय लेवे है । ज्यूँ "क्रिया दक्षो दक्ष" महिम्न में कियो है ।

ते तं भुक्त्वा स्वर्गलोकं विशालं,
क्षीणे पुण्ये मर्त्यलोकं विशन्ति ।
एवं त्रयीधर्ममनुप्रपन्ना,
गतागतं कामकामा लभन्ते ॥ २१ ॥

भोगे घणो स्वर्ग अनूप वी वो,
पाछा पड़े पुन्न मटे जदी वो ।
पड़ा चढ़ी में पड़ वेदधर्मी,
छोड़े नहीं आश विनाश धर्मी ॥ २१ ॥

वी वणी ने भोग ने (स्वर्ग ने भोग ने), जो
.. घणो ने घणा समय तक रे'वा वाळो है तो
भी, पुण्य पूरा व्हे ने पाछा अणी जनम मरण रा
फेरा में आय पड़े । यूँ वेद रा धर्म रो' हीज आधार
राख ने भी कामना राखवा वाळा आवागमन थूँ
नी छूटे क्यूँ के वणा रे म्हारी उपासना नी है ॥२१॥

अनन्याश्चिन्तयन्तो मां ये जनाः पर्युपासते ।
तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम् ॥ २२ ॥

...राँ ने छोड़ ने एक, म्हने ही मन दे भजे ।
...सदा ही मिल्या म्हाँ में, वाँरा काम करूँ म्हूँ ही ॥२२॥

ने जो म्हारा भक्त म्हने हीज सबाँ में देखे है वणा रे तो म्हूँ चोमेर हाजर रेवूँ हूँ, ने वो भी म्हारे में ही सदा रे'वे है। अबे वणा रे कई बाकी रियो। वणा रे तो सब लावणो[1] अवेरणो म्हूँ हीज कर लेवूँ हूँ, भला म्हारे शिवाय वणा रे दूजो कूण है ॥ २२ ॥

येऽप्यन्यदेवताभक्ता यजन्ते श्रद्धयान्विताः ।
तेऽपि मामेव कौन्तेय यजन्त्यविधिपूर्वकम् ॥ २३ ॥

जी भजे देवता दूजा, राख विश्वास भक्ति शूँ।
वी भी भजे म्हने हीज, परन्तू रीति रे वना ॥२३॥

ने जो दूसरा देवताँ रा भी भक्त है ने वणा री विश्वास शूँ आराधना करे है वो भी वा आराधना करे तो म्हारी है, पण हे कौन्तेय, वा वणा री वना[2] रीत री अँवळी भक्ति है ॥ २३ ॥

१—स्वर्ग (सुख) कामी तो स्वर्ग पावे ने मे'नत घणी पावे, पाछा पडे। म्हारा कडे जो वना मेँ'नत म्हने पावे ने सुख भी पावे।

२—वना रीत शूँ अतरी कठिनता कर ने जन्म मरण शूँ नी छूटे ने रीत शूँ सहज में छूट जावे ने फेर वी सुख तो म्हूँ वणा ने वना माँग्या ही घणा ही देवूँ हूँ। अठे स्पष्ट आप परमात्मा पणो बताय दियो है

अहं हि सर्वयज्ञानां भोक्ता च प्रभुरेव च ।
न तु मामभिजानन्ति तत्त्वेनातश्च्यवन्ति ते ॥ २४ ॥

म्हूँ हीज सब यज्ञाँ रो, भोगी मालक भी म्हुँ ही ।
म्हने मही नहीं जाणे, वाँ ने वो फळ नी मले ॥२४॥

वी असी मेंनत तो करे ने फेर असी ओछी अराधना क्यूँ करे ईं रो कारण यो है के सब यज्ञाँ रो भोगवा वाळो ने समर्थ मालक धणी हीज म्हूँ हूँ पण म्हने वी चोमेर नी जाणे अणी वास्ते वी शाँची वात शूँ टळ जावे है ॥ २४ ॥

यान्ति देवव्रता देवान् पितॄन्यान्ति पितृव्रताः ।
भूतानि यान्ति भूतेज्या यान्ति मद्याजिनोऽपि माम् ॥ २५॥

देवाँ रा भक्त देवाँ ने, पित्रॉ ने पित्रपूजक ।
भूताँ रा भक्त भूताँ ने, म्हारा पावे म्हने भज ॥२५॥

जी देवता री आराधना करे वी देवता ने पावे ।

संकीर्णता नी है । सार यो है के सब रो कर्ता म्हूँ हीज हे जावूँ हूँ, यद्यपि म्हूँ हीज हूँ तो भी यथार्थ ज्ञान नी होवा रो ने होना रो मरोड़ँ भेद है सोही सर्वत्र प्रसिद्ध है ।

१—म्हने तो नीज जाणे है दूज्यूँ अतिश्रम अल्प फळ क्यूँ लेता ।

पितरेशराँ (पूर्वजाँ) रा भक्त पूर्वजाँ ने पावे। भूताँ रा भक्त भूताँ ने पावे। म्हारा भक्त म्हारे आशरे सब काम करता थका म्हने भी पाय लेवे। म्हने पावणो अतरा ज्यूँ नी है म्हूँ तो थाँ शूँ अनोखो हूँ जणो आपाँ ने म्हारा में लगाय दीवो वणी रो सब म्हारो ने म्हारो पछे वणी रो व्हे गियो ॥ २५ ॥

पत्र पुष्पं फलं तोयं यो मे भक्त्या प्रयच्छति ।
तदहं भक्त्युपहृतमश्नामि प्रयतात्मनः ॥ २६ ॥

जो म्हने भाव शूँ अर्पे, पान फूल फळादिक ।
भक्ताँ रो म्हूँ दियो खावूं, म्हूँ भूखो भाव रो सदा ॥२६॥

पानो फल फळ ने जळ ज्यो कई वो भक्ति शूँ देवे वो ही म्हारे भोग लाग जावे है या बात सत्य है ॥ २६ ॥

यत्करोषि यदश्नासि यज्जुहोषि ददासि यत् ।
यत्तपस्यसि कौन्तेय तत्कुरुष्व मदर्पणम् ॥ २७ ॥

जो जो होमे तथा खावे, देवे जो जो करे सदा ।
जो जो तापे सबी सो सो, म्हारे ही कर अर्पण ॥ २७ ॥

हे कौंतेय, अवे थाको कई रियो, थूँ जो तपस्य होम दान अथवा खावो पीवो करे वोमी म्हारे हो अर्पण कर दियाँ कर। देख कतरी सूधी म्हारी प्राप्ति है ॥ २७ ॥

शुभाशुभफलैरेवं मोक्ष्यसे कर्मबन्धनैः।
संन्यासयोगयुक्तात्मा विमुक्तो मामुपैष्यसि॥ २८ ॥

कर्मां रा बन्ध यूँ छूटे, थारा शारा भला बुरा।
संन्यास योग यूँ साध, मुक्त व्हे पायगा म्हने ॥ २८ ॥

ने यूँ करवा शूं होज कर्मां रा फळ रा बन्ध शूँ थूँ छूट जायगा। संन्यास योग में थारो मन लाग जावेगा ने थूं मुक्त व्हे जायगा, म्हने पाय लेगा ॥२८॥

समोऽहं सर्वभूतेषु न मे द्वेष्योऽस्ति न प्रियः।
ये भजन्ति तु मां भक्त्या मयि ते तेषु चाप्यहम्॥२६॥

वैरी शेण नहीं म्हारे, समान सब तो पण।
वी म्हाँ में म्हूं रहूँ वाँ में, जो भजे भक्ति शूँ म्हने ॥२६॥

म्हारे तो कणी री भी रत्न पख नी है, म्हारे तो शारा ही शरीखा है। नी तो कोई शेण है ने नी जो वैरी है। पण जो भक्ति शूँ म्हने भज ने खुद

ही म्हारे नखे आय जावे जदी तो भलाँ वणाँ ने दूरा भी कूँकर करणो आवे। पछे तो वो म्हारे में मलया तो म्हूँ भी वा में मलयो होज ॥ २६ ॥

अपि चेत्सुदुराचारो भजते मामनन्यभाक् ।
साधुरेव स मन्तव्यः सम्यग्व्यवसितो हि सः ॥३०॥

जो वो महा दुराचारी, म्हारी भक्तीज आदरे ।
साधू ही जाणणो वींने, वींरो निश्चय उत्तम ॥ ३० ॥

पछे तो वो चावे जस्यो म्होटो पापी व्हे तो भी वणी शूँ म्हारी भती तो नी भागणी आवे ने यूँ ही के' नी जो म्हारी भक्ति करेगा वो ही पापी रे' जावे जदी पुरयात्मा फेर कस्यो व्हेगा। म्हारी जाण में तो वणोज जनम सुधारयो ने महाधर्मी व्हियो ॥ ३० ॥

क्षिप्रं भवति धर्मात्मा शश्वच्छान्ति निगच्छति ।
कौन्तेय प्रतिजानीहि न मे भक्तः प्रणश्यति ॥ ३१ ॥

झट वो होय धर्मात्मा, अखूट सुख पाय ले ।
नी म्हारा भक्त रो नाश, प्रतिज्ञा कर म्हूँ कहूँ ॥३१॥

हे कौन्तेय, या वात साँची है के धर्मात्मा

म्हने पावे पण अणी ने धर्मात्मा व्हेता देर ही कत-रीक लागे। वो तो धर्मात्मा रे ही आगे रो अखंड सुख पावा में ही देर नी लगावे जदी धर्मात्मा कठी नै चाल्या। यूँ देख ने देखे तो धर्मात्मा ई रो दीज नाम है। थूँ या नक्की कर ले, ना'म भेम राखे मती। म्हारो भक्त दूजो ज्यूँ कदी नी पड़े है॥३१॥

मां हि पार्थ व्यपाश्रित्य येऽपि स्यु पापयोनय ।
स्त्रिया वैश्यास्तथा शूद्रास्तेऽपि यान्ति परां गतिम् ॥३२॥

म्हारो ही आशरो ले ने, जो होवे पापजूण भी।
वाण्या कमीण नार्‍याँ भी, पाय लेवे पर पद ॥३२॥

हे पार्थ, म्हारो भक्त हेवा री देर है, पछे भलेई जन्म रो ही महापापी हे तोई कई अटकाव नी। काम तो म्हारो आशरो लेवा री देर है। लुगायाँ वाण्याँ ने शूद्र धरा धरू भी परगति म्हूँ हूँ जणी ने पाय लेवे है। वी भी ऊली कानी कठे ही नी ठे'रे ॥ ३२ ॥

किं पुनर्ब्राह्मणा पुण्या भक्ता राजर्षयस्तथा ।
अनित्यमसुखं लोकमिमं प्राप्य भजस्व माम् ॥ ३३ ॥

१—धर्म आपणा स्वभाव, यो हीज आत्मा जीवन, जीं रो रहे वो धर्मात्मा वाज आपणो सुभाव छोड़ पराया रो सुभाव ले वो ही पापात्मा वाज या वात धर्म रा नाम शूं जगाँ २ गीताजी में की' है॥

शुद्ध ब्राह्मण राजर्षि, याँरो तो कहणो कई।
झूँठो यो दुःख रो स्थान, जग जाण म्हने भज ॥३३॥

जदी फेर पवित्र ब्राह्मण ने राजऋषियाँ री तो बात ही कई के'णी। वो तो पावे हीज। क्यूँ के दुराचारी ही पावे वणी ने सदाचारी पावे अणी में घत्ताई हो कणी है। यूँ है जदी अबे अणी मोका ने नी चूकणो चावे क्यूँ के यो मनख जनम सदा ही नो रे' वेगा ने अणी संसार में तो सुख है हो नी। अणा दो वातां ने आछ्याँ गाढ़ी कर ने अबार ही म्हारे आशरे लाग जा, भंजन कर देर, करे मती ॥३३॥

मन्मना भव मद्भक्तो मद्याजी मां नमस्कुरु।
मामेवैष्यसि युक्त्वैवमात्मानं मत्परायणः ॥ ३४ ॥

ॐ तत्सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे राजविद्याराजगुह्ययोगो नाम नवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥

१—मनख अणा दो वातॉं में हीज रे' जावे है। एक तो वछे ने एक सुभीतो देखवा में। इ्णी अनित्य असुख सूँ आशा कीधी के ई भरोसे मत री' जे॥

भक्त होव म्हने चिंत, म्हने पूज म्हने नम।
म्हने ही पायगा लाग, म्हाँ में ही लहलोट ह्व ॥३४॥

ॐ तत्सत् इति श्री भगवद्गीता उपनिषद् में ब्रह्मविद्या योग शास्त्र में श्रीकृष्ण अर्जुन संवाद में राजविद्या राजगुह्य योग नाम नवमो अध्याय समाप्त ह्वियो ॥ ९ ॥

ने करणो कई पड़े है। म्हारे में मनवाळो ह्वणो म्हारो सेवा करणी, म्हने नमस्कार करणो। यूँ खुद आप ने ही म्हारे सुपरद कर देवेगा ने म्हाने हीज पाय लेवेगा। अतरी शूधी वात है के म्हारे में हीज लागा रे'णो, ने लागो कूण नी रे'. है पण माने नी ॥ ३४ ॥

ॐ वो साँचो है यूँ भगवान री भापी थकी उपनिषद् में ब्रह्मविद्या योगशास्त्र में श्रीकृष्ण अर्जुन रा संवाद में राजविद्या राजगुह्य योग नाम रो नवमो अध्याय पूरो ह्वियो ॥ ९ ॥

हूँ। अणा म्हारा वचनाँ री होड़ रा दूसरा वचन हे ही नी शके है। अस्या वचन भी म्हूँ थने अणी वास्ते के'वूँ हूँ के थूँ अणा ने सुण ने अन्तश थूँ राजी हे रियो है ने म्हूँ ज्यो थारो परम हित चावूँ हूँ, दूज्यूँ नी कूँ ॥ १ ॥

न मे विदुः सुरगणाः प्रभवं न महर्षयः।
अहमादिर्हि देवानां महर्षीणाञ्च सर्वशः ॥ २ ॥

म्हारी उत्पत्ति नी जाणे, देवता ने महाऋषी।
म्हूँ ऋषीशर देवाँ रो, सबाँ रो, आदि कारण ॥२॥

अतरो हेवा वाळी चीजाँ ज्यूँ म्हने भी जाणवा री इच्छा करणो छोटी भूल है, सब देवताँ ने महर्षि भी म्हारो हेणो जाण ही नी शक्या ने अनादि रो आदि जाण ही कूँकर शके पण म्हूँ तो

तो विभूति योग रे शिवाय प्रभु ने पावा रो और उपाय ही नी हे शके। जदीज के'वे के शंख रे साथे बजावा वाळा ने देख। कतरा ही थाँने भणी थूँ न्यारो देखवा री करे वणा ने मे'नत घणी है ने लाभ तो यो छीज है। यूँ ही कोरी विभूति में उलझ रे'णो अनुचित हैया वात उपरला ३।४। आदि श्लोकाँ थूँ समझाई है ने विभूति रा न्यारा नाम लेने घणाँ रे साथे आँपणी याद करा,ई है। सब में आत्मा ने देखणो यो मात्र है।

सब देवताँ रो ने महा ऋषियाँ रो चोमेर शूँ रत्ती२ रो आदि हूँ हीज ॥ २ ॥

> *यो मामजमनादिञ्च वेत्ति लोकमहेश्वरम् ।*
> *असम्मूढः स मर्त्येषु सर्व पापैः प्रमुच्यते ॥ ३ ॥*

म्हने जाणे अनादी ज्यो, अजन्मा सब रो धणी ।
वो छूटे सब पापाँ शूँ, नराँ में बुद्धिमान वो ॥ ३ ।

अबे म्हारो जाणणो यो हीज ह्वियो के जनम्य रे साथे अजनम्यो, आदि वाळाँ रे साथे अनादि अनीश्वर जगत रे साथे महेश्वर जाण लेणो ई म्हारो जाणणो है । अणी शिवाय री खटपट में पड़ेगा तो हाते कई नी आवणो है । यूँ नी जाणे हीज म्हने जाणे वो हीज शमझणो मनख है ने वो हीज अमर ह्वे सब पापाँ शूँ छूट जावे है ॥३।

> *बुद्धिर्ज्ञानमसम्मोहः क्षमा सत्यं दमः शमः ।*
> *सुखं दुःखं भवोऽभावो भयञ्चाभयमेव च ॥ ४ ॥*

बुद्धी ज्ञान क्षमा साँच, ओशान् शम ने दम ।
है न है सुख ने दुःख, डरणो डरणो नहीं ॥ ४ ।

अबे कतरा टो म्हने बुद्धि, ज्ञान, सावधानता, क्षमा, साँच, इन्द्रियाँ री रोक ने मन री रोक, सुख दुःख हेणो, नी व्हेणो, भय, अभय होज ने ॥ ४ ॥

अहिंसा समता तुष्टिस्तपो दानं यशोऽयशः ।
भवन्ति भावा भूतानां मत्त एव पृथग्विधाः ॥ ५ ॥

स्तुती निन्दा दया दान, सन्तोष समता तप ।
म्हारा शूँ हीज जीवाँ रा, न्यारा न्यारा शुभाव ई ॥५॥

अहिंसा, समता, तुष्टि, ई तरे' रो सन्तोष, तपस्या, दान, यश अपयश, हीज मान बैठे है घा कतरी म्होटी भूल है। ई सब न्यारा न्यारा है। म्हूँ भी कई न्यारो न्यारो हे शकूँ हूँ। ई तो वणे जणा रा भाव है। म्हूँ कई वणे ज्यो हूँ। ई म्हारे शूँ ही हे जतरे कई ई म्हूँ हे शकूँ हूँ ॥ ५ ॥

महर्षयः सप्त पूर्वे चत्वारो मनवस्तथा ।
मद्भावा मानसा जाता येषां लोक इमाः प्रजाः ॥ ६ ॥

चार ही मनु पे'ली रा, सात ही जी महाऋषी ।
ई म्हारा मन रा भाव, यां रा शा'रा चराचर ॥ ६ ॥

पे'ली शूँ भी पे'ली रा, सात हो जी महाऋषि ने चार मनु है पण ई भी जदो म्हारा भाव है अर्थात् म्हारा मन शूँ ह्विया है जदो अणाँ शूँ ह्विया थका ई लोक ने वणाँ शूँ ह्विया थका ई जीव जन्त म्हूँ कूँकर हे शकूँ पण मनख वे शमझ शूँ याँ ने दीज म्हने शमझ ले है ॥६॥

एतां विभूतिं योगं च मम यो वेत्ति तत्त्वतः ।
सोऽविकम्पेन योगेन युज्यते नात्र संशयः ॥ ७ ॥

आछयाँ जो जाण ले कोई, अणी वैभव योग ने ।
वो ही अचल योगी है, ई मे सन्देह है नहीं ॥ ७॥

पण जो अणी ने म्हारी विभूति शमझे अथवा म्हारो अणा रे साथे शुमरण करे' ठीक तरे' शूँ जाण ने, तो वणी रो अखंड योग (समाधि) हे जाय अर्थात् वो म्हारे शूँ मिल जावे है अणी में बिलकुल भे'म नी है ॥ ७ ॥

अहं सर्वस्य प्रभवो मत्तः सर्वं प्रवर्त्तते ।
इति मत्वा भजन्ते मां बुधा भाव समान्विताः ॥ ८ ॥

म्हारे शूँ सब ही होवे, चाले म्हाँ शूँ सवी जग ।
मल्या ई भाव में भक्त, म्हने यूँ जाण ने भजे ॥८॥

म्हूँ हीज सबाँ री उपजवा री जगाँ हूँ ने म्हारे शूँ हीज सब चाले है। यूँ जाण ने सुजाण भावना शूँ म्हने भजे है क्यूँ के यूँ जाण्या केड़े तो म्हारे भजन ही भजन है ॥ ८ ॥

मच्चित्ता मद्गतप्राणा बोधयन्तः परस्परम् ।
कथयन्तश्च मां नित्यं तुष्यन्ति च रमन्ति च ॥ ९ ॥

म्हा में ही चित्त ने प्राण, माँहो माँहे प्रबोधता ।
म्हने ही कहता नित, म्हा में ही राच ने रमे ॥ ९ ॥

पछे तो वणा रो चित्त भी म्हारे में हीज आय जावे है ने और तो कई वणा रो जीवणो भी म्हारे में हीज हे जावे है। पछे तो दीवा शूँ दीवा री नाईं हर कणी ने ही वी आँपणे शरीखा करता फरे है। यो हीज वणा रो काम हे जाय है। क्यूँ के वणाँ रे तो म्हारीज चर्चा सर्वदा रे'वे। और हे ने और री वात करे। फेर वणाँ ने म्हारी चर्चा में हीज सन्तोष शान्ति मले है ने वणी में हीज रम्या करे है ज्यूँ जाळ में माछळा हे ज्यूँ ॥ ९ ॥

तेषां सततयुक्तानां भजतां प्रीतिपूर्वकम् ।
ददामि बुद्धियोगं तं येन मामुपयान्ति ते ॥ १० ॥

ज्याँ रो वास सदा म्हॉ में, जी भजे प्रीति शूँ म्हेने
वणा ने बुद्धि देवूँ वा, जीं शूँ वी पायले म्हने ॥१०॥

वी म्हारे में निरन्तर लागा रे' है ने आनन्द शूँ म्हारो भजन करे है जदी म्हूँ भी वणाँ ने अश्यो बुद्धि योग देऊँ के जणी शूँ वी म्हारे में वत्ता वत्ता नखे रे'वे जीं शूँ वणाँ ने फेर म्हारे में वत्तो रे'णो शुहावे । यूँ म्हारो देणो ने वणा रो लेणो कदी खूटे ही नी है अश्यो म्हारो ने वणा रो प्रेम वदे है ॥ १० ॥

तेषामेवानुकम्पार्थमहमज्ञानजं तमः ।
नाशयाम्यात्मभावस्थो ज्ञानदीपेन भास्वता ॥ ११ ॥

आत्मा म्हूँ सब रो तोभी, अश्या ही पे दया करूँ ।
अज्ञान रो हरूँ सारो, अँधारो ज्ञान जोत शूँ ॥११॥

दूज्यूँ तो म्हूँ सबाँ में ने सब म्हारे में रे' ने भी म्हने नी देखे तो म्हारे ही कई गरज पड़ी है । म्हूँ भी म्हारा भक्ताँ रो होज आत्मा हूँ ने वणा

रो अज्ञान रो अन्धारो मटाऊँ हूँ क्यूँ के वणा पे म्हूँ महेरवानी करणो चावूँ हूँ, अणी शिवाय और महेरवानी है ही कई जो ने म्हूँ करूँ। म्हूँ तो व[illegible]रो आत्मा हियो थको अखण्ड प्रकाश मान ज्ञान रो दीवो दे ने हमेशाँ रे वास्ते अज्ञान रो अन्धारो मटाय देऊँ हूँ, पछे वी कूँकर कठे भमे॥ ११ ॥

अर्जुन उवाच ।

पर ब्रह्म परं धाम पवित्रं परमं भवान् ।
पुरुष शाश्वतं दिव्यमादिदेवमज विभुम् ॥ १२ ॥

अर्जुण कही ।

परंब्रह्म प्ररंधाम, आप पूरा पवित्र हो ।
अज आदि, अनोखा हो, सदा पुरुष व्यापक ॥१२॥

अर्जुण अरज करी, हे भगवान्, आप ने सबाँ शूँ बड़ा, ने न्यारा ने परम तेज ने परम पवित्र, अज, अलौकिक, आदि, व्यापक, एक शरीखा रे'वा वाळा पुरुष के'वे है या वात म्हारे ठीक जच गी॥ १२ ॥

अहुस्त्वामृषयः सर्वे देवर्षिर्नारदस्तथा ।
असितो देवलो व्यासः स्वयं चैव ब्रवीषि मे ॥ १३ ॥

यूँ कहे ऋषि शारा ही, असित व्यास [illegible] ।
कहे नारद भी यूँ ही, पोते ही आप भी कहो ॥१३॥

यूँ आप ने एक दो जणा अश्या वश्या हीज नी के'वे है, पण शारा ही महाऋषि के'वे है ने देवता में जो नारद ऋषि है वी तथा असित, देवल, व्यास जी भी या हीज वात के' है। फेर सबाँ री आत्मा खुद आप हीज हुकम कर रिया हो, अबे म्हने कीने पूछणो बाकी रियो आप म्हने हुकम करो वीं में कई भे'म ॥ १३ ॥

सर्व मेतदृतमन्ये यन्मा वदसि केशव ।
न हि ते भगवन्व्यक्ति विदुर्देवा न दानवा ॥ १४ ॥

सो सभी साँच मानूँ म्हूँ, जो कहो आप केशव ।
देव दानव कोई भी, नी जाणे रूप आप रो ॥ १४ ॥

अणी वास्ते हे केशव, जो जो आप म्हने हुकम करो वा सब वात म्हूँ साँच हीज मानूँ हूँ । साँची ही देवता वा दानव, आपने अतरी चीजाँ ज्यूँ तो

कोई नी जाण शके या वात नक्कीज है ॥ १४॥

स्वयमेवात्मनात्मानं वेत्थ त्वं पुरुषोत्तम ।
भूतभावन भूतेश, देवदेव जगत्पते ॥ १५ ॥

आप शूँ आप ही जाणो, आप ने पुरुषोत्तम ।
जग कर्ता जगन्नाथ, देवां रा देव ईश्वर ॥ १५ ॥

हे पुरुषोत्तम आप ने जो कोई जाण तो हेगा तो वी खुद आप हीज आपने जाणता होगा । और री तो या शामर्थ है ही नी शके जो आप ने जाणे। क्यूँ के जतरी चीजाँ वणे सवाँ ने आप हीज भावना शूँ जाणो हो, ने सवाँ रा मालक ने आधार आप हो। सब देवताँ रा ही देवता आप हीज हो। आप ही आखा जगत् पति (जगदीश) हो ॥१५॥

वक्तुमर्हस्यशेषेण दिव्या ह्यात्मविभूतयः ।
याभिर्विभूतिभिर्लोकानिमांस्त्वं व्याप्य तिष्ठसि ॥१६॥

कहो वो आपरो शारो, अनोखो योग वैभव ।
जणी वैभव शूँ आप, रेवा व्याप जहान में ॥१६॥

१—विज्ञातारमरे केन विजानीयादिति श्रुतेः ॥

अणी वास्ते आप रा सब वैभव ने आप हीज खुद हुक्म करो क्यूँ के आप रो वैभव भी अलौकिक है, वीं ने भी और कूण के शके। जरं वैभव शूँ आप अणी आखा जगत में व्यापक हे रिया हो शो सब हुकम करो ॥ १६ ॥

कथ विद्यामह योगिस्त्वां सदा परिचिन्तयन् ।
केषु केषु च भावेषु चिन्त्योऽसि भगवन्मया ॥ १७ ॥

की तरे' आप ने जाणूँ, सदा ही चिन्ततो थको ।
कीं की में भगवत् चिन्तूँ, म्हूँ योगीश्वर आप ने ॥१७॥

हे महा योगी, सवाँ में मल्या रे'वा वाळा आप ने म्हूँ कूँकर ओळख शकूँ, क्यूँ के आप ने तो कोई जाण ही नी शके है या वात सब तरे' शूँ शावत हे गी है ने आप रा शुमरण कीदां वना भी छुटकारो नी है। अणी वास्ते हे भगवान्, मरयाँ रे ऊपरे आप रो नाम लेवाय ज्यूँ निरंतर आप रो शुमरण हे तो रे'वे अस्या जो ई आप रा मन रा भाव है अणाँ रे साथे कणी कणी में आप री याद म्हने करणी चावे ॥ १७ ॥

विस्तरेणात्मनो योगं विभूतिञ्च जनार्दन ।
भूयः कथय तृप्तिर्हि शृण्वतो नास्ति मेऽमृतम् ॥ १८ ॥

कहो विस्तार शूँ फेर, महिमा योग आप रो ।
नाथ अमृत शूँ ई शूँ, धापूँ नी शुणतो थको ॥ १८ ॥

[illegible]त आप म्हने आछी तरे' शूँ विस्तार कर ने शमभाय दीजो क्यूँ के अणी शूँ दीज आप री कृपा हो शके है । हे जनार्दन, आप री विभव ने वणी में आप रो मल्यो रे'णो, फेर आप हुकम करो क्यूँ के पे'ली भी आप यो हुक्म कीधो हो, पण या वात है के अणी अमृत ने शुणतो थको म्हूँ धापूँ नी हूँ, क्यूँ के म्हारो जन्म मरण रो दुःख मटवा रो यो ही उपाय है ॥ १८ ॥

श्री भगवानुवाच ।

हन्त ते कथयिष्यामि दिव्या ह्यात्मविभूतयः ।
प्राधान्यतः कुरुश्रेष्ठ नास्त्यन्तो विस्तरस्य मे ॥ १६ ॥

श्री भगवानआज्ञाकरी ।

घणी आछी कहूँ म्हारी, अनोखी महिमा थने ।
पार विस्तार रो नी पी, सार सार शुणाय दूँ ॥ १६ ॥

श्री भगवान हुकम कीधो, हे कौरवाँ में श्रेष्ठ, शाँची ही थें श्रेष्ठ वात ने पकड़ लीधी अणी शूँ म्हूँ

घणो राजी ह्वियो । ले भाई, अबे तो म्हारी अलौकिक महिमा थने के' दूँगा शो थूँ ध्यान दे ने शुण जे, पण थें कियो के विस्तार शूँ की'[illegible] सब महिमा जो के'वा बेठूँ तो वणी रो पार ही नी आवे, अणी वास्तें मुख्य मुख्य के'वूँ शो थूँ शमझणो है शो यूँ ही सब शमझ लीजे ने अणी शिवाय और उपाय भी नी है ॥ १९ ॥

अहमात्मा गुडाकेश सर्वभूताशयास्थितः ।
अहमादिश्च मध्यञ्च भूतानामन्त एव च ॥ २० ॥

म्हूँ ही आत्मा गुडाकेश, हिया में सब रे वशूँ ।
आद मध्य तथा अन्त, सबाँ रो जाण थूँ म्हने ॥२०॥

हे गुडाकेश, शुण, सबाँ रे हृदय में जो आत्मा थिर ह्वे रियो है, जणीं रे आशरे हीज सब काम ह्वे है, वो सबाँ में आत्मा म्हूँ हीज हूँ। अर्थात् थारे शाथे हीज म्हूँ भी हूँ। या भी कई भूलवा जशी वात है, कदी नी। फेर देख, हरेक वस्तु री आदि मध्य ने अन्त ह्वे है शो ई तीन ही वार्तां म्हूँ व्हेवूँ जदी कणी वगत म्हारो शुमरण नी व्हे शके, ने ई तो म्हूँ हूँ हीज निश्चय ॥ २० ॥

आदित्यानामहं विष्णुर्ज्योतिषां रविरंशुमान् ।
मरीचिर्मरुतामस्मि नक्षत्राणामहं शशी ॥ २१ ॥

[illegible]याँ में म्हुँ ही विष्णु, उजाळा माय सूरज ।
मरीची पवना मॉय, तारों मे चन्द्रमा म्हुँ ही ॥२१॥

आदित्याँ में विष्णु म्हूँ हूँ, प्रकाशमाना में किरणाँ वाळो सूरज, मरताँ में मरीचि हूँ, नक्षत्राँ में म्हूँ चन्द्रमाँ हूँ ॥ २१ ॥

वेदानां सामवेदोऽस्मि देवानामस्मि वासवः ।
इन्द्रियाणां मनश्चास्मि भूतानामस्मि चेतना ॥ २२ ॥

देवाँ रे माँय हूँ इन्द्र, वेदों में सामवेद हूँ ।
मन हूँ इन्द्रियॉ मॉय, प्राणियाँ मॉय चेतना ॥२२॥

वेदाँ में सामवेद हूँ, देवाँ में इन्द्र हूँ, इन्द्रियाँ में मन हूँ, जीवजन्ताँ में चेतना हूँ ॥ २२ ॥

रुद्राणां शङ्करश्चास्मि वित्तेशो यक्षरक्षसाम् ।
वसूनां पावकश्चास्मि मेरुः शिखरिणामहम् ॥ २३ ॥

कुबेर यक्ष रक्षाँ में, रुद्राँ रे माँय शंकर ।
सुमेर पर्वताँ में हूँ, वसुवाँ माँय पावक ॥२३॥

रुद्राँ में शङ्कर हूँ, यक्ष राक्षसाँ में कुबेर हूँ वसुवाँ में पावक हूँ। मगराँ में सुमेरु हूँ ॥ २३ ॥

पुरोधसां च मुख्यं मां विद्धि पार्थ बृहस्पतिम्।
सेनानीनामहं स्कन्दः सरसामस्मि सागरः ॥ २४ ॥

परो'ताँ में म्हने मुख्य, जाण पार्थ बृहस्पती।
सेना नायक में स्कन्द, तळावाँ में समुद्र हूँ ॥२४॥

हे पार्थ, परो'ताँ में भी म्हने ही मुख्य बृह स्पति जाण, सेना रा मुखियाँ में स्कन्द (स्वामी कार्तिक) हूँ, सरोवराँ में सागर हूँ ॥ २४ ॥

महर्षीणां भृगुरहं गिरामस्म्येकमक्षरम्।
यज्ञानां जपयज्ञोऽस्मि स्थावराणां हिमालयः ॥ २५ ॥

वाणीं रे माँय ॐकार, म्हूँ हूँ भृगु महा ऋषि।
जप हूँ सब यज्ञाँ में, थिराँ माँय हिमाचल ॥२५॥

महा ऋषियाँ में म्हूँ भृगु ने वाणी में एक अक्षर हूँ, यज्ञाँ में जप यज्ञ हूँ, अचळाँ में हिमालय (हेमाळो) हूँ ॥ २५ ॥

अश्वत्थः सर्ववृक्षाणां देवर्षीणांश्च नारदः ।
[illegible]र्वाणां चित्ररथः सिद्धाना कपिलो मुनिः ॥ २६ ॥

[illegible] सब रूँखाँ में, देवर्षी माँय नारद ।
म्हूँ चित्ररथ गन्धर्व, मुनी कपिल सिद्ध में ॥२६॥

सब वृक्षाँ में पीपळो ने देवताँ रा ऋषियाँ में नारद हूँ, गन्धर्वाँ में चित्ररथ हूँ, सिद्धाँ में कपिल मुनि हूँ ॥ २६ ॥

उच्चैःश्रवसमश्वाना विद्धि माममृतोद्भवम् ।
ऐरावतं गजेन्द्राणां नराणा च नराधिपम् ॥ २७॥

उच्चैःश्रवा म्हने जाण, घोडाँ रे माँय अर्जुण ।
म्हूँ ऐरावत हात्याँ में, राजा मनख माँय ने ॥२७॥

घोड़ाँ में अमृत शूँ निकळ्यो थको म्हने उच्चैः श्रवा जाण, वड़ा वड़ा हात्याँ में ऐरावत ने मनखाँ में वणाँ रो मालक (राजा) जाण ॥ २७ ॥
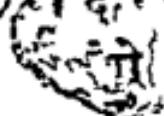
आयुधानामहं वज्रं धेनूनामस्मि कामधुक् ।
प्रजनश्चास्मि कन्दर्पः सर्पाणामस्मि वासुकिः ॥ २८ ॥

वज्र हूँ आवधाँ माँय, गायाँ में कामधेनु हूँ ।
साँपाँ मे वासुकी म्हूँ हूँ, काम हूँ जनमाववा ॥२८॥

आवधाँ में म्हूँ वज्र हूँ ने गायाँ में कामधेनु हूँ, उपजावा वाळा में कन्दर्प (काम) हूँ साँपाँ में वासुकी हूँ ॥ २८ ॥

अनन्तश्चास्मि नागाना वरुणो यादसामहम् ।
पितॄणामर्यमा चास्मि यमः संयमतामहम् ॥ २९ ॥

प्रचेता जळ जीवाँ में, नागाँ में शेष नाग हूँ ।
पित्राँ में अर्यमा हूँ म्हूँ, दंड दायक में यम ॥२९॥

ने नागाँ में अनन्त हूँ, जळाँ रा देवाँ में वरुण हूँ, पितराँ में अर्यमा हूँ ने रोक में यम हूँ ॥ २ ॥

प्रल्हादश्चास्मि दैत्याना कालः कलयतामहम् ।
मृगाणाञ्च मृगेन्द्रोऽहं वैनतेयश्च पक्षिणाम् ॥ ३० ॥

हिंशाव्याँ में मुँही काल, दैंताँ में प्रहलाद हूँ ।
पशुवाँ माँय तू नाहर, म्हूँ हूँ गरुड पक्षि में ॥३०॥

दैंताँ में प्रहलाद हूँ, विचारवा वाळा में काळ (समय) हूँ, (अथवा गणती करवा वाळा में काळ) पशुवाँ में न्हार भी म्हूँ हूँ ने पंखेरू में गरुड़ ॥ ३० ॥

पवनः पवतामस्मि रामः शस्त्रभृतामहम् ।
[illegible] मकरश्चास्मि स्रोतसामस्मि जाह्नवी ॥ ३१ ॥

[illegible] हूं शस्त्रधारयाँ में, दोड़वा माँय वायरो ।
नदियाँ मॉय गंगा हूं, मच्छॉ रे माँय - मंगर ॥३१॥

दोड़वा वाळा में वायरो हूँ, आवध राखवा वाळां में राम हूँ, मच्छा में मंगर भी म्हूँ हूँ, नदयाँ में गङ्गा हूँ ॥ ३१ ॥

सर्गाणामादिरन्तश्च मध्यं चैवाहमर्जुन ।
अध्यात्मविद्या विद्यानां वादः प्रवदतामहम् ॥ ३२ ॥

सृष्टि रो आदि ने अन्त, मध्य म्हूँ हीज अर्जुन ।
अध्यात्म विद्या विद्या में, बोली में निरणो मुँही ॥३२॥

हे अर्जुण, और कई जो जो संसार वणे है वणाँ रो आद अन्त ने मध्य भी म्हूँ हीज हूँ, सब विद्या में अध्यात्म विद्या ने बोलवा वाळाँ में वाद हूँ ॥ ३२ ॥

अक्षराणामकारोऽस्मि द्वन्द्वः सामासिकस्य च ।
अहमेवाक्षयः कालो धाताहं विश्वतोमुखः ॥ ३३ ॥

द्वन्द्व हूँ म्हूँ समासाँ में, अक्षराँ में अकार हूँ।
अखूट काल हूँ म्हूँ ही, आधार सबरो म्हूँ ही॥३३॥

अक्षराँ में अकार हूँ, समासाँ में द्वन्द्व हूँ, अखूट काळ भी म्हूँ हीज हूँ, चोमेर मूँडा वाळो विधाता म्हूँ हूँ ॥ ३३ ॥

मृत्युः सर्वहरश्चाहमुद्भवश्च भविष्यताम् ।
कीर्तिः श्रीर्वाक्च नारीणां स्मृतिर्मेधा धृतिः क्षमा ॥ ३४ ॥

मोत हूँ कोश लेवा में, भाग में बड भाग हूँ।
लुगायाँ में म्हने जाण, सात ही धर्म री त्रियाँ ॥३४॥

सब ने शमेटवा वाळी मोत म्हूँ हूँ ने उत्पत्ति भी उपजे वधे जणा री म्हूँ हूँ। लुगायाँ में कीर्ति, शोभा, बोली, याद, भूलणो नी, धीरज, क्षमा, (खमणो) ई सात ही वाताँ हूँ ॥ ३४ ॥

बृहत्साम तथा साम्नां गायत्री छन्दसामहम् ।
मासानां मार्गशीर्षोऽहमृतूनां कुसुमाकरः ॥ ३५ ॥

मामाँ माँय बृहत्साम, गायत्री छन्द माँय हूँ।
मार्गशीर्ष महीना में, ऋतुवाँ में वसन्त हूँ ॥३५॥

सामाँ में बृहत्साम, यूँ ही छन्दाँ में गायत्री हूँ, महीनाँ में मगशर ऋतुवाँ में वसन्त हूँ ॥ ३५ ॥

[illegible]यतामस्मि तेजस्तेजस्विनामहम् ।
जयोऽस्मि व्यवसायोऽस्मि सत्वं सत्ववतामहम् ॥३६॥

तेज हूँ तेजवाळाँ में, छळियाँ माँय हूँ जुवो ।
उपाय जीत हूँ म्हूँ ही, सज्जनाँ में भला पणो ॥३६॥

छळवा वाळाँ में जुवो, तेजस्वियाँ में तेज हूँ, हिम्मत वाळा में म्हूँ हिम्मत हूँ और वणी हिम्मत शूँ हेवा वाळा उपाय ने जीत म्हूँ हूँ हीज ॥ ३६ ॥

वृष्णीना वासुदेवोऽस्मि पाण्डवानां धनञ्जयः ।
मुनीनामप्यहं व्यासः कवीनामुशना कविः ॥३७॥

यादवाँ में म्हूँ ही कृष्ण, पाण्डवाँ माँय अर्जुन ।
मुन्याँ रे माँयने व्यास, कव्याँ रे माँय शुक्र हूँ ॥३७॥

वृष्णी (यादवाँ) में वासुदेव हूँ, पाण्डवाँ में धनञ्जय हूँ, मुनियाँ में भी व्यास ने कवियाँ में उशना (शुक्राचार्य) कवि हूँ ॥ ३७ ॥

दण्डो दमयतामस्मि नीतिरस्मि जिगीषताम् ।
मौनं चैवास्मि गुह्यानां ज्ञानं ज्ञानवतामहम् ॥ ३८ ॥

दबावा मॉय हूँ दण्ड, जीत रे माँय नीत हूँ।
छुप्याँ रे माँय हूँ मौन, ज्ञान हूँ ज्ञानवान में ॥३८॥

दमन करवा में दण्ड, जीतवा वा[illegible] ति हूँ, छुप्याँ में मून भी म्हूँ हूँ हीज, ज्ञानवानाँ में शाँचो ज्ञान हूँ ॥ ३८ ॥

यच्चापि सर्वभूताना बीज तदहमर्जुन ।
न तदस्ति विना यत्स्यान्मया भूत चराचरम् ॥ ३९ ॥

जो कोई बीज शाराँ रो, शो म्हूँ ही एक अर्जुन।
कठेई भी कई कोई, होवे म्हारे वना नहीं ॥३९॥

हे अर्जुण, यूँ कठा तक कियाँ जाऊँ, जतरो कई थने जणावे है वणाँ सबाँ रो बीज तो म्हूँ हूँ हीज। चराचर में अश्यो कई नो है ज्यो म्हारे वना ठे'रे ॥ ३९ ॥

नान्तोऽस्ति मम दिव्याना विभूतीना परन्तप ।
एष तूद्देशत प्रोक्तो विभूतेर्विस्तरो मया ॥ ४० ॥

अनोखी महिमा म्हारी, अणी रो पार है नहीं।
यो तो वैभव विस्तार, सार सार कह्यो थने ॥४०॥

हे परन्तप, म्हारी ऊँची ऊँची महिमा रो ही

पार नी आवे जदी सब तो कूँकर केवाय शके ने यो जो इं कियो है यो तो ओळखावा रे वास्ते थो[illegible] ले लीधा है, अणी शूँ थूँ ईं रो अठो ठो [illegible] शकेगा के यूँ विस्तार करे तो कतरोक वदे ॥ ४० ॥

यद्यद्विभूतिमत्सत्त्वं श्रीमदूर्जितमेव वा ।
तत्तदेवावगच्छ त्वं मम तेजोंऽशसम्भवम् ॥ ४१ ॥

जो जो प्रताप शोभा है, दीखे जो जो वड़ा पणो ।
वीं वीं ने थूँ हुवो जाण, म्हारा ही तेज अंश शूँ ॥४१॥

अवे म्हारा वैभव ने ओळखवा री एक शूधी कूँची वताऊँ हूँ के ज्यो ज्यो थने वस्ताई वाळी व्रात दीखे, शोभा सहित दीखे, ने वदी थकी दीखे, वणी वणी ने थूँ म्हारा तेज रा अंश शूँ ही थकी हीज जाण लीजे म्हारा तेज रो अंश वीं में देख लियाँ कर ॥ ४१ ॥

अथवा बहुनैतेन किं ज्ञातेन तवार्जुन ।
विष्टभ्याहमिदं कृत्स्नमेकांशेन स्थितो जगत् ॥ ४२ ॥

ॐ तत्सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे विभूतियोगो नाम दशमोऽध्यायः ॥१०॥

अथवा यूँ नरो जाण, थने है करणो कई।
अनन्त जग यो फेल्यो, म्हारा छोटाक अंशा्रं ॥४२॥

ॐ तत्सत् इति श्रीमद्भगवद्गीता उपनिषद् [illegible]द्या
योगशास्त्र में श्री कृष्ण अर्जुण संवाद में विभूति-
योग नाम दशमो अध्याय समाप्त ह्वियो ॥१०॥

अथवा हे अर्जुण, म्हारा मित्र, थने अतरो ही परिश्रम करवा री कई आवश्यकता है, यो तो फेर भी विस्तार हीज रियो है ने नरोई है म्हूँ तो थने शूधी शूँ शूधी ने आछी शूँ आछी वात वतावणो चाऊँ हूँ। ई शूँ थूँ तो या निज वात हीज पकड़ले के यो जो थने जणावे अणी आखा ही संसार ने माँय वारणे वींटोळ ने म्हारा एक छोटा क अंश में म्हें हीज धारण कर राख्यो है ने म्हूँ तो थिर हीजहूँ ॥ ४२ ॥

ॐ वो साँचो यूँ भगवान री भाषी थकी उपनिषद्
ब्रह्मविद्या योगशास्त्र में श्री कृष्ण अर्जुण रा
संवाद में विभूतियोग नाम रो दशमो
अध्याय पूरो ह्वियो ॥ १० ॥

ॐ

एकादशोऽध्यायः

अर्जुन उवाच ।

मदनुग्रहाय परमं गुह्यमध्यात्मसंज्ञितम् ।
यत्त्वयोक्तं वचस्तेन मोहोऽयं विगतो मम ॥ १ ॥

ॐ इग्यारमो अध्याय प्रारम्भ ।

अर्जुण कही ।

कृपा कर कह्यो श्रेष्ठ, छुप्यो अध्यात्म ज्ञान ज्यों ।
अणी ने शुण यो म्हारो, भ्रम भाग गयो अबे ॥ १ ॥

ॐ इग्यारमो अध्याय प्रारम्भ ।

अर्जुण अर्ज कीधी, के जीं ने अध्यात्मज्ञान के' है ने जो घणो गुप्त ज्ञान है, जणी शूँ वत्तो कोई नी है, वो ही म्हारे भला रे वास्ते आप ई वचन किया जणा में हुकम कीधो ने अणी शूँ म्हारो अनन्त जुगां रो अज्ञान वात री वात में कठी रो

कठी परो गियो। म्हारो यो अज्ञान आप शिवाय कूण मिटाय शके है ॥ १ ॥

भवाप्ययौ हि भूताना, श्रुतौ विस्तरश[illegible]
त्वत्तः कमलपत्राक्ष, माहात्म्यमपि चाव्यय[illegible] २ ॥

शुणी संसार सारा री, नाश उत्पत्ति आप शूँ।
अखूट महिमा भी था, शुणी विस्तार शूँ अठे ॥ २ ॥

हे कमळ री पांखडी जश्या नेत्रवाळा भगवान, म्हने या खबर नी ही, के अतरा ई पदार्थ कणी शूँ वणे ने कणी शूँ मटे। अबे या विस्तार शूँ शुणीधी, के यो काम तो आप शूँ हीज व्हे रियो है और या महिमा आप री सदा अखंड है ईं ने म्हें आप शूँ शमझ लीधी ॥ २ ॥

एवमेतद्यथात्थत्वमात्मानं परमेश्वर ।
द्रष्टुमिच्छामि ते रूपमैश्वरं पुरुषोत्तम ॥ ३ ॥

आप रे वासते आप, जो कहो सो सही सबी।
अश्यो म्हूं देखणो चावूं, आप रो रूप माधव ॥ ३ ॥

हे परमेश्वर, आप रे वास्ते आप ज्यो हुकम की धो, वीं में रत्ती भी कशर नी, वास्तव में आप

अश्या हीज हो, जश्या आप हुकम कर रिया हो। अणी में बिलकुल संदेह जशी बात ही नी री' है पण [illegible], हे पुरुषोत्तम, आप रा अश्या ईश्वर रूप रा दर्शणां री म्हारी इच्छा है। ईं में सन्देह है, या बात नो है, पण अणी में विश्वास व्हे गियो, जीशूँ या इच्छा व्ही है ॥ ३ ॥

मन्यसे यदि तच्छक्यं मया द्रष्टुमिति प्रभो ।
योगेश्वर ततो मे त्वं दर्शयात्मानमव्ययम् ॥ ४ ॥

देखावा जोग जो जाणो, आप रो रूप वो म्हने ।
तो योगीश्वर देखावो, आप रूप अखंड ने ॥ ४ ॥

परंतु हे प्रभु म्हारा में वणी रूप ने देखवा री योग्यता[2] आप ने दीखतो व्हे, तो हे योगेश्वर, आप रा वणी अविनाशी शरूप री भी झांकी कराय

१—स्वयं भगवान हुकम कीधो—आत्म साक्षी सब शूँ वत्ती है, आप्तवाक्य ईं रो ही नाम है, "विषयवती वा प्रवृत्तिरुत्पन्ना मनस स्थिति निबन्धिनी" योग सूत्र पा १ सू० ३५ रा भाष्य में लिखो है, के दृढ़ता रे वास्ते कोई विशेष प्रत्यक्ष करणो आवश्यक है, यो वठे देखणो चावे ॥

२—आप तो अश्या हीज हो, पण अबे अश्या रूप रा दर्शण नी व्हे शके, तो म्हने म्हारी ज अयोग्यता मानणी चावे ॥

दो। आप रा अश्या रूप ने आप ही ज बताय श्को हो ॥ ४ ॥

श्री भगवानुवाच ।

पश्य मे पार्थ रूपाणि शतशोऽथ सहस्रशः ।
नानाविधानि दिव्यानि, नानावर्णाकृतीनि च ॥ ५ ॥

श्री भगवान आज्ञा कीधी ।

हजारों शेंकडों रूप, म्हारा ई देख अर्जुण ।
अनेकों रंग रूपॉं रा, अनोखा भॉंत भॉंत रा ॥ ५ ॥

श्री भगवान् हुकम कीधो, के हे पार्थ, म्हारा शेंकड़ॉं रूप भलेई थूँ देखे नी, थारे शूँ कई छुपावणो है, यो तो थारे जश्या रे वास्ते हीज है। ई म्हारा रूप अलौकिक है, तरे' तरे' रा घाट रा, तरे' तरे' रा है (एक शूँ एक नी मले है।) ॥ ५ ॥

पश्यादित्यान्वसून्रुद्रानश्विनौ मरुतस्तथा ।
बहून्यदृष्टपूर्वाणि पश्याश्चर्याणि भारत ॥ ६ ॥

अश्विनी पुत्र ई रुद्र, वसू पवन सूर्य ई ।
पेली जी थें नहीं देख्या, अचंभा देख आज वी ॥ ६ ॥

आदित्य, वसु, रुद्र, अश्विनीकुमार, मरुत्त तथ[illegible] देख्या ही नी अस्या, हे भारत, म्हारा न[illegible] रूप देख ले ॥ ६ ॥

इहैकस्थं जगत्कृत्स्नं पश्याद्य सचराचरम् ।
मम देहे गुडाकेश यच्चान्यद्द्रष्टुमिच्छसि ॥ ७ ॥

म्हारी ई देहरा एक, अंश में देख थूँ सबी ।
और भी देख णो व्हे शो, देख आज अठे ज ही ॥७॥

आखो ही चराचर जगत् आज थूँ अणीज जगाँ[1] बेठो बेठो देख ले । क्यूँ के यो अठे म्हारे में हीज विस्तार शूँ रे' रियो है अणी शिवाय जो कई भी थारे देखवा री मुरजी व्हे, वो सब ठीक तरे' शूँ, हे गुडाकेश, म्हारा शरीर में देख ले । क्यूँ के, अठा शिवाय यो और कठे ही नी है ॥ ७ ॥

न तु मां शक्यसे द्रष्टुमनेनैव[2] स्वचक्षुषा ।
दिव्यं ददामि ते चक्षुः पश्य मे योगमैश्वरम् ॥ ८ ॥

१—अस्यो एक हीज जगा आखो जगत् देख लेवा रो मोको नी तो कीं ने पे'ली मिल्यो ने नी जो कीं ने हो अने मल्गो है क्यूँ के, अस्यो तो एक म्हूँ हीज हूँ, और (दूजो) व्हे ने मले ॥
२—"अनेनैव" में ही ज विश्वरूप दर्शन रो रहस्य (कूँची)

ईं थारी आंख शूं ही तो, शकेगा देख नी म्हने।
अनोखी आंख दूं जीं शूं, देख यो योग दे[illegible] ॥ ८॥

आणा हीज थारी आँखाँ शूँ तो यूँ [illegible] थूँ कदी नी देख शकेगा। अणी वास्ते थोड़ी देर थारी आँखाँ म्हने शोंप दे अथवा म्हारी अलौकिक आँखाँ थने दे दूँ सो म्हारी आँखाँ शूँ ही म्हारो योग रो ऐश्वर्य (महिमा) देख ॥ ८ ॥

संजय उवाच ।

एव मुक्त्वा ततो राजन्महायोगेश्वरो हरिः ।
दर्शयामास पार्थाय, परमं रूपमैश्वरम् ॥ ६ ॥

संजय कही ।
यूँ कहे ने जदी राजा, जोगीश्वर बड़ा हरी।
बतायो आप रो रूप, परमेश्वर पार्थ ने ॥ ६॥

संजय कियो, के हे राजा, यूँ के'ने महा जोगेश्वर भगवान् (हरि) वणीज वगत वणी ने

थूँ थारी जणी नजर शूँ देखे है, वणी शूँ तो दीख ही नी शके, या तो उतरी थकी नजर है। जी शूँ म्हारी शून्यता रहित नजर शूँ देख (के' वे है के लैले ने मजनू की न[illegible]) [illegible] री [illegible]

आपणा अलौकिक नेत्र दे दीधा, ईं में देर ही नी लागे [illegible] लागे ही कीं री। असल में तो पेली ही [illegible] वणा रो ही ज हो, खाली 'वणा रे चा' वा री देर व्ही ने वतावा री देर नी व्ही। अवे तो जठी देखे जठो भगवान रो हीज रूप दीखवा लाग गियो। यो ईश्वर[1] रो रूप अणो ऊली शमझ में नी है। भगवान अर्जुण ने यूँ आपणो परमेश्वर रूप वतायो ॥ ९ ॥

> अनेकवक्त्रनयनमनेकाद्‌भुतदर्शनम् ।
> अनेकदिव्याभरणं दिव्यानेकोद्यतायुधम् ॥ १० ॥

अनेकाँ मुख आँखाँ रो, अनोखा दरशाव रो।
गहणा भी अनोखा ही, उगाम्या शस्त्र भी अरया॥१०॥

अणी रूप में भगवान रा अनेक मुख, अनेक नेत्र, अनेक आकार, अनेक गे'णा और अनेक आवध उगराम राख्या थका दर्शण व्हिया। पण ई सब अबार दीखे ज्यूँ नी है। ई तो ईं यूँ अनोखा अलौकिक ने अचंभो व्हे जस्या है ॥ १० ॥

1—जगत् रूप ही परमेश्वर रो रूप है, केवल शमझ रो फेर है ने अणीज (शमझ) में बंध मोक्ष है।

दिव्यमाल्याम्बरधरं दिव्यगन्धानुलेपनम् ।
सर्वाश्चर्यमय देवमनन्त विश्वतोमुखम् ॥११॥

अनोखा कपडा सारा, सुगंधी फूल चंदण।
अनंत सब ही आड़ी, अचंभा रीज खान वो ॥११॥

भगवान रे धारण री माळा, पोशाक ने शरीर रे सुगंध रो चंदण भी अलौकि हीज धारण हा। ई तो समझवा रे वास्ते के'णा पड़े। दूज्यूँ अर्जुण ने दर्शन व्हियो वणा भगवान रो तो अंत हद ही, नी ही, ने[1] सब ठकाणे ही अलौकिक हो अबे कई के'वां सब अचम्भो ई अचम्भो हो। अणी अक्षरा रो तो वठे काम ही नी या तो वात ही और व्हेगी ॥११॥

दिवि सूर्यसहस्रस्य, भवेद्युगपदुत्थिता ।
यदि भाः सदृशी सास्याद्भासस्तस्य महात्मनः ॥१२॥

हजाराँ सूर्य जो ऊगे, साथे ही आशमान में।
तो भी अणी महात्मा रे, उजाळा रे समान नी ॥१२॥

जो आकाश में हजाराँ सूरज रो उजाळो एक

1—"श्रुतानुमानप्रज्ञाभ्यामन्यविषया विशेषार्थत्वात्" योग दर्शन (पा० १ सू० ४९)

साथे फैले, तो अणी ईश्वर रा प्रकाश री होड़ कर शके [illegible] तो भी नी कर शके। क्यूँके, ईश्वर तो पे [illegible] आत्मा है ॥ १२ ॥

तत्रैकस्थं जगत् कृत्स्नं प्रविभक्तमनेकधा ।
अपश्यद्देवदेवस्य शरीरे पाण्डवस्तदा ॥ १३ ॥

वठे वीं देह रे मांय, तिलसी ठोड़ माँय ही ।
भायग्यो सब संसार, विसतार अपार शूँ ॥१३॥

वठे वणाँ ईश्वर रा प्रकाश[1] में एक जगाँ आखो जगत अनेक प्रकार, शूँ न्यारो न्यारो विस्तार सहित साफ साफ निस्संदेह अर्जुण वणी वगत देखवा लागो। देवताँ रा ही देवता भगवान रा शरीर में कठी ने ही नामेक जगां में यूँ अपार संसार अर्जुण देख दंग व्हे गियो ॥ १३ ॥

ततः स विस्मयाविष्टो हृष्टरोमा धनञ्जयः ।
प्रणम्य शिरसा देवं कृताञ्जलिरभाषत ॥ १४ ॥

१—ज्यूँ कोई वस्तु अंधारा में और ही तरे'री दीखे, पण ज्यूं ज्यूं उजालो व्हे तो जावे, ज्यूं ज्यूं वा वत्ती वत्ती स्पष्ट, साफ साफ, ने व्हे जशी दीखवा लाग जावे। यूं हीज यो संसार प्रभु (महान् आत्मा) रा प्रकाश में स्पष्ट ने यथार्थ दीख्यो ॥

रूँ रूँ हरख शूँ छायो, अचंभा मांय आय ने ।
नमावा कृष्ण ने शीश, हात जोड्यॉ कह्यो [illegible] ४॥

अबे तो अर्जुण अचंभा शूँ चोमेर भराय गियो, वणी अचंभा रा काम करवा वाळा खुद धनंजय रा अचम्भा शूँ रूँ रूँ ऊभा व्हे गिया, वणी हाथ जोड्याँ थकाँ माथो नमाय, (पगाँ लागवाने) कृष्ण मित्र है, या बात तो वीरा मन शूँ निकळगी ने ई, देवाँ रा ही देव ईश्वर है, यूँ जाण, यूँ केवा लागो, केवा कइ लागो, ई तो सब काम वणी शूँ व्हे वा लाग गिया ॥ १४ ॥

अर्जुन उवाच ।

पश्यामि देवाँस्तव देव देहे सर्वांस्तथा भूतविशेषसङ्घान् ।
ब्रह्माणमीशं कमलासनस्थमृषींश्च सर्वानुरगांश्च दिव्यान् ॥ १५ ॥

अर्जुण कही ।

दीखे म्हने मॉय शरीर थारा,
टोळा नरी भॉत चराचराँ रा ।
ब्रह्मा महादेव समाध धारी,
साध अनोखा सर साँप भारी ॥१५॥

अर्जुण के'वे के म्हूँ देखूँ हूँ हे देव, आपरी देह [illegible] देवता एक आप महादेव में है। सब तरे' रा [illegible] टा जीव जन्तु भी है। जाणे जीवाँ री नर्यां कइ समुद्र होज भराय गियो, ने एक भी बाकी नी रियो, सामा अनन्त है, चत्ता है। संसार रा कर्त्ता समर्थ कमळ में विराजवा वाळा ब्रह्माजी भी कमळ सेती अणी में आय गिया ने सब ऋषि, अनोखा उरग भी आप में हीज म्हूँ देख रियो हूँ, चोड़े ॥ १५ ॥

अनेकबाहूदरवक्त्रनेत्रं, पश्यामि त्वां सर्वतोऽनन्तरूपम् ।
नान्तं न मध्यं न पुनस्तवादिं, पश्यामि विश्वेश्वर विश्वरूप ॥१६॥

अनेक बाहू मुख पेट आँखां,
दीखे सबी ठोड़ सरूप थाँका ।
नी अन्त आदी वच है कठे ही,
जगत् स्वरुपी जगदीश थें ही ॥१६॥

हे विश्वरूप, हे विश्व रा ईश्वर, आप रो आदि अन्त ने मध्य तो म्हने नीज दीख्यो है, और तो सब आप में दीख रिया है। अनेक भुजा, पेट, मुख आँखाँ वाळा आप दीखो हो, चोमेर दीखो

हो, अपार दीखो हो, दीखो हो, आप हीज दीवो हो ॥ १६ ॥

किरीटिन गदिन चक्रिणञ्च
तेजो राशिं सर्वतो दीप्तिमन्तम् ।
पश्यामि त्वा दुर्निरीक्ष्य समन्ता-
द्दीप्तानलार्कद्युतिमप्रमेयम् ॥ १७ ॥

हाताँ गदा चक्र धर्याँ किरीटी,
थाकूँ अणी मायँ चलाय दीठी ।
थें तेज री खान जहान छाया,
लायाँ तथा सूर्य लखे लजाया ॥१७॥

माथा पे किरीट, हाता में गदा ने चक्र धारण कीधाँ थका, तेजरा ढगला, जाणे शलगती थकी वासदी वा झग-झगता सूर्य जश्या प्रकाश वाळा, घणी मुशकल शूँ दीखवा वाळा ने या बुद्धि भी नीं पूगे अश्या, आप ने म्हूँ चोमेर प्रकाश रूप देख रियो हूँ ॥ १७ ।

त्वमक्षर परम वेदितव्यं त्वमस्य विश्वस्य पर निधानम् ।
त्वमव्ययः शाश्वतधर्मगोप्ता सनातनस्त्वं पुरुषो मतो मे ॥१८॥

थें जाणवा जोग विनाश हीणा,
थें हीज हो ई जग रा खजीणा
थें [illegible] नित रा रुखाळा,
जच्या म्हने आप अनादवाला ॥१८॥

अविनाशी ने जाणवा जश्या तो आप हीज हो ने अणी आखा जगत रा भण्डार ने सबाँ शूँ न्यारा ने एक शरीखा रे'वा वाळा, नी मटवावाळा[1], धर्म रा रखवाळा, ठेठ रा पुरुष के' वे जी म्हारी समझ में तो आप हीज हो ॥ १८ ॥

अनादिमध्यान्तमनन्तवीर्यमनन्तबाहुं शशिसूर्यनेत्रम् ।
पश्यामि त्वा दीप्तहुताशवक्त्रं स्वतेजसा विश्वमिदं तपन्तम् ॥१६॥

महाबली स्थान अनंतता का,
अनंत बाहू शशि सूर्य आँखाँ ।
दीखो मुखाँ मूँ अगनी धकाता,
ई तेज शूँ लोक सभी थकावा ॥ १६ ॥

आप रो आद, बच ने अंत तो है हीं नी, जदी दीखे कठूँ पण सबाँ रे आदि बच ने अंत आप ही

1—नी मटवा वाळो धर्म, प्रकृति ने पुरुष ई आर दूँ हीज है, यो भाव ।

हो। आप री शक्ति रो भी पार नी, आप रा हाताँ रो भी पार नी, यूँ चन्द्र ने सूर्य नेत्र है. झग झगता अगनी रा मुख है, ने अणी [illegible]श्व ने तपाय रियो है सो आप रो तेज है॥

द्यावापृथिव्योरिदमन्तरं हि व्याप्तं त्वयैकेन दिशश्च सर्वाः ।
दृष्ट्वाद्भुतं रूपमुग्रं तवेदं, लोकत्रयं प्रव्यथितं महात्मन् ॥२०॥

यो ऊँच नीचो सब व्याप लीधो,
थां ही दिशा छाय निवास कीधो।
देखे थनोखा विकराल थांने।
शाता कठे है जग चापड़ा ने ॥२०॥

ई आप एकला ही ऊँचा शूँ नीचा ने वच नै सब दिशा में व्याप रिया हो। हे अश्या महा वड़ा शरीर वाळा, यो आप रो अश्यो अनोखो अद्भुत नें भयावाणो रूप देख ने म्हूँ एकलो कई आखी त्रिलोकी घबरायगी है ॥ २० ॥

अमी हि त्वा सुरसङ्घा विशन्ति
केचिद्भीताः प्राञ्जलयो गृणन्ति ।
स्वस्तीत्युक्त्वा महर्षिसिद्ध सङ्घाः,
स्तुवन्ति त्वा स्तुतिभिः पुष्कलाभिः॥२१॥

ई आप में देव नरा समावे,
ई हात जोड़े डरपे मनावे ।
क[illegible] मुनि सिद्ध शारा,
वाखाण थांरा कर ने हजाराँ ॥२१॥

जणा ने बड़ा बड़ा देवता जाणता हा, वी हीज ई आप में शमाय रिया है, ने सो भी एक दो नी, टोळाँ बँधां रा ठकाणा नी है । कतराक डरशूँ हात जोड रिया है, जणां ने बड़ा गण ने दूजा हात जोड्यां करे है, वी हीज ई है । देवता हीज नी, ई महा ऋषि ने सिद्धां री जमातां री जमातां कल्याण व्हो, कल्याण व्हो, यूँ के'ता जावे ने तरे तरे री खूब आप री महिमा के'के'ने आप ने रिझाय रिया है ॥ २१ ॥

रुद्रादित्या वसवो ये च साध्याः,
विश्वेऽश्विनौ मरुतश्चोष्मपाश्च ।
गन्धर्वयक्षासुरसिद्धसङ्घा,
वीक्षन्ते त्वां विस्मिताश्चैव सर्वे ॥२२॥

ई देवता दानव पित्र यच्छ,
गंधर्व सिद्धादिक ई प्रतच्छ
भारी अचंभो मन में अणाँ रे,
दाँताँ दियाँ आँगळियाँ निहारे ॥२२॥
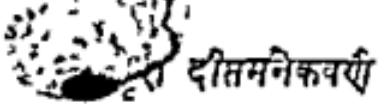
रुद्र, आदित्य, वसु, साध्य, सब, जी अचंभा शूँ भरया थका वाजे है, वो सब टोळ रा टोळा आप ने देख ने अचम्भा में डूब रिया है [illegible] फेर म्हारो कई चालो, यो तो अचम्भा रो [illegible]ड़ो अचम्भो व्हे जश्यो आप रो रूप है॥ २२ ॥

रूप महत्ते बहुवक्त्रनेत्र महाबाहो बहुबाहूरुपादम् ।
बहूदर बहुदंष्ट्राकराल दृष्ट्वा लोकाः प्रव्यथितास्तथाहम् ॥२३॥

बाहू अनेकाँ पग पेट आँखाँ,
डाढाँ कराली मुख जाँघ लाखाँ ।
म्होटो अश्यो रूप निहार थाँरो,
धूजे छियो लोक समेत म्हारो ॥२३॥

आप रो रूप यो सब शूँ म्होटो बड़ो भारी है। अणी रा नरा मूंडा, आंखां, हात जांघा पग ने पेट है। हे महाबाहू आप रो सब ही महा है। क्यूँके, महा मूँडा रे नेत्र भी महा होज चावे है ने पेट महा व्हे जदी ज महा हाताँ शूँ भरणा पड़े, डाढाँ फेर अणाँ मूडा में घणी भयंकर है। अणाने देख ने म्हूँ तो घबराय गियो, म्हूँ ही कई, म्हने तो अणा शूँ नी डरपे जश्यो कोई दीखे ही नी है।

नरा घबराया ज्यूँ म्हूँ भी घबराणो ई में नवी
त कई रही ॥ २३ ॥

[illegible] दीप्तमनेकवर्णं

व्यात्ताननं दीप्तविशालनेत्रम् ।

दृष्ट्वा हि त्वां प्रव्यथितान्तरात्मा

धृतिं न विन्दामि शमं च विष्णो ॥२४॥

रिसे अणाँ रा रँग रूप लाखां,

फाड़े रया हो मुख फेर आँखां ।

हारे हिये धूजणियाँ घणी है,

खाता थवे धीरजता कणी है ॥२४॥

हे विष्णु, आकाश रे अटके जश्या, दीपूँ दीपूँ
ता, तरे तरे रा रंग रा, मूँडा फाड्यां थकां, ने
टी म्होटी आँखाँ (ने वो भी धक धकती बाखदी
ी) वाळा, आप रा अणी रूप ने देख ने म्हारो
जीव घबरावे है । म्हारी चणी धीरज ने तो
? तो हेरूँ तो भी नो पाय शकूँ हूँ । अबे म्हारो
व अमूभवा लाग गियो है, अबे शांति भी गम
है, भलाँ आप अरथा हो, या म्हूँ कई जाणूँ ॥२४॥

दंष्ट्राकरालानि च ते मुखानि दृष्ट्वैव कालानलसन्निभानि ।
दिशो न जाने न लभे च शर्म प्रसीद देवेश जगन्निवास ॥२५॥

ई डाढ़वाळा विकराल ऊँडा,
है काल री ज्वाल समान मूँडा ।
म्हूं भूल जावूं लख सर्व भान,
करो कृपा नाथ कृपानिधान ॥२५॥

हे देवेश, हे जगन्निवास, दया करो, म्हूँ तो भयंकर डाढाँ वाळा प्रलयकाळ री अगनी जश्या अणा आप रा मूँडा ने देख देख[1] ने हीज बीजळ-बायो व्हे गियो हूँ। नी तो म्हने दिशा री खबर है, नी जो म्हने सुख री[2] खबर है, के सुख कई हो, अठे तो आप री दया ही ज पार लगावा वाळी है ॥ २५ ॥

अमी च त्वां धृतराष्ट्रस्य पुत्राः
सर्वे सहैवावनिपालसंघैः ।
भीष्मो द्रोणः सूतपुत्रस्तथासौ,
सहास्मदीयै रपियोधमुख्यैः ॥२६॥

१—देखताँ ही अश्यो है, जदी पछ्या थकाँ रे कश्यो व्हेगा ।
२—अठीज 'प्रसीद' कियो, क्यूँ के, खुद ही जी अणी में दामावे, वी अणी सूँ कई बँचाय शकेगा, यो भाव है ॥

म्हारा वणाँ रा सब फोज फाँटा,
राजा सबी ई रण माँय राँटा ।
ई [illegible] णादिक सूत पुत्र,
दीखे म्हने ई धृतराष्ट्र पुत्र ॥२६॥

ई धृतराष्ट्र रा सब वेटा भी ने फेर वड़ा वड़ा राजां री फोजां सेती राजा ने ओहो, और वड़ा कई, भीष्म पितामह, ने ई गुरु द्रोण, ई तो वड़ा वड़ा वीरां री नद्यां री नद्यां, यो सूतपुत्र कर्ण, अणी री भी या हीज दशा व्हे री है ने यो लो, म्हाणां वड़ा वड़ा शूरमां भी अणा रो हीज साथ कर लीधो जदी दूजा री तो केणी ही कई, ई तो सब ही आप में हीज स्वाहा वोलाय गिया ॥२६॥

वक्त्राणि ते त्वरमाणा विशन्ति,
दंष्ट्राकरालानि भयानकानि ।
केचिद्विलग्ना दशनान्तरेषु,
संदृश्यन्ते चूर्णितैरुत्तमाङ्गैः ॥२७॥

दोड़्या हुवा ई मुख में धशे है,
केताक दाँताँ वच ही फंसे है ।
ई आप तो चाब रिया अणा ने,
भूखो भयंकार जथा चबाने ॥२७॥

फेर अचम्भा में अचंभो यो व्हे रियो है, के ई आ'गता आ'गता, जाणे वापोती त्रावती व्हे, ज्यूँ अश्या भयंकर विकराळ ने वना... जा रा आप रा मूँडा, जणा री डाढ़ां फेर भे... भी भयंकर है, वणां में आ'गता आ'गता क्यूँ घुश रिया है। कतरा तो दाँताँ रे वचे उळझ रिया है। कतरा रा ही माथा जाणे आप री वागोल शूँ चूर्ण व्हे रिया है, यूँ म्हने ई साफ चौड़े धाड़े दीख रिया है ॥ २७ ॥

यथा नदीना वहवोऽम्बुवेगाः
समुद्रमेवाभिमुखा द्रवन्ति ।
तथा तवामी नरलोकवीरा
विशन्ति वक्त्राण्यभिविज्वलन्ति॥२८॥

सबी नद्यॉ रा जळ जोरवाळा,
समुद्र में जाय धशे उतावळा ।
यूँ ई धशे है मुख आप रा में,
जी वीर नामीज घणा धरा में ॥२८॥

जणी चाल शूँ चौमाशा में नदियां ने वा'ळा रो पाणी उछळतो ढावा तोड़तो घणा जोर

दौड़तो थको समुद्र री कानीज धाम धूम करतो थको सब वेग शूँ चल्यो जाय है, यूँ ही ई संसार माँय [illegible] में बड़ा बड़ा जोधा दौड़ दौड़ ने आप रा शलगता थका मूंडा में छन्न व्हे रिया है ॥ २८ ॥

यथा प्रदीप्तं ज्वलनं पतङ्गा,
विशन्ति नाशाय समृद्धवेगाः ।
तथैव नाशाय विशन्ति लोकास्तवापि
वक्त्राणि समृद्धवेगाः ॥ २९ ॥

ज्यूं जागती आग पडे पतंग्या,
विना विचारयाँ निज लोभ रंग्या ।
त्यूँ लोक सारा मुख में शमावे,
दौड़्या थका ई अति आगता व्हे ॥२९॥

ज्यूँ शलगता थका बड़ा दीवा में पतंग्या घणा जोर शूँ दौड़ ने मरवा रे वास्ते हीज घुसे है, वणां रो दौडणो (वेग) मरवा वास्ते है । यूँ हीज सब लोग भी घणा वेग शूँ आप रा मुखाँ में नाश रे व ते दौड़ दौड़ ने धस रिया है ॥ २९ ॥

लेलिह्यसे ग्रसमानः समन्ता
ल्लोकान्समग्रान्वदनैर्ज्वलद्भिः ।

तेजोभिरापूर्य जगत्समग्रं
भासस्तवोग्राः प्रतपन्ति विष्णो ॥३०॥

थाणो सबां ने सब चाट जाणो,
अणा मुखां रो न कई ठिकाणो।
ई तेज शूँ व्याप गया जगां में,
याँ शूँ बचे जाय कणी जगाँ में॥३०॥

हे विष्णु भगवान, ई तो जगत ही आप रा मूँडा में शघळा चौमेर शूँ आ'गता आ'गता धश रिया है, ने जावे तो जावे ही कठे। और तो जगा ही नी दीखे है। आप अतरा अनन्त लोकाँ ने निगल ने फेर होठ हीज चाट रिया हो, आखा रा आखा लोकां ने एक साथे ही अणा बाळता मूँडॉ शूँ अरोग रिया हो, और ज्यूँ ज्यूँ आहुति शूँ लाय री नांई आपरी बत्ती बत्ती भयंकरता व्हेती जाय है, ने सब तप रिया है ॥ ३० ॥

आख्याहि मे को भवानुग्ररूपो
नमोऽस्तु ते देववर प्रसीद ।

१—औराँ रे तो पेट री अग्नि में पचे ने आप रे तो मूँडा में हीज अग्नि है।

विज्ञातुमिच्छामि भवन्तमाद्य,
नहि प्रजानामि तव प्रवृत्तिम् ॥३१॥

म्हने आप अस्या कई हो,
कृपा करो नाथ सखा सही हो।
नमूँ अनादी अणजाण थाँरो,
अठे कहो काम पधारवा रो ॥३१॥

हे देववर, अबे तो आप हीज कृपा करो, तो बचाव व्हे शके है। आप अस्या कुण हो, सो म्हने हुकम करो। क्यूँ के, अस्यो रूप भयंकर तो आज हीज नजर आयो है। आप ने म्हारा नमस्कार वार वार है। कृपा करो। हे सबाँ शूँ अनादी ने सबाँ रा आदि, आप ने म्हूँ जाणणो चावूँ हूँ। क्यूँ के, अस्यो यो घाण क्यूँ घालणो शरू कीधो, अणी रो म्हने मतलब नी लाधो ॥ ३१ ॥

श्री भगवानुवाच ।

कालोऽस्मि लोकक्षयकृत्प्रवृद्धो
लोकान्समाहर्तुमिह प्रवृत्तः ।
ऋतेऽपि त्वा न भविष्यन्ति सर्वे
येऽवस्थिताः प्रत्यनीकेषु योधाः॥३२॥

श्री भगवानुवाच।

म्हूँ कालरूपी सब ठोड़ छायो,
खावा अठे भी अब जाए तैयो।
थारे वना भी सब खाय जावूं,
तो भी थने म्हूँ अड़मो वणावूं ॥३२॥

भगवान हुकम कीधो, के थे कियो, के विश्व-रूप[1] देखावो, सो वो रूप थने यो देखायो, जणी ने काळ के'वे, यो वो होज हूँ। लोकाँ रो क्षय करवा वाळो वो काळ हीज म्हूँ खूब वध्यो हूँ। अठे अबार लोकाँ ने शमेटवा री म्हारी धुन व्हे री है। अबे थूँ ही देख ले, कई ई थारा मार्या मरे ने थारा राख्या रे'वे ज्यूँ है। थूँ भले ही नी व्हे तो भी जतरा ई लड़वा वाळा दो ही फौजाँ में दीखे है, ई तो मटेगा ही ज, या तो म्हारी दिनचर्या है,' ने कूण मेटे ॥ ३२ ॥

तस्मात्त्वमुत्तिष्ठ यशो लभस्व
जित्वा शत्रून्भुङ्क्ष्व राज्यं समृद्धम्।

१—योगी काळ ने नी माने, पण पदार्थ री तबदीली ने ही ज काळ के'वे है। या ही तबदीली अर्जुन ने भगवान देखाई ने अणी शिवाय और विश्व कई नी है यो ही रूप है।

मयैवैते निहताः पूर्वमेव
निमित्तमात्रं भव सव्यसाचिन् ॥३३॥

अबे ऊठ निमित्त व्हे ने,
ले राज रा भोग अठे लड़े ने।
मारया थका ई सब लोग म्हारा,
थारा बजेगा जश रा नगारा ॥ ३३ ॥

अणी वास्ते थूँ ऊठ ने यो पड़्यो जश ले ले, वेरियाँ ने जीत ने बड़ो वध्यो थको राज भोग। हे सव्यसाची, अणा ने तो पेली ही म्हें हीज मार राख्या है, थूँ भूल ने भी यूँ शमझे मती (मन में आवा दे मती), के म्हें मार्या ने म्हूँ जीत्यो। थूँ निमित्त मात्र व्हे जा। क्यूँके म्हारो काम म्हूँ यूँ ही ज दूसरा ने निमित्त करने करयाँ करूँ हूँ, सो[1] थूँ देख ही रियो है। यो तो म्हारो ठेठ रो शुभाव है ॥ ३३ ॥

द्रोणं च भीष्मं च जयद्रथं च
कर्णं तथान्यानपि योधवीरान्।

१—ज्यूँ सुग्रीव रो निमित्त कर बाली पे आलखे बीर बा'यो, आलखे गोळी बा'वा रो शुभाव है।

मया हताँस्त्वं जहि मा व्यथिष्ठा
युध्यस्व जेतासि रणे सपत्नान् ॥३४॥

जयद्रथ द्रोण नदीकुमार,
कर्णादि जी वीर खरा जुझार।
मार्या हुवा ने अब फेर मार,
थूँ युद्ध जीते, मत शोच धार ॥३४॥

थूँ तो लड्याँ जा, यूँ घबरावे मती। ई तो म्हारा मारथा थका ने होज थारे मारणा है। ने अणी में थूँ थारा दुशमणां ने जीत जायगा, पण या तो पेली ही म्हे कर राखी है। दूज्यूँ द्रोण, ने भीष्म ने जयद्रथ ने कर्ण ने भूरि श्रवा, भगदत्त आदि ने कोई जीत शके जश्यो त्रिलोकी में थने दीखे है, कई। पण अश्या तो अनन्त अणा मुखाँ में लापते व्हे गिया ने व्हे रिया ने व्हेता रे'वेगा ॥ ३४ ॥

सञ्जय उवाच ।
एतच्छ्रुत्वा वचनं केशवस्य
कृताञ्जलिर्वेपमानः किरीटी ।
नमस्कृत्वा भूय एवाह कृष्णं
सगद्गदं भीतभीतः प्रणम्य ॥ ३५ ॥

संजय कही ।

छूटी शुणे यूँ तन में कँपारी,
बोली हुई कंठ कबूतराँ री ।
वो हात जोड़े झुक ने शुहारे,
बड़ी विनै यूँ डरतो उचारे ॥ ३५ ॥

संजय कियो, के ई वचन भगवान रा शुण ने अर्जुण धूजवा लाग गियो । वो घड़ी घड़ी रो भगवान रे पगां पड़वा लागो ने हात जोड़वा लागो ने गळो. बैठ गियो डरपतो डरपतो नरोई झुक ने फेर यूँ अरज कीदी । झुकवा शिवाय वीं ने और उपाय नी दीख्यो, जीशूँ वो झुक्याँ ही गियो ॥३५॥

अर्जुन उवाच ।

स्थाने हृषीकेश तव प्रकीर्त्या
जगत्प्रहृष्यत्यनुरज्यते च ।
रक्षांसि भीतानि दिशो द्रवन्ति
सर्वे नमस्यन्ति च सिद्धसंघाः ॥ ३६ ॥

अर्जुण कही ।

जगत् सुखी व्हे शुण नाम थाँराँ,
शुणयां टके नी पग राक्षसां रा

करे सबी सिद्ध मुनी प्रणाम,
थाँरो अश्यो क्यूँ नहिं होय नाम ॥३६॥

अर्जुण अर्ज कीधी, के हे हृषीकेश, थाँ रो नाम लेवा शूँ आखो ही जगत वड़ो सुखी व्हे है, हरखे है ने वड़ो प्रेम भी करतो जाय है, अर्थात अणी ज में लागो रियाँ करे है ने राक्षस आप रा जश शूँ डरपे है ने च्यार ही कानीं भाग जावे है। और शघळा ही सिद्धाँ री जमातां नमस्कार करे है, सो यूँ व्हेणो ही चावे । क्यूँ के, आप अश्या ही हो। यो जतरो व्हे, वतरो ही आप रो प्रभाव देखताँ ओछो ही है ॥ ३६ ॥

कस्माच्च ते न नमेरन्महात्मन्गरीयसे ब्रह्मणोऽप्यादिकर्त्रे ।
अनन्त देवेश जगन्निवास त्वमक्षरं सदसत्तत्परं यत् ॥३७॥

अश्या हि हो नाथ नमे नहीं क्यूँ,
विधाता पण आप ही शूँ ।
अनन्त देवेश सबी जगाँ हो,
थें झूठ शाँचा सब शूँ हो ॥३७॥

हे महात्मा, आप ने क्यूँ नी नमे, सबाँ ने नमणो ही ज चावे । वड़ा ने नमे जदी आप शूँ

वड़ो कूण है। आप तो ब्रह्माजी ने भी पेंली पेंल वणावा वाळा हो। हे देवेश, आप रो तो आदि अन्त है ही नी। हे जगन्निवास, सांच ने झूँठ शूँ भी न्यारा जो अविनाशी कोई है, सो वी आप हीज हो ॥ ३७ ॥

त्वमादिदेवः पुरुषः पुराणस्त्वमस्य विश्वस्य परं निधानम्।
वेत्तासि वेद्यं च परं च धाम त्वया ततं विश्वमनन्तरूप ॥३८॥

थें आदि हो पूरुष थें पुराणा,
थें हीज हो ई जग रा खजाणा।
थें जाणवो जाणणहार थें हीं,
परे सबां शूँ सब रूप थें ही ॥३८ ॥

सबाँ रा आदि देवता, पुराणा पुरुष, और अणी संसार रा अखूट भण्डार भी आप ही ज हो। सब जाणवा वाळा आप हो ने जीं ने जाणे सो भी आप हो ने अणां सबा शूँ परे प्रकाश है, वो भी आप हो। हे अनन्तरूप, आप ही ज आखा विश्व में व्याप रिया हो ॥ ३८ ॥

वायुर्यमोऽग्निर्वरुणः शशाङ्कः प्रजापतिस्त्वं प्रपितामहश्च।
नमो नमस्तेऽस्तु सहस्रकृत्वः पुनश्च भूयोऽपि नमो नमस्ते ॥३९॥

थें वायु ब्रह्मा शशि काळ आदी,
पिता पिता रा सब हो अनादी।
नमो नमो नाथ नमो हजारां,
नमो नमो फेर नमो अपारां[1]॥३६॥

वायरो, यम, अग्नि, जळदेवता, चन्द्रमा, दक्ष आदि प्रजापति और सबाँ रा पड़दादा ब्रह्माजी भी आप ही ज हो, अबे आप रे शिवाय व्हे ही कई शके। अरथा अनन्त रूप आप ने हजाराँ दाण कर कर ने नमस्कार हो, फेर भी बारं बार हजारां दाण आप ने नमस्कार पूगो, आप ने नमस्कार है, अणी शिवाय और कई करूँ ॥ ३६ ॥

नमः पुरस्तादथ पृष्ठतस्ते नमोऽस्तु ते सर्वत एव सर्व।
अनन्तवीर्यामितविक्रमस्त्वं सर्वं समाप्नोषि ततोऽसि सर्वः ॥४०॥

आगे नमूँ फेर नमूँ पछाड़ी,
नमूँ सबी थें अब सर्व आड़ी।
महाबली शक्ति अपार थाँरी,
हो सर्व में सर्व सरूप धारी ॥४०॥

१—नमस्कार यूँ झुकवा रो भाव है, अर्थात् प्रभु में बारं बार चमकी लगावणो, तन्मय व्हेणो, अहङ्कार वीं में व्हेणो।

आगे आप हो, आगे भी नमस्कार है। पाछे भी आप हो आप ने नमस्कार है । चौमेर आप हो, चौमेर आप ने नस्कार है। सवी आप हो अवे कई करणी आवे। हे सर्व, आप ही आप हो ही ज। आप सर्व हो, सब ने पूरा करो हो, सब ने फैलावो हो, आप रा बल रो ने तेज रो पार नी है॥ ४० ॥

सखेति मत्वा प्रसभं यदुक्तं हे कृष्ण हे यादव हे सखेति ।
अजानता महिमानं तवेदं मया प्रमादात्प्रणयेन वापि ॥४१॥

म्हें जो कियो नाथ अजाण मांय,
जादू अरे कृष्ण सखा दबाय ।
घोफो अजाण्यो महिमा अणी री,
गोव्यो वण्यो ज्यो जग रा धणी री ॥४१॥

आप ने गोठ्या समझ ने, मूँडे चढ़ ने, दबाय दबाय ने, हे कृष्ण, हे यादव, ए गोठ्या, यूँ कें'के ने रोळाँ करतो हो सो म्हूँ आप री अशी महिमा है, या नी जाणतो हो । दूज्यूँ भलाँ त्रिलोकी नाथ शूँ यूँ कूँकर बोलतो। यो म्हूँ बोफाई शूँ, प्रेम शूँ, अपराधी व्हियो। अबे आप माफ करो ॥४१॥

यच्चावहासार्थमसत्कृतोऽसि विहारशय्यासनभोजनेषु ।
एकोऽथवाप्यच्युत तत्समक्षं तत्क्षामये त्वामहमप्रमेयम् ॥४२॥

म्हें रो'ळ में जो अपमान कीधा,
बेठ्याँ उठ्याँ सोवत खात पीधा ।
एकत में वा सब आप आगे,
वां री क्षमा यो अणजाण माँगे॥४२॥

हर कणी वगत रो'ळ करवा रे वास्ते आप रो अनादर कर्यो करतो हो, हरतां फरतां, सूवतां बैठतां, खावतां पीवतां, जणी वगत देखो वणी वगत आप शूँ मशकर्यां कर्यां करतो हो, यूँ हीज आप रे पूठ पछाड़ी भी आप री रोळां करतो हो, ने आप रे मूँडा आगे भी रो'लां करतो हो, वी आप शूँ कशी छानी है । अबे वणा ने आप क्षमा कर दो। हे अ[illegible] आप नखा[illegible] [illegible]ा ही ज मागूँ हूँ ने [illegible] समर्थ [illegible] री पार नी है ॥ ४२ ॥

नी आपशो और वड़ो कठे तो,
हे बापड़ा सर्व बड़ा अठे तो ॥४३॥

आप चराचर संसार रा पिता हो, अणी जगत रा वड़ा शूँ भी वडा ने गुरु रा भी गुरु हो। आप शरीखो ही कोई नी है, तो आप शूँ वत्तो तो दूशरो कुण व्हे शके। सब आप शूँ नीचा तो है ही ज। या बात अठे हीज नी है, पण म्हने तो तीन ही लोक में आप शरीखा नी दीखे है। हे अप्रतिम प्रभाव, वना जोडी रा भगवान् ॥ ४३ ॥

तस्मात्प्रणम्य प्रणिधाय कायं प्रसादये त्वामहमीशमीड्यम् ।
पितेव पुत्रस्य सखेव सख्युः प्रियः प्रियायार्हसि देव सोढुम् ॥४४॥

ई शूँ अबे म्हूँ झुक ने मनावूँ,
क्षमा सबी ई अपराध पावूँ ।
ज्यूँ पुत्र रा बाप सखा सखाँ रा,
म्हारा खमो ज्यूँ नर नारियाँ रा ॥४४॥

हे देव, अणी कशूर ने आप हीज माफ कर शको हो, ओछला कई माफ कर शके। अणी वास्ते शरीर ओशान शूँ, मर्यादा शूँ ढाब राख ने अबे झुक ने पेली री वना मर्यादा रा वर्तावाँ री क्षमा चावूँ हूँ। म्हूँ कई आदर आप रो कर शकूँ, आप

स्वयं ही ईश्वर हो ने आखा ही संसार रा भी आदर करे वो भी अठे कई नी है, म्हारे शूँ तो कई भी नी व्हे शके। अबे तो ज्यूँ बाप बेटा रा, मित्र मित्र रा ने खावंद लुगाई रा कशूर भूल मूरख पणा ने खमे है, ज्यूँ ही आप ने कशूर खमणो चावे ॥४४॥

अदृष्टपूर्वं हृषितोऽस्मि दृष्ट्वा, भयेन च प्रव्यथितं मनो मे ।
तदेव मे दर्शय देव रूप प्रसीद देवेश जगन्निवास ॥४५॥

सुखी व्हिया रूप अनूप देख,
भयावणा देख डर्यो विशेख ।
वीं रूप री लाग रही पियास,
करो कृपा नाथ जगन्निवास ॥४५॥

हे देव[1] हे देवेश, हे जगन्निवास, पे'ली कदी नी देख्यो जश्यो यो रूप देख ने म्हूँ राजी व्हियो के आज बड़ी कृपा व्ही। पण, अणो री विकराळता शूँ म्हूँ डरप गियो ने म्हारो जीव घबरावा लाग गियो। अणी शूँ अबे म्हने पेली रा वीं'हीज रूप रा दर्शण करावो, अबे कृपा करो ॥४५॥

१—देव के'ने फेर डरप ने देवेश के'वे है, पाछो जगन्निवास। व्याकुळ व्हे ने नवा नवा नाम लेतो जाय।

किरीटिनं गदिनं चक्रहस्तमिच्छामि त्वां द्रष्टुमहं तथैव ।
तेनैव रूपेण चतुर्भुजेन सहस्रबाहो भव विश्वमूर्ते ॥४६॥

गदा तथा चक्र किरीट धार्‌याँ,
म्हूँ गा सुखी रूप अस्यो निहार्‌याँ ।
हजार बाहू जग रा सरूप,
पाछा वणो चार भुजा अनूप ॥४६॥

जणी में मस्तक पे किरीट ने हातां में गदा, चक्र धारण रे' है, वस्या ही ज आप रा रूप रा दर्शण करणो चाऊँ हूँ। और तरे' रा नी, वस्या रा ही ज। हे सहस्र बाहू, वीं चतुर्भुज रूप रा दर्शण री अरज है। हे विश्वमूर्ति, वस्या रा वस्या पाछा वण जावो ॥४६॥

श्री भगवानुवाच ।

मया प्रसन्नेन तवार्जुनेदं रूपं परं दर्शितमात्मयोगात् ।
तेजोमयं विश्वमनन्तमाद्यं यन्मे त्वदन्येन न दृष्टपूर्वम् ॥४७॥

१—घड़ी घड़ी रा वस्या रा वस्या के'णो ने सहस्र बाहू ने विश्वमूर्ति के' वा रो यो भाव है के आप रा तो नराई रूप है, फे'र कजाणा कस्यो रूप बताय दो तो ईं रो कई पार है। म्हारो प्रेमी कृष्णारूप अणा में कठीने ही गमाय नी जावे यो भाव है।

श्री भगवान् आज्ञा करी ।

राजी ह्वियो म्हूँ जद यो वतायो,
प्रभाव यूँ तज अपार छायो ।
थारे वना यो नहिं और पायो,
प्यारो घणो रूप थने वतायो ॥४७॥

श्री भगवान् हुकम कीधो के हे अर्जुण, यो विश्वरूप तेज रा आकार रो, अपार, ने सबाँ रे पे'ली रो, जणी ने पे'ली थारे शिवाय[1] कणी देख्यो ही नी हो, अश्यो म्हारो प्यारो रूप सब शूँ परम म्हारा योग रा ऐश्वर्य शूँ थने वतायो । यूँ म्हूँ थारे पे राजी[2] व्हियो जींशूँ वतायो । थूँ यूँ जाणे मती के वेराजी व्हिया जीं शूँ अश्यो रूप वतायो ॥४७॥

न वेदयज्ञाध्ययनैर्नदानैर्न च क्रियाभिर्न तपोभिरुग्रैः ।
एवंरूपः शक्य अहं नृलोके द्रष्टुंत्वदन्येन कुरुप्रवीर ॥४८॥

१—'थारे शिवाय' शूँ भक्ताँ शूँ अभिप्राय है, भगवान् में भाव व्हे ।

२—अर्जुण के आणी के घणी रो'लाँ ने अपमान कीधा जणी शूँ वेराजी व्हे गिया जींशूँ यो रूप वतायो, अणी वास्ते माफी माँगी । भगवान्, जीं शूँ हुकम करे के म्हूँ तो राजी व्हियो जीं शूँ यो रूप वतायो है ।

नी वेदवाँच्याँ तप यज्ञ कीधाँ,
भणयाँ कियाँ कर्म न दान दीधाँ ।
अठे अस्यो रूप शके विलोक,
थारे वनाँ अर्जुण और लोक ॥४८॥

यो तो वेद, यज्ञ, पाठ, दान और भी तरे'तरे रा भारी भारी उपाय ने तपस्या शूँ भी अणी नर-लोक में शिवाय थारे कोई नी देख शके है। हे कुरुप्रवीर, थूँ ई ने म्हारी प्रसन्नता शमझ, क्रोध शमझे मती ॥४८॥

मा ते व्यथा मा च विमूढभावो दृष्ट्वा रूपं घोरमीदृङ्ममेदं ।
व्यपेतभीः प्रीतमनाः पुनस्त्वं तदेव मे रूपमिदं प्रपश्य ॥४६॥

व्हा, व्हा, मती घाबर थूँ अमूझ,
यो रूप देखे घणघोर गूँझ ।
प्रसन्न व्हे ने भय छोड़ शारो,
शुहावणो रूप निहार म्हारो ॥४६॥

।—कुरुप्रवीर है, जीरूँ देख शकेगा, पण, थूँ तो क्रोध जाण डर गियो, विपर्यय व्हे गियो। अणी रूप में प्रायः अनेक विपर्यय हियाँ करे है। अबे थूँ अणी विपर्यय ने छोड़ दे—यो भाव है।

थूँ कौरवां (कुरुवंशियाँ में) में वीर है, जी शूँ थने भय नी व्हेगा, यूँ जाण्यो हो, पण व्हा, अमू भे मती, घवरावे मती, यो म्हारो अस्यो घोर रूप देख, भय छोड़ ने राजी व्हे ने पाछो वी हीज रूप यो देखले। वणो में कई फर्क नी पड़्यो है ॥४६॥

सञ्जय उवाच ।

इत्यर्जुनं वासुदेवस्तथोक्त्वा, स्वक रूपं दर्शयामास भूयः ।
अश्वासयामास च भीतमेन भूत्वा पुनः सौम्यवपुर्महात्मा ॥५०॥

संजय कही।

यूँ बोल ने अर्जुण शूँ अनन्त,
बताय यो रूप दियो तुरंत ।
शुहावणो श्याम सरूप कीधो,
डरया थका ने विशवाश लीधो ॥५०॥

संजय कियो, के अर्जुण विश्वरूप शूँ डर गियो, जी शूँ विश्वरूपी भगवान विश्वासे तो भी वणो ने धरोज नी आवे। जदी थूं के' ज्यूँ ही करूंगा, यूँ अर्जुण ने के'ने आपणो वासुदेव स्वरूप पाछो वणी ने देखाय, शुहावणा वण ने वड़ा रूप शूँ डरप्या थका अणी अर्जुण ने फेर महारूप शूँ सौम्यरूप कर ने [illegible] है॥ ५ ॥

अर्जुन उवाच ।

दृष्ट्वेदं मानुषं रूपं तव सौम्यं जनार्दन ।
इदानीमस्मि संवृत्तः सचेताः प्रकृतिं गतः ॥५१॥

अर्जुण कही ।

आप रो देख यो पाछो, नररूप शुहावणो ।
अब म्हूँ चेत में आयो, घबराहट भी मटी ॥५१॥

यूँ पाछा वणीज रूप में भगवान ने देख ने अर्जुण अर्ज कीधी, के हे जनार्दन, आप रो यो पाछो शुहावणो मनख रो रूप देख ने अबे म्हूं सुखी व्हियो, म्हारो जीव ठकाणे आयो ने पेली री नाईं व्हे गियो। अतरी देर तो म्हूं कई रो कई व्हे गियो हो ॥ ५१ ॥

श्री भगवानुवाच ।

सुदुर्दर्शमिदं रूपं दृष्टवानसि यन्मम ।
देवा अप्यस्य रूपस्य नित्यं दर्शनकाङ्क्षिणः ॥५२॥

श्री भगवान आज्ञाकारी ।

म्हारो सहज नी है यूँ, दीखणो रूप अर्जुण ।
देवाँ रे भी रहे लागी, लालसा ई सरूप री ॥५२॥

जदी श्री भगवान हुक्म कीधो, के थो ह
म्हारो रूप थें अबार देख्यो हो यो रूप से'ल में हं
कोई नी देख शके है। यो म्हारो खास रूप है
देवताँ[1] रे भी अणी रूप ने देखवा री सदा अभि-
लाषा लागी रियाँ करे है, तो पण देख नी शके॥५२॥

नाहं वेदैर्न तपसा न दानेन न चेज्यया ।
शक्य एवंविधो द्रष्टुं दृष्टवानसि मां यथा ॥५३॥

वेदाँ शूँ तप यज्ञाँ शूँ, दान शूँ भी नहीं कदी ।
असयो म्हने शके देख, जस्यो देख्यो अबार थें ॥५३॥

क्यूँ के, अणी तरे' रो म्हूँ वेद शूँ, तप शूँ,
दान शूँ, ने यज्ञ करवा शूँ थोड़ो ही दीख शकूँ हूँ,
जस्यो थें अबार म्हने देख्यो हो, वस्यो अणा
उपायाँ शूँ नी दीख शकूँ ॥५३॥

भक्त्या त्वनन्यया शक्य अहमेवंविधोऽर्जुन ।
ज्ञातुं द्रष्टुं च तत्वेन प्रवेष्टुं च परन्तप ॥५४॥

१—देवता ने भी या इच्छावणी रेवे। क्यूँके वणा यज्ञादि उपाय कीधा,
पण अनन्य भक्ति नी कीधी।

अर्जुन उवाच ।

दृष्ट्वेदं मानुषं रूपं तव सौम्यं जनार्दन ।
इदानीमस्मि संवृत्तः सचेताः प्रकृतिं गतः ॥५१॥

अर्जुण कही ।

आप री देख यो पाछो, नररूप शुहावणो ।
अब म्हूँ चेत में आयो, घबराहट भी मटी ॥५१॥

यूँ पाछा वणीज रूप में भगवान ने देख ने अर्जुण अर्ज कीधी, के हे जनार्दन, आप रो यो पाछो शुहावणो मनख रो रूप देख ने अबे म्हूं सुखी व्हियो, म्हारो जीव ठकाणे आयो ने पेली री नाईं व्हे गियो । अतरी देर तो म्हूं कई रो कई व्हे गियो हो ॥ ५१ ॥

श्री भगवानुवाच ।

सुदुर्दर्शमिदं रूपं दृष्टवानसि यन्मम ।
देवा अप्यस्य रूपस्य नित्यं दर्शनकाङ्क्षिणः ॥५२॥

श्री भगवान आज्ञाकारी ।

म्हारो सहज नी है यूँ, दीखणो रूप अर्जुण ।
देवाँ रे भी रहे लागी, लालसा ईं सरूप री ॥५२॥

हे पाण्डव, जो म्हारो भक्त है ने म्हारे में हीज लागो रे' है ने जणी रा काम म्हारा हीज हे जावे है, जो सवादाँ में उळझे नी है, नी जो कणी जीव जंतू शूँ वैर राखे है वो म्हारे में आय मले है। अणा मायली एक भी बात जणी में हे वणी में सब बाकी री वाताँ आय जावे है। अणी शिवाय म्हारे मिलवा रो उपाय नी है ॥५५॥

ॐ वो साँचो यूँ श्री भगवान् री भाणी थकी
ब्रह्मविद्या री उपनिषद् में योगशास्त्र में
श्रीकृष्ण ने अर्जुण रा संवाद में
विश्वरूपदर्शनयोग नाम रो
इग्यारमो अध्याय पूरो
हियो ॥ ११ ॥

ज्यो म्हारा हीज कर्म करतो रे'वे है सो यूँ सदा ही आप में मल्या थका जी आप रा भक्त चौमेर शूँ आप ने हीज भजे है, वणा शिवाय कतराक अणाँ सबाँ शूँ न्यारा नी दीखवा वाळा, अविनाशी, जाण ने भी आप ने भजे, अणा दोयाँ में ठीक तरे' शूँ आप ने कूण जाणे है ॥ १ ॥

श्री भगवानुवाच ।

मय्यावेश्य मनो ये मां नित्ययुक्ता उपासते ।
श्रद्धया परयोपेतास्ते मे युक्ततमा मताः ॥२॥

श्री भगवान आज्ञाकारी ।

म्हॉं में ही मन ज्यो मेल, म्हाँ में राच्यो म्हने भजे ।
म्हॉं में ही दृढ़ विश्वास, वो श्रेष्ठ सब शूँ सदा ॥२॥

श्री भगवान हुक्म कीधो, के, म्हें थने जो रूप देखायो, ने जणी रो भजन करवा रो कियो वी थें

भाग्य देखवा शूँ इग्यारमा, ने बारमा, अध्याय [रो भाव स्पष्ट व्हे जायगा। वर्तमान ही क्षण है, भूत भावी क्षण तो विकल्प है। अव्यक्त, अक्षर, विश्व रूप नी है, क्यूँ के ई विशेषण दूजी तरे'री उपासना में लगाया है ने सतत युक्त ने भक्त अव्यक्तोपासक नी है, क्यूँ के ई विशेषण पे'ली त'रे री उपासना रे लगाया है। यूँ ही विशेषणा रो मिलान करवा शूँ यो प्रकरण फेर अधिक स्पष्ट व्हे जाय है।

पे'ली पूछ लो। जी म्हारे में मन लगाय म्हारे में मल्या थका विश्वास शूँ, घणा दृढ़ विश्वास शूँ, भजे है, वी हीज म्हारे में मल्या थका ने म्हने आछे नरे' शूँ जाणवा वाळा में बड़ा है ॥२॥

ये त्वक्षरमनिर्देश्यमव्यक्तं पर्युपासते ।
सर्वत्रगममचिन्त्यं च कूटस्थमचलं ध्रुवम् ॥३॥

ने, जी भजे निराकार, अविनाशी अलेख ने ।
एकशा थिर थोभ्या ने, निर्विकार अचिंत ने ॥३॥

ने, जी दूसरी तरे'रा, नी दीखवा वाळा, नी के' वाय, अविनाशी, सब जगा रे'वा वाळा, विचारणी नी आवे, अचल, गाढ़ा, सब शूँ न्यारा, एक शरीखा, ने चौमेर भजे है ॥३॥

संनियम्येन्द्रियग्रामं सर्वत्र समबुद्धयः ।
ते प्राप्नुवन्ति मामेव सर्वभूतहिते रताः ॥४॥

रोक ने सब इन्द्र्यॉ ने, सबाँ में सम बुद्धि शूँ ।
पावे है वी म्हने हीज, सबाँ रा शुभचिंतक ॥४॥

सब इन्द्रियाँ ने ठा'म ने सबाँ ने शरीखा गणे

है वी म्हने ही ज पावे है। क्यूँ के वी भी सबाँ रो भलो करवा में लागा रियाँ करे है ॥ ४ ॥

क्लेशोऽधिकतरस्तेषामव्यक्तासक्तचेतसाम् ।
अव्यक्ता हि गतिर्दुःखं देहवद्भिरवाप्यते ॥ ५ ॥

निराकार भजे वाँ ने, पड़े मे'नत मोकळी ।
मले नी देहधारी ने, निराकार सहेल में ॥ ५ ॥

पण अश्या ने मे'नत घणी पड़े है। क्यूँके वी अदेख्या ने देखवा री करे है। अण देख्या ने पावणो जतरे शरीर है वतरे घणो दो' रो है यो ईं रो सुभाव है ॥ ५ ॥

ये तु सर्वाणि कर्माणि मयि सन्यस्य मत्पराः ।
अनन्येनैव योगेन मां ध्यायन्त उपासते ॥ ६ ॥

ने, जी मे'ल सबी काम, म्हामें ही राच ने रहे ।
औराँ ने छोड ने निच, म्हने चिंते म्हनें भजे ॥ ६ ॥

ने, जी सब काम म्हारे में मे'ल ने म्हारी भक्ति करे है। म्हारे शिवाय जणा रे ओर आशरो नी व्हे है, ने व्हे ही नी शके है। यूँ जी म्हारो ध्यान

अथवा म्हारी भक्ति करवा वाळा है। (योही ध्यान ने भक्ति है)॥ ६॥

तेषामहं समुद्धर्ता मृत्युसंसारसागरात्।
भवामि न चिरात्पार्थ मय्यावेशितचेतसाम्॥ ७॥

म्हारे में चित्त दे वाँ री, सवाँ री शुण अर्जुण।
म्हूँ हरूँ जन्म ने मौत, देर दार करूँ नहीं॥ ७॥

वो तो वणा रो जोर म्हारे में मे'ल नचीता व्हेगिया है। अणी वास्ते वणा रो, मोत रो भंडार जो संसार सागर है, वणी शूँ म्हने उद्धार करणो पड़े क्यूँ के और वणा रे हे ही कृण, ने वो भी घणो झट करणो पड़े। हे पार्थ, म्हूँ करूँ ने म्हारा रो करूँ अणी में फेर कशर कई रे'शके॥ ७॥

मय्येव मन आधत्स्व मयि बुद्धिं निवेशय।
निवसिष्यसि मय्येव अत ऊर्ध्वं न संशयः॥ ८॥

म्हारे में मन बुद्धी ने, मेलताँ पाण ही अठे।
मलेगा आय म्हाँ में ही, अणी में मे'म नी कई॥ ८॥

अणी वास्ते थूँ वना मे'म रे म्हारे में मन मे'[1]

---

[1]—मन ने बुद्धि शूँ म्हारे में मे'ल, ने पछे वणी बुद्धि ने भी म्हारे में मे'ल (येन त्यजसि त त्यजेति) यो भाव है।

ल दे, ने बुद्धि ने भी म्हारे मे मे'ल दे। बस बुद्धि म्हारे में आई ने थारो घर म्हूँ हीज व्हे जावूँगा। पछे थने भटकणो नी पड़ेगा। अणी में कोई भे'म री वात नी है या नक्की जाणजे ॥ ८॥

अथ चित्तं समाधातु न शक्नोषि मयि स्थिरम् ।
अभ्यासयोगेन ततो मामिच्छाप्तुं धनञ्जय ॥ ६ ॥

जो थारो मन नी ठे'रे, म्हारे ही माँय अर्जुण ।
तो सदा कर अभ्यास, पावा री होय ज्यो म्हने ॥ ६ ॥

जो म्हारे में बरोबर मन नो ठे'र[1] शके ने इग जावे तो पछे अभ्यास म्हारे में करयाँ जा। हे धनंजय, ईं तरे'शूँ भी म्हने पावा रो हक़दार व्हे शके है॥ ६॥

अभ्यासेऽप्यसमर्थोऽसि मत्कर्मपरमो भव ।
मदर्थमपि कर्माणि कुर्वन्सिद्धिमवाप्स्यसि ॥१०॥

१—समाधातुं = समाधि, शाति, स्थिर व्हे ने सदा ही शाति में नी'रेणी आवे (भावस्थितव यो० सू०) तो अभ्यास करयाँ कर यो भाव है।

अभ्यास भी शवे नी तो, म्हारा ही कर्म थूं कर ।
म्हारे तांरे क्रिया कर्म, म्हा में ही आय जायगा ॥१०॥

अभ्यास भी नो' व्हे शके तो म्हारा हीज काम में लगो रियाँ कर क्यूँ के म्हारे वास्ते काम करयाँ जाय तो भी म्हने पाय लेवे हैं ॥१०॥

अथैतदप्यशक्तोऽसि कर्तुं मद्योगमाश्रितः ।
सर्वकर्मफलत्यागं ततः कुरु यतात्मवान् ॥११॥

यूँ भी थाँ शूँ नहीं व्हे तो, मन ने राख गाढ में ।
कर्मां रा छोड़ शारा ही, फलाँ ने कुन्तिनंदन ॥११॥

फेर जो म्हारे आशरे ने म्हारे में मलयो थको यूँ थूँ काम नी कर शके तो आपा ने जीत ने सब कामाँ रा फळ ने छोड़ दे ॥११॥

श्रेयो हि ज्ञानमभ्यासाज्ज्ञानाद्ध्यानं विशिष्यते ।
ध्यानात्कर्मफलत्यागस्त्यागाच्छान्तिरनन्तरम् ॥१२॥

अभ्यास शूँ बड़ो ज्ञान, ज्ञान शूँ ध्यान श्रेष्ठ है ।
ध्यान शूँ फळ रो त्याग, त्याग रे शान्ति साथ ही॥१२॥

यूँ निश्चय ही ज्ञान के कोरा अभ्यास चव्वे

ज्ञान सहित अभ्यास वत्तो है, ने वीं कोरा ज्ञान वच्चे ध्यान सहित ज्ञान वत्तो है, ने वणी कोरा ध्यान वच्चे कर्म रा फळ रो छूटणो अश्यो ध्यान वत्तो है। ने अश्यो छूटणो ने थिर शान्ति-समाधि साथे ही है ज्यूं वर रे साथे वधू गळजोड़ो बाँध्या थका व्हे ज्यूँ है ॥१२॥

अद्वेष्टा सर्वभूतानां मैत्रः करुण एव च।
निर्ममो निरहङ्कारः समदुःख सुखः क्षमी ॥१३॥

अहंकार नहीं सार, ममता सुख दु ख नी।
क्षमा प्रेम दया वाळो, म्हने वा'लो अश्यो घणो ॥१३॥

अशो शांति वाळो जीव मात्र शूँ वैर नी राखे पण शामी मित्रता राखे ने वा भी दया शूँ हीज। म्हारो ने म्हूं ई भी वणी में नी रे'वे ने वो सुख दुःख ने एक शरीखा देख लेवे ने क्षम लेवे ॥१३॥

संतुष्टः सततं योगी यतात्मा दृढ़निश्चयः।
मय्यर्पितमनोबुद्धिर्यो मे भक्तः स मे प्रियः ॥१४॥

ज्यो संतोषी जती जोगी, ज्यो विश्वासी सदा दृढ़।
म्हारे में मन बुद्धी रो, प्यारो भक्त अश्यो म्हने ॥१४॥

वो सदा सुखी सदा योगी सदा ही स्वतन्त्र, ने सदा ही गाढ़ा निश्चय वाळो है। ने ईं रो कारण पे'ली कियो ज्यो है के म्हारे में मन, ने पछे बुद्धि ने मेल दीधा जीं शूँ वो म्हारो भक्त व्हे गियो ने म्हने वो हीज प्यारो है ॥१४॥

यस्मान्नोद्विजते लोको लोकान्नोद्विजते च यः ।
हर्षामर्षभयोद्वेगैर्मुक्तो यः स च मे प्रियः ॥१५॥

अमूभे और नी जीं शूं, अमूभे और शूँ न ज्यो ।
भय घाबरणो हर्ष, रोष हीणो म्हने रुचे ॥१५॥

जणी शूँ कोई दुःख नी पावे ने वो भी कणी शूँ भी दुःखी नी व्हे जो हर्ष, अमर्ष भय, ने घबराहट शूँ छूट्यो वो भी म्हंने प्यारो है ने म्हूँ भी वीं ने प्यारो हूँ ॥१५॥

अनपेक्षः शुचिर्दक्ष उदासीनो गतव्यथः ।
सर्वारम्भपरित्यागी यो मद्भक्तः स मे प्रियः ॥१६॥

शोक नी शौख नी जीं रे, आरम्भ, परवा नहीं ।
सावधान सदा शुद्ध, प्यारो भक्त असयो म्हने ॥१६॥

कणी शूँ भी कई नी चावे, पवित्र, चोक्स,

वना दुःख रो ने उदासीन, सब आरम्भ ने छोड़बा वाळो, अश्यो ज्यो म्हारो भक्त है वो म्हने प्यारो है ॥१६॥

यो न हृष्यति न द्वेष्टि न शोचति न काङ्क्षति ।
शुभाशुभपरित्यागी भक्तिमान्यः स मे प्रियः ॥१७॥

हर्ष शोक नहीं जीं रे, चावना नी अचावना ।
भलो बुरो नहीं जीं रे, वो प्यारो भक्त है म्हने ॥१७॥

जो राजी वेराजी नी व्हे, शोच नी करे, चावना नी राखे, आछो बुरो जणी रे छूट गियो अश्यो जो भक्तिमान व्हे वो म्हने आछो लागे है ॥१७॥

समः शत्रौ च मित्रे च तथा मानापमानयोः ।
शीतोष्णसुखदुःखेषु समः सङ्गविवर्जितः ॥१८॥

सम जो शत्रु मित्राँ में, मान में अपमान में ।
ठंडा में और ऊना में, सुख में दुःख में सम ॥१८॥

जो आपणा पराया में भेद भाव नी राखे, मान अपमान एक ही गणे, ठंडा ऊना ने सुख दुःख ने भी एक जाणे, ने कणी में ही उळझे नी, सब रो मतलब तो यो हीज है ॥१८॥

तुल्यनिन्दास्तुतिर्मौनी संतुष्टो येन केनचित् ।
अनिकेतः स्थिरमतिर्भक्तिमान्मे प्रियो नरः ॥१९॥

सम निन्दास्तुती मौनी, मले जीं में रहे सुखी ।
थिर जो घर शूँ हीण, वो प्यारो भक्त है म्हने ॥१९॥

जो हर कणी वात में सन्तोष कर लेवे, बुराई ने बड़ाई में भी नी उळझे, ने मून राखे मन नी ठगवा दे, जीं रे रें'वारो घर तो वीं री थिर बुद्धि हीज है ने वारला घर री जणी रे ममता नी है. अस्यो भक्ति वाळो मनख म्हने आछो लागे है । ई वातॉं भक्तिवाळाँ में व्हे हीज है ॥१९॥

ये तु धर्म्यामृतमिदं यथोक्तं पर्युपासते ।
श्रद्धधाना मत्परमा भक्तास्तेऽतीव मे प्रियाः ॥२०॥

ॐ तत्सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्म विद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुन संवादे भक्तियोगो नाम द्वादशोऽध्यायः ॥१२॥

राख विश्वास जो चाले, अणी अमृत धर्म पे ।
जो रंग्यो रंग म्हारा में, प्याराँ में वो शिरोमणी ॥२०॥

ॐ तत्सत् इति श्री भगवद्गीता उपनिषद् में ब्रह्मविद्या योग शास्त्र में श्रीकृष्ण अर्जुण संवाद में भक्तियोग नाम बारमो अध्याय समाप्त व्हियो ॥१२॥

ने जो भक्त अणी वणाँ रा सुभाव, अणी आपाँणा सँवाद गीताजी ने ज्यूँ कियो यूँ ही शमझ ने और चौमेर अणोज ने जाण जावे—विश्वास शूँ म्हारा में लागा वना या वात नी व्हे शके—वी यूँ म्हारी भक्ति वाळा भक्त तो म्हने सवाँ वच्चे घणा हीज आछा लागे है ॥२०॥

ॐ वो साँचो यूँ श्री भगवान री फरमाई थकी ब्रह्मविद्या री उपनिषद् योगशास्त्र में श्रीकृष्ण अर्जुण रा संवाद में भक्तियोग नाम रो बारमो अध्याय समाप्त हियो ॥१२॥

ॐ

त्रयोदशोऽध्यायः ।

श्री भगवानुवाच ।

इदं शरीरं कौन्तेय क्षेत्रमित्यभिधीयते ।
एतद्यो वेत्ति तं प्राहुः क्षेत्रज्ञ इति तद्विदः ॥ १ ॥

ॐ तेरमो अध्याय प्रारम्भ ।

श्रीभगवान आज्ञा करी ।

अणी शरीर रो नाम, क्षेत्र थूं जाण अर्जुण ।
अणी शरीर ने जाणे, वीं रो क्षेत्रज्ञ नाम है ॥ १ ॥

ॐ तेरमो अध्याय प्रारम्भ ।

श्री भगवान हुकम कीधो के हे कौन्तेय[1], अणी[2] शरीर ने समझणा, जाणकार, यो खेत है यूँ किया करे है, ने वी हीज अणी खेत ने जाणवा वाळा ने

१—अति प्रिय म्हारा भक्त हूँ कर के'वाय, ईं रो उपाय यो क्षेत्र क्षेत्रज्ञ विभाग योग है। यूँ बारमाँ अध्याय सूँ अणी अध्याय रो सम्बन्ध है।
२—'यो' ने 'ईं ने जाणे जो' अणी में साक्षात्कार है।

ने जो भक्त अणी वर्णां रा सुभाव, अणी आपाँणा सँवाद गीताजी ने ज्यूँ कियो यूँ ही शमझ ने और चौमेर अणीज ने जाण जावे—विश्वास शूँ म्हारा में लागा वना या वात नी व्हे शके—वी यूँ म्हारी भक्ति वाळा भक्त तो म्हने सबाँ वच्चे घणा हीज आछा लागे है ॥२०॥

ॐ वो साँचो यूँ श्री भगवान री फरमाई थकी ब्रह्मविद्या री उपनिषद् योगशास्त्र में श्रीकृष्ण अर्जुण रा संवाद में भक्तियोग नाम रो बारमो अध्याय समाप्त व्हियो ॥१२॥

ॐ

त्रयोदशोऽध्यायः ।

श्री भगवानुवाच ।

इदं शरीरं कौन्तेय क्षेत्रमित्यभिधीयते ।
एतद्यो वेत्ति तं प्राहुः क्षेत्रज्ञ इति तद्विदः ॥ १ ॥

ॐ तेरमो अध्याय प्रारम्भ ।

श्रीभगवान आज्ञा करी ।

अणी शरीर रो नाम, क्षेत्र यूँ जाण अर्जुण ।
अणी शरीर ने जाणे, वीं रो क्षेत्रज्ञ नाम है ॥ १ ॥

ॐ तेरमो अध्याय प्रारम्भ ।

श्री भगवान हुकम कीधो के हे कौन्तेय, अणी[2] शरीर ने शमभणा, जाणकार, यो खेत है यूँ किया करे है, ने वी हीज अणी खेत ने जाणवा वाळा ने

१—अति प्रिय म्हारा भक्त कूँ कर के'णाय, ई रो उपाय यो क्षेत्र क्षेत्रज्ञ विभाग योग है। यूँ बारमाँ अध्याय सूँ अणी अध्याय रो सम्बन्ध है।
२—'यो' ने 'ई ने जाणे जो' अणी में साक्षात्कार है।

ने जो भक्त अणी वणाँ रा सुभाव, अणी आपाँणा सँवाद गीताजी ने ज्यूँ कियो यूँ ही शमझ ने और चौमेर अणीज ने जाण जावे—विश्वास शूँ म्हारा में लागा वना या वात नी व्हे शके—वी यूँ म्हारी भक्ति वाळा भक्त तो म्हने सवाँ वच्चे घणा हीज आछा लागे है ॥२०॥

ॐ वो साँचो यूँ श्री भगवान री फरमाई थकी ब्रह्मविद्या री उपनिषद् योगशास्त्र में श्रीकृष्ण अर्जुण रा संवाद में भक्तियोग नाम रो वारमो अध्याय समाप्त हियो ॥१२॥

ॐ

त्रयोदशोऽध्यायः ।

श्री भगवानुवाच ।

इद शरीरं कौन्तेय क्षेत्रमित्यभिधीयते ।
एतद्यो वेत्ति त प्राहु. क्षेत्रज्ञ इति तद्विदः ॥ १ ॥

ॐ[1] तेरमो अध्याय प्रारम्भ ।

श्रीभगवान आज्ञा करी ।

अणी शरीर रो नाम, क्षेत्र थूँ जाण अर्जुण ।
अणी शरीर ने जाणे, वीं रो क्षेत्रज्ञ नाम है ॥ १ ॥

ॐ तेरमो अध्याय प्रारम्भ ।

श्री भगवान हुकम कीधो के हे कौन्तेय, अणी[2] शरीर ने शमझणा, जाणकार, यो खेत है यूँ किया करे है, ने वी हीज अणी खेत ने जाणवा वाळा ने

१—अति प्रिय म्हारा भक्त कूँकर केंवाय, ईं रो उपाय यो क्षेत्र क्षेत्रज्ञ विमाग योग है। यूँ बारमाँ अध्याय शूँ अणी अध्याय रो सम्बन्ध है।
२—'यो' ने 'ईं ने जाणे जो' अणी में साक्षात्कार है ।

(खेतवाळा ने) 'क्षेत्रज्ञ' यूँ अणी नाम शूँ[1] कियाँ करे है ॥ १ ॥

क्षेत्रज्ञं[2] चापि मां विद्धि सर्वक्षेत्रेषु भारत ।
क्षेत्रक्षेत्रज्ञयोर्ज्ञानं यत्तज्ज्ञानं मतं मम ॥ २ ॥

क्षेत्रज्ञ[3] भी म्हने जाण सारा ही क्षेत्र माँयने ।
क्षेत्र क्षेत्रज्ञ रा हीज ज्ञान ने ज्ञान जाण यूँ ॥ २ ॥

हे भारत, शघळा ही खेताँ में खेत वाळो म्हने

१—क्षेत्र क्षेत्रज्ञ तो कियाँ करे है, दूज्यूँ यो तो प्रत्यक्ष दीखे है—यो भाव है ।

२—'क्षेत्रज्ञ म्हने भी जाण' अणी शूँ दो क्षेत्रज्ञ सावत हो है । एक दूसरो है मे एक म्हूँ भी हूँ । यो दूसरो ही सत्व वाजे है, ने सत्व पुरुष रो विवेक ही मुख्य विवेक है, ने यो ही म्हारी राय में ज्ञान है, और अणी वना रा अज्ञान हीज है । ई दो ही क्षेत्रज्ञ के'वा रो यो भाव है के सत्व तो गुण ने जाण नी शके, ने पुरुष जो चैतन्य-निर्गुण व्हेवा शूँ क्षेत्र (गुण) ने जाणणो नी जाणणो वणी में व्हे नी शके, अणी शूँ मल्या ही जाणे ।।ई री बारीकी ही ज्ञान है ने यो ही संयोग वियोग है जणी ने सांख्य में मौलिक दशा में कियो है ।

३—सब क्षेत्रों में म्हने भी क्षेत्रज्ञ जाण, क्यूँ के यो हीज विशेष दर्शन है, क्यूँ के यूँ तो न्यारा न्यारा क्षेत्रों में न्यारा न्यारा क्षेत्रज्ञ सब ही जाणे पण यी तो अद्भुत (खेताँ में जनावराँ ने डरावा ने घणाया थका घास रा पुरुष) है । यूँ अणी शिवाय अतरो फेर जाण ले ।

हीज जाण जे। यो यूँ जो खेत ने खेत वाळा ने जाणणो है सो हीज म्हारी जाण में जाणणो है[2] ॥२॥

तत्क्षेत्रं यच्च यादृक्च यद्विकारि यतश्च यत् ।
स च यो यत्प्रभावश्च तत्समासेन मे शृणु ॥ ३ ॥

यो जो क्षेत्र जस्यो ज्यूँ है, जीशूँ ज्यूँ ने जणी तरे।
क्षेत्रज्ञ भी जस्यो है सो, कहूँ थोड़ाक में थने ॥ ३ ॥

वो खेत जो है, जस्यो है, अणी में ज्यो ज्यो विकार व्हियाँ करे है, वो विकार व्हे है जी भी जणी जणी शूँ ज्यो ज्यो व्हे है ने वो खेतवाळो भी ज्यो ने जणी महिमा वाळो भी है या वात थोड़ाक में म्हारे शूँ हीज शुण जे[3] ॥ ३ ॥

ऋषिभिर्बहुधा गीतं छन्दोभिर्विविधैः पृथक् ।
ब्रह्मसूत्रपदैश्चैव हेतुमद्भिर्विनिश्चितैः ॥ ४ ॥

१—खेत में अड़मा व्हे वी म्हने शामझे मती। वणाँ ने तो पशु यूँ शामझे है के ई पुरुष है। दूज्यूँ वो तो खेत हीज है (चारो आदि खेत रो विकार हीज है)। यूँ ही सत्वाँ ने शामझणा चावे-यो भाव है।

२—अणी शिवाय रो ज्ञान ही अज्ञान है—यो भाव है।

३—विस्तार शूँ नरी जगाँ ऋषियाँ कियो जीशूँ यो संक्षेप में म्हाँ शूँ (म्हारा शूँ) शुण।

नरा ही वेदशास्त्राँ शूँ, नरा ही ऋषियाँ कियो।
नरी ही भाँति यो ज्ञान, नरी ही देखभाळ शूँ ॥ ४ ॥

अणीज वात ने ऋषियाँ नरी तरे' शूँ को है, नरा ही छन्दा मे न्यारी २ तरे' शूँ की तो या हीज है। थोड़ा २ अत्तराँ में शमझाय शमझाय ने आछी तरे शूँ निश्चय कीधी थकी नकी वात वणा की है वा या हीज है ॥ ४ ॥

महाभूतान्यहंकारो बुद्धिरव्यक्तमेव च ।
इन्द्रियाणि दशैकं च पञ्च चेन्द्रियगोचराः ॥ ५॥

पंचतत्व, अहंकार, मूलप्रकृति, बुद्धि भी।
ग्यारा ही इंद्रियाँ, और, इंद्रयाँ रा ज्ञान पांच ही ॥५॥

वणी सब रो सार यो है के ई दीखे जी पांच महाभूत, अणा ने देखवा रो दावो करे सो अहंकार, ईंरो निश्चय करे सो बुद्धि, ने या जणी शूँ व्हे सो अव्यक्त, (यूँ तो सब अव्यक्त हीज है पण ई तो समझ रा भेद कीधा है) पांच ज्ञानेंद्रियाँ, पांच कर्मेंद्रियाँ ने मन और पांच ही इंद्रियाँ शूँ जणाय जी तन्मात्रा, ई चोईश ही तत्व हीज है ॥ ५ ॥

इच्छा द्वेषः सुखं दुःखं सङ्घातश्चेतना धृतिः ।
एतत्क्षेत्रं समासेन सविकारमुदाहृतं ॥६॥

सुख इच्छा द्वेष दुःख, चेतना देह धारणा ।
थोड़ा में क्षेत्र यो यूँ म्हें, क्यो फेलाव साथ ही ॥६॥

इच्छा (चावणो), खार (नीचावणो), सुख, दुख, शरीर, चेतना ने धारण यो खेत म्हें थोड़ाक में के'दीधो ने अणी में व्हेवा वाळा विकार भी चोईश शिवाय रा है जी के'दीधा ॥६॥

क्षमानित्वमदम्भित्वमहिंसा क्षान्तिरार्जवम् ।
आचार्योपासनं शौच स्थैर्यमात्मविनिग्रहः ॥७॥

क्षमा सूधपणो दाया, मान पाखण्ड हीणता ।
थिरता मन री रोक, गुरु सेवा पवित्रता ॥७॥

अतरा में ही थारे ध्यान में नी आई व्हे तो म्हूँ थने ज्ञान[२] भी समझाय देवूँ । घमण्ड नी

१—ने या जो पे'ली ही की ही के खेत ने जाणे सो खेत वालो है ने वो खेत वालो म्हूँ हीज हूँ अबे म्हारी प्राप्ति में कई कदार री शो यूँ ही के।
२—अणा वाताँ सूँ क्षेत्र क्षेत्रज्ञ विभाग समझ में आय जावे, क्यूँके चित्त शुद्ध व्हे जावे ने माया भक्ता रा ई सुभाव है ।

करणो देखावो नी करणो, दुःख नी देणो, क्षमा राखणी, बड़ाँ री सेवा करणी, पवित्र रे'णो घव-रावणो नी, आपा हीण नी व्हेणो ॥७॥

इन्द्रियार्थेषु वैराग्यमनहङ्कार एव च ।
जन्ममृत्युजराव्याधिदुःखदोषानुदर्शनम् ॥ ८ ॥

विषयाँ माँय वैराग, घमंड करणो नहीं ।
जन्म मौत जरा रोग, दुःखाँ रा दोष शोचणा ॥८॥

इंद्रियाँ रा सुखाँ में नी उळझणो, अणा ने आपणा नी हीज मानणा, जन्म रा, मरवा रा, बुढ़ापा रा ने रोगाँ रा दुःखाँ रो ने अणा री खोटा-याँ रो विचार करणो ॥ ८ ॥

असक्तिरनभिष्वङ्गः पुत्रदारगृहादिषु ।
नित्यं च समचित्तत्वमिष्टानिष्टोपपत्तिषु ॥ ९ ॥

घर पवार री पर्वा, राग्र ने फसणो नहीं ।
आछा बुरा सबाँ ही में समता राखणी सदा ॥ ९ ॥

बेटा, लुगाई, घर, आदिक बारली वाताँ में उळझ ने आपो नी भूल जाणो, आँपा रा ई है आपाँ याँ रा नी। आछो बुरो व्हे तो रेंवे जणी में

मन नी डुलवा देणो पण मन ने तो एक शरीखा रे'वा वाळा में राखणो ॥ ६ ॥

मयि चानन्ययोगेन भक्तिरव्यभिचारिणी ।
विविक्तदेशसेवित्वमरतिर्जनसंसदि ॥ १० ॥

अचला भक्ति म्हाँ में ही, राखणी मन मे'ल ने ।
एकान्त जायगाँ रेणो, लोगां में रुच हीणता ॥१०॥

और म्हारे में अचल प्रेम करणो म्हारे ने वणी रे वचे दूसरो नी आवे तो पछे आपो आप ही अचल व्हे हीज एकला रेणो मनखाँ में रे'वा रो शोख नी राखणो ॥१०॥

अध्यात्मज्ञाननित्यत्वं तत्वज्ञानार्थदर्शनम् ।
एतज्ज्ञानमिति प्रोक्तमज्ञानं यदतोऽन्यथा ॥११॥

आप ने देखणो शागे, ज्ञान ने सांच मानणो ।
अणी रो नाम है ज्ञान, और अज्ञान है सबी ॥११॥

ज्ञान ने नजीक शूँ नजीक शमझ लेवा शूँ वो अडग व्हे जावे ने तत्व ज्ञान रा अर्थ ने शागे देखणो । वार्ताँ में ही नी रे'णो अणी रो हीज नाम

ज्ञान है, यूँ ठेठ शूँ के'ता आया है ने अणी शूँ ऊँधो व्हे तो अज्ञान है यूँ जाणणो ॥११॥

ज्ञेयं यत्तत्प्रवक्ष्यामि यज्ज्ञात्वामृतमश्नुते ।
अनादिमत्परं ब्रह्म न सत्तन्नासदुच्यते ॥१२॥

जाणवा जोग केवूं वो, जो जाण्या मरणो मटे ।
जो अनादि परब्रह्म, साँच नी झूँठ भी नहीं ॥१२॥

अबे अणी शूँ जो जाण्यो जाय है ने जीं ने जाण्या ने जन्म मरण मट जाय है वो थने केवूँ हूँ वो आदि वाळो नी है सब शूँ बदे है वीं ने साँच झूँठ भी नी के'वाय शके ॥ १२ ॥

सर्वतः पाणिपादं तत्सर्वतोऽक्षिशिरोमुखम् ।
सर्वतःश्रुतिमल्लोके सर्वमावृत्य तिष्ठति ॥ १३ ॥

हात पांव तथा आँखा, जणी रा मुखं कान भी ।
फेल्या है शघलां आड़ी, सवाँ में व्याप जो रह्यो॥१३॥

वो चौमेर हात पग आँख माथा मूँड़ा वाळो है, चौमेर वणी रा कान है ने वो हीज सवाँ ने थिटोल ने थिर है ॥ १३ ॥

सर्वेन्द्रियगुणाभासं सर्वेन्द्रियविवर्जितम् ।
असक्तं सर्वभृच्चैव निर्गुणं गुणभोक्तृ च ॥ १४ ॥

जणी शूँ इंद्रियाँ जाणे, इन्द्रियाँ शूँ अलेप ज्यो ।
निर्गुणी गुण रो भोगी, सब ने धार ने जुदो ॥१४॥

जो थने थोड़ी देर पे'ली दीख्यो ही हो वो सब इंद्रियाँ शूँ न्यारो हे ने भी सब इंद्रियाँ रा गुणाँ ने जाणे है (मल्यो थको है) गुणाँ रे साथे है । वना उळझ्यो थको भी सबाँ ने धारण करे है वना गुण रो भी गुणा ने भोगवा वाळो हीज है ॥ १४ ॥

बहिरन्तश्च भूतानामचरं चरमेव च ।
सूक्ष्मत्वात्तदविज्ञेयं दूरस्थं चान्तिके च तत् ॥ १५ ॥

सबाँ रे बारणे माँय, जो सदा थिर चंचल ।
झीणो नी जाण में आवे, घणो छेटी नजीक भी ॥१५॥

सबाँ रे बारणे ने माँय भी है। कई नी खावे (भोगे नी) ने खावे हीज है (भोगे हीज है) बारीकपणा शूँ हीज नी जाण्यो जाय, दूज्यूँ और कूण जाण्यो जाय है। छेटी रे'वा वाळो ने वो हीज नजीक रे'वा वाळो है ॥ १५ ॥

अविभक्तं च भूतेषु विभक्तमिव च स्थितम् ।
भूतभर्तृ च तज्ज्ञेयं ग्रसिष्णु प्रभविष्णु च ॥ १६ ॥

एक ही सब रे मांय, दीखे न्यारो ज्युँ ही वुही।
पाळे खावे उपावे वो, सबाँ ने सब ही जगाँ ॥ १६ ॥

सबां में एक ही है ने न्यारो र हे ज्यूँ रे'वा वाळो है । सबाँ ने पाळवा वाळो भी वीं ने ही जाणणो चावे, ने मटावा वाळो ने बणावा वाळो भी वो ही है ॥ १६ ॥

ज्योतिषामपि तज्ज्योतिस्तमसः परमुच्यते ।
ज्ञानं ज्ञेयं ज्ञानगम्यं हृदि सर्वस्य धिष्ठितम् ॥ १७ ॥

उजाळाँ रो उजाळो वो, अंधारा शूँ परे सदा ।
ज्ञान शूँ जाणवा जोगं, ज्ञान वो हिरदे वशे ॥ १७ ॥

उजाळा में भी उजाळो जणी शूँ शावत व्हे रियो है अस्यो उजाळो वो है अँधारा शूँ न्यारो घो होज कियो जाय है । दूज्यूँ न्यारो व्हे ने और गा थोड़ो ही है वीं रे साथे ही है । ज्ञान, जाणे

—ई तीन ही काम वीं शूँ ही साबत व्हे है । 'जन्माद्यस्य यतः' । (ब्रह्मसूत्र)

ज्यो, ने जाणणो, भो जणो शूँ जाण्यो जाय अश्यो जाणशूँ जणाय ज्यो, वो, यो सवाँ रे हिया में सदा विराजमान है ॥ १७ ॥

इति क्षेत्रं तथा ज्ञानं ज्ञेयं चोक्तं समासतः ।
मद्भक्त एतद्विज्ञाय मद्भावायोपपद्यते ॥ १८ ॥

क्षेत्र क्षेत्रज्ञ ने ज्ञान, यो म्हें थोड़ाक मे कह्यो ।
अणी ने जाण नें म्हारो, भक्त पावे म्हने सदा ॥ १८ ॥

देख ! यूँ म्हें थने थोड़ा में ही साफ साफ खेत, ज्ञान, ने ज्ञान अज्ञान शूँ जणाय ज्यो, चौड़े के'दीदो। म्हारे में प्रेम हे, तो यो जाणता ही म्हारो भाव वणी में आय जावे ने पाछो कदी नी मटे क्यूँ के यो तो सुभाव है ॥ १८ ॥

प्रकृतिं पुरुषं चैव विद्ध्यनादी उभावपि ।
विकारांश्च गुणांश्चैव विद्धि प्रकृतिसम्भवान् ॥ १६ ॥

पुरुष प्रकृती दोई, अनादी जाण अर्जुण ।
गुणाँ ने ने विकाराँ ने, जाण प्रकृति शूँ व्हिया॥१६॥

अबे अणीज ने थोड़ा में फेर समझ के एक (खेत) तो प्रकृति वाजे ने एक (खेतवाळो) पुरुष

वाजे ने अणा शिवाय और कई नी है ने ई हीज दोही अनादि है या थूँ जाण ले, ने, व्हा, बस, सब जाण लीधो, कृत कृत्य हे गियो। अणी शिवाय जतरा विकार दीखे सब गुण हीज है। गुण ने प्रकृति एक हो है या थूँ निश्चय जाणले ॥ १६ ॥

कार्यकारणकर्तृत्वे हेतुः प्रकृतिरुच्यते ।
पुरुषः सुखदुःखाना भोक्तृत्वे हेतुरुच्यते ॥२०॥

ज्यो करे होय ज्यो जी शूँ, ई है प्रकृति शूँ सबी।
सुख ने दुख रो भोग, जाण पूरुष शूँ सबी ॥२०॥

काम, इंद्रियाँ ने करता ई प्रकृति शूँ (खेत में) किया जाय है ने सुख दुःख रो भोग पुरुष शूँ (खेतवाळा में) कियो जाय है दूज्यूँ के'वा री वात थोड़ी ही है, शागे है ॥२०॥

पुरुषः प्रकृतिस्थो हि भुंड्क्ते प्रकृतिजान् गुणान् ।
कारणं गुणसङ्गोऽस्य सदसद्योनिजन्मसु ॥२१॥

क्षेत्रज्ञ क्षेत्र में आय, क्षेत्र रा गुण भोगवे ।
गुणां में यो फँशे जीं शूँ, पावे जूण भली बुरी ॥२१॥

देख ने देखे तो पुरुष में भोग थोड़ो ही है। यो

तो प्रकृति में होज है पण पुरुष भी प्रकृति रे साथे ही रे है, जीं शूँ यो भोगे है पण है, तो प्रकृति रा हीज गुण, पण यो वणी रा गुणं ने आपणा मान लेवे अणीज वास्ते ई रो ऊँची नीची जूण में जनम मरण सुख दुःख व्हे ॥२१॥

उपद्रष्टानुमन्ता च भर्ता भोक्ता महेश्वरः ।
परमात्मेति चाप्युक्तो देहेऽस्मिन्पुरुषः परः ॥२२॥

देखे जाणे भरे भोगे, अणी ने उळभ्याँ वना ।
अश्यो ई देह में सो ही, पर पुरुष ईश्वर ॥२२॥

देखवा रे साथे फेर देखवा वाळो जाणवा रे साथे केवल जाणवा वालो यूँ यूँ ही भरण करवा साथ केवल भरण करवा वाळो ने भोगवा रे साथे केवल भोगवा वाळो परम पुरुष, परमात्मा, ने महेश्वर भी वो हीज वाजे है ने यो और कठे ही नी है देह में हीज ने अणीज देह में है ॥ २ ॥

य एवं वेत्ति पुरुषं प्रकृतिं च गुणैः सह ।
सर्वथा वर्तमानोऽपि न स भूयोऽभिजायते ॥२३॥

यूँ ज्यो पुरुष ने जाण्यो, जाण्यो ज्यो धर्म क्षेत्र रा ।
शारो काम करे तो भी, जमा रो जीत ग्यो वुही ॥२३॥

जो अणी तरें'शूँ पुरुष ने जाण लीधो ने प्रकृति ने गुणाँ सेती जाण लीधी (बात एक ही है) वो सब तरें'शूँ सदा ही बर्ताव करे तो भी फेर वणी रो तो जन्म नीज है ॥२३॥

ध्यानेनात्मनि पश्यन्ति केचिदात्मानमात्मना ।
अन्ये साङ्ख्येन योगेन कर्मयोगेन चापरे ॥२४॥

आप शूँ आप में देखे, आप ने ध्यान में नरा ।
नराई त्याग शूँ देखे, नराई कर्म योग शूँ ॥२४॥

अणी ने कतराक[1] तो आपणो ध्यान करता थका आपणे में ही आप रूप ने देख लेवे है (जणायजाय है)। कतराक सांख्य[2] योग शूँ ने कतराक कर्मयोग[3] शूँ देखे है ॥२४॥

अन्ये त्वेवमजानन्तः श्रुत्वान्येभ्य उपासते ।
तेऽपि चातितरन्त्येव मृत्युं श्रुतिपरायणाः ॥२५॥

१—ऊह ईं रो नाम है। २—शब्द ईं नेके है। ३—अणी में तीन ही दुःख विचात ने दान थाया है।

औराँ शूँ शुण ने हीज, उपासे कतराक तो ।
यूँ शुणे प्रेम शूँ वी भी, जीते जनम मोत ने ॥२५॥

कतराक यूँ नी कर ने दूसरा जाणकाराँ शूँशुण ने वणीज में लागा रे'वे है वी भी वणी शुरया थका ने वार वार याद करता थका मोत ने जरूर बिलकुल तरजावे है, क्यूँ के वणा रे दूसराँ रो कमाई हाते फेळची थकी आय जाय है ॥२५॥

यावत्सञ्जायते किञ्चित्सत्त्वं स्थावरजङ्गमम् ।
क्षेत्रक्षेत्रज्ञसंयोगात्तद्विद्धि भरतर्षभ ॥ २६ ॥

जो कईं उपजे कोई, चराचर कर्णी तरे ।
क्षेत्र क्षेत्रज्ञ दोयाँ रा, मेळ शूँ हीज जाण वो ॥२६॥

हे भरतर्षभ! अणी वास्ते थूँ म्हारे शूँ शुण ने से'ल में तर जा। या वात शूधी शमझ ले के चराचर जो कोई जतरा वणे है वी सव खेत ने खेत वाळा शिवाय कईं नी है यो सव अणा रो मेळ हीज संसार है यूँ जाण ले ॥२६॥

१—अणी में सुहृत् प्राप्ति गुरु प्राप्ति आयगी, ने अध्ययन भी ।

समं सर्वेषु भूतेषु तिष्ठन्तं परमेश्वरम् ।
विनश्यत्स्वविनश्यन्तं यः पश्यति स पश्यति ॥२७॥

परमेश्वर साराँ में, विराजे एकशो सदा ।
नाशी में अविनाशी ने, जाणे सो ही सुजाण है ॥२७॥

ऊँचा नीचा सबाँ माँय ने एक सरीखो सदा थिर परमेश्वर ने जो देखे है वो हीज देखे है । दूजा तो छतीं आँखा आँधा है । मटता थका ने देखे तो अमट दीख्यो हीज ॥२७॥

समं पश्यन्हि सर्वत्र समवस्थितमीश्वरम् ।
न हिनस्त्यात्मनात्मानं ततो याति परां गतिम् ॥२८॥

परमेश्वर ने देखे, एकशो सब माँय ज्यो ।
वो ही नी आप घाती है, वो ही पावे परंपद ॥२८॥

यूँ सब जगा एक शरीखो, ठीक तरे शूँ, है ज्यूँ ईश्वर ने देखतो थको आप घाती नी है, ने आपघात नी करे ने परम पद पाय लेवे । मरवा शूँ परमपद नी मले है ॥२८॥

प्रकृत्यैव च कर्माणि क्रियमाणानि सर्वशः ।
यः पश्यति तथा[illegible] स [illegible] ॥२९॥

प्रकृती ही करे कर्म, यूँ देखे जो सबी जगा ।
अकर्ता आप ने देखे, वीं रो ही देखणों सही ॥२६॥

प्रकृति ने हीज चौमेर शूँ सब काम करती थकी जो देख लेवे वीं अकर्ता आत्मा ने देख लीधो, ई में के'वा री ही कई री, क्यूँ के है ज्यूँ वणी हीज देख्यो है ॥२६॥

यदा भूतपृथग्भावमेकस्थमनुपश्यति ।
तत एव च विस्तारं ब्रह्म संपद्यते तदा ॥३०॥

शमाया एक ही माँय, सबाँ ने देख ले जदी ।
वीं शूँ ही फेलता देखे, जदी वो ब्रह्म पाय ले ॥३०॥

जदी अणा रा न्यारा पणा ने भी एक में हीज थिर देख वाने भी साथे ही देख ले ने वणीज शूँ यूँ ही विस्तार भी देख ले जदी ठीक तरे'शूँ ब्रह्म मल गियो ईं में के'णी ही कई ॥३०॥

अनादित्वान्निर्गुणत्वात्परमात्मायमव्ययः ।
शरीरस्थोऽपि कौन्तेय न करोति न लिप्यते ॥३१॥

अनादी अविनाशी है, निर्गुणी परमातमा ।
नी करे नी फँशे ईं शूँ, रहे वो भी शरीर में ॥३१॥

हे कौन्तेय ! आदी नी व्हेवा शूँ, गुण नी व्हेवा शूँ, परमात्मा व्हेवा शूँ, ने अविनाशी व्हेवा शूँ, यो शरीर में है तो भी नी तो कई करे ने नी जो कदी उळझे या चौड़े है ॥३१॥

यथा सर्वगतं सौक्ष्म्यादाकाशं नोपलिप्यते
सर्वत्रावस्थितो देहे तथात्मा नोपलिप्यते ॥३२॥

झीणो आकाश होवा शूँ, ज्यूँ अड़े नी कणी जगाँ।
यना अठ्याँ रहे त्यूँ ही, आतमा सब ही जगाँ ॥३२॥

थने यूँ भेम व्हे के शरीर में रे'ने कूँकर नी उळझे तो ज्यूँ आकाश सब जगाँ है तो भी बारीक व्हेवा शूँ कणी रे ही नी अटके. यूँ ही सब जगा रे'वा वाळो आतमा देह में भी नी उळझे है। यो तो आकाश रो भी आत्मा है ॥३२॥

यथा प्रकाशयत्येकः कृत्स्नं लोकमिमं रविः ।
क्षेत्रं क्षेत्री तथा कृत्स्नं प्रकाशयति भारत ॥३३॥

प्रकाशे एक ही सूर्य, सारा संसार ने ज्यूँ ही ।
क्षेत्र ने यूँ प्रकाशे है, क्षेत्रज्ञ सब ही जगाँ ॥३३॥

यो अकेलो सब खेताने फूँकर प्रकाशित करे है यूँ भे'म व्हे तो ज्यूँ एकलो यो सूर्य आखा संसार ने प्रकाशित करे यूँ ही यो एकलो खेत वाळो सब खेतों ने प्रकाश दियो है। हे भारत, ईं में भी कई भे'म है ॥३३॥

क्षेत्रक्षेत्रज्ञयोरेवमन्तरं ज्ञानचक्षुषा ।
भूतप्रकृतिमोक्षं च ये विदुर्यान्ति ते परम् ॥३४॥

ॐ तत्सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे क्षेत्रक्षेत्रज्ञविभागयोगो नाम त्रयोदशोऽध्यायः ॥१३॥

खेत खेतज्ञ रो भेद, यूँ जाणे ज्ञान नेत्र शूँ ।
माया रो नाश भी जाणे, पावे परम धाम वो ॥३४॥

ॐ तत्सत् इति श्रीमद्भगवद्गीता उपनिषद् में ब्रह्म विद्या योगशास्त्र में श्री कृष्णार्जुन संवाद में खेतखेतज्ञ-विभागयोग नाम तेरमो अध्याय समाप्त व्हियो ॥१३॥

यूँ यो खेत, ने खेत ने जाणवा वाळा रो भेद ज्ञान री आँख शूँ जाणे है। "ज्ञान" यस अठे ही ज

जणायो ने 'यो जाणे है' यो जी जाण्या ने वो परम ब्रह्म ने भी पाय लीधा। अणी शिवाय और परम पद कई नी है ने अणी संसार रो सुभाव ओळ-खणो ही मोच्छ है। दूज्यूँ तो अणजाण री आँगणे मोत है। ने अणाँ रो सुभाव जाण्यो ने आपणो ज्ञान व्हियो ॥३४॥

ॐ वो साँच यूँ श्री भगवान री भापी थकी
ब्रह्मविद्या री उपनिषत् योगशास्त्र में श्री
कृष्ण अर्जुण रा संवाद में क्षेत्रक्षेत्रज्ञ-
विभागयोग नाम तेरमो अध्याय
पूरो व्हियो ॥ १३ ॥

ॐ

चतुर्दशोऽध्याय यः

श्री भगवानुवाच ।

परं भूयः प्रवक्ष्यामि ज्ञानानां ज्ञानमुत्तमम् ।
यज्ज्ञात्वा मुनयः सर्वे परां सिद्धिमितो गताः ॥ १ ॥

ॐ चवदमो अध्याय प्रारंभ।

श्री भगवान् आज्ञा करी।

थने आछो कहूँ फेर, ज्ञानाँ में ज्ञान उत्तम ।
जींने जाण म्हने पाया, अठे ही मुनि मोकळा ॥ १ ॥

ॐ चवदमो अध्याय प्रारंभ।

श्री भगवान् हुकम कीधो के, फेर थने सब ज्ञानां में उत्तम, ने सब ज्ञानां शूँ भी न्यारो ही यो ज्ञानां रो ही ज्ञान[1] के'वूँ हूँ। जतरा महात्मा अठा

1—पदार्थां रो जाणणो जणी जणी ज्ञान शूँ व्हे, वी 'ज्ञान' है। वणा संपूर्ण ज्ञानाँ रो ही ज्ञान जणी शूँ व्हे, यो 'ज्ञानाँ रो ही ज्ञान' है, ने यो अतरा ज्ञानाँ ज्यूँ नी है, पण उत्तम है, ने अणी शिवा य और

शूँ छूटने परम पद ने पाया है, वी अणी ज्ञान शूँ अशी पदवी पाया, यो वो हीज ज्ञान थने आज म्हूँ के'रियो हूँ ॥ १ ॥

इद ज्ञानमुपाश्रित्य मम साधर्म्यमागताः ।
सर्गेऽपि नोपजायन्ते प्रलये न व्यथन्ति च ॥ २ ॥

अणीज ज्ञान ने धार, पावे म्हारा सरूप ने ।
जन्म ने मोत नी पावे, खूट जावे सबी दुख ॥ २ ॥

अणी ज्ञान रो हीज आशरो लेने, वी म्हारो रूप हीज पाय लीधा है। अबे वी नी तो अणी संसार रा दुख भोगे, ने भोगे ही कूँकर, आखा संसार रो प्रलय व्हे तो भी वी तो यूँ रा यूँ ही रे' वे ने आखो जगत वणे तो भी वी तो वणे ही नी। वख्या वना कूँकर वगड़े ॥ २ ॥

मम योनिर्महद् ब्रह्म तास्मिन् गर्भं दधाम्यहम् ।
सम्भवः सर्वभूताना ततो भवति भारत ॥ ३ ॥

कोई परम सिद्धि (ईश्वरप्राप्ति) है ही नी। अणी ने जाण्या ने सय ल्दियो, या असंख्य दाण पतवाणी थकी है। (सदा ज्ञाताश्रिताह- त्यस्त प्र०) 'फेर' के' यारो मतलब यो है के आखी गीता में यो ही ज कियो है।

म्हारी नारी महामाया, सदा री गुण आगरी ।
जणे संपूर्ण ससार. म्हारे शूँ गर्भ धारने ॥ ३ ॥

गुण, 'महद् ब्रह्म' बुद्धि रो नाम है, अणी में म्हूँ हीज गर्भाधान करूँ हूँ । हे भारत, ने अणीज शूँ सब वणवा वाळा वणे है ॥ ३ ॥

सर्वयोनिषु कौन्तेय मूर्तय सम्भवन्ति या· ।
तासा ब्रह्म महद्योनिरह बीजप्रद पिता ॥ ४ ॥

जो जठे उपजे कोई, कणी भी जूण मांय ने ।
महामाया जणे सो ही, म्हारो ही अश पाय ने ॥ ४ ॥

हे कौन्तेय, ई जतरी मूरत्यॉ थने वणती थकी दीखे है, वी न्यारी न्यारी जूण में वणती व्हे ज्यूँ जणावे है । पण देख ने देखे तो अणॉ सबॉ री जूण तो एक 'महद् ब्रह्म' हीज है, ने वणी में बीज देवा वाळो सबॉ गे पिता म्हॅ हीज हूँ, अर्थात् सबॉ रा मा बाप म्हे दो हीज हॉ ॥ ४ ॥

सत्व रजस्तम इति गुणा प्रकृतिसम्भवा ।
निबध्नन्ति महाबाहो देहे देहिनमव्ययम् ॥ ५ ॥

तीन ही गुण माया रा, सत्व ने रज ने तम ।
देह में जीव ने बाँधे, अविनाशी अलेप ने ॥ ५ ॥

हे महाबाहो, अणी प्रकृति रो यो गुणाव है के अविनाशी अणी देह वाळा (खेत वाला) ने अणी देह में बाँध दियाँ करे है, वणां बंधनाँ रो सत्व, रज ने तम यो नाम है ॥ ५ ॥

तत्र सत्व निर्मलत्वात्प्रकाशकमनामयम् ।
सुखसङ्गेन बध्नाति ज्ञानसङ्गेन चानघ ॥ ६ ॥

निर्मळो सत्व होवा शूँ, ऊजळो दुख हीण है ।
ज्ञान ने सुख रे माँय, जीव यो उळझाय दे ॥ ६ ॥

अविनाशी, नाशमान शूँ कूँकर बँधे, यूँ थने विचार ह्वियो व्हे, तो शुण । वणाँ में शूँ सत्व निर्मळ व्हेवा शूँ प्रकाश करवा वाळो ने बे खटका रो है । अणी वास्ते, हे अनघ, यो सुख रा बंध शूँ वा ज्ञान रा बंध शूँभी बाँध देवे है । ज्ञान,सुख ही ईं री गांठ है ॥६॥

रजो रागात्मकं विद्धि तृष्णासङ्गसमुद्भवम् ।
तन्निबध्नाति कौन्तेय कर्मसङ्गेन देहिनम् ॥ ७ ॥

तृष्णा आसक्ति शूँ होवे, प्रतिरूपी रजोगुण ।
जीव ने कर्म रे मांय, बाँध यो बहकाय दे ॥ ७ ॥

हे कौन्तेय, कणो में शरे'ख ह्वेणो हीज रजोगुण

रो रूप है। यो तृष्णा में फँश जावा शूँ व्हे है, ने अणी जीव ने यो करणो यो करणो अणी गाँठ शूँ बांध देवे है ॥ ७ ॥

तमस्त्वज्ञानजं विद्धि मोहनं सर्वदेहिनाम् ।
प्रमादालस्यनिद्राभिस्तन्निबध्नाति भारत ॥ ८ ॥

तम अज्ञान शूँ जन्मे, भुलावे भान जीव ने ।
नींद आळश शूँ बाँधे, भूल शूँ पण बांध ले ॥ ८ ॥

हे भारत बाँधवा रो मुख्य काम तो तमोगुण रो हीज है। यो हीज सब ने गेभूल करे, जदी वी देह धारी वणे है ईं शूँ ईं ने थूँ सब ने वे'काचा-वाळो जाण। यो आळश, नेरपाई ने नींद अणाँ गाँठाँ शूँ बाँधे है ॥ ८ ॥

सत्वं सुखे सञ्जयति रजः कर्मणि भारत ।
ज्ञानमावृत्य तु तमः प्रमादे सञ्जयत्युत ॥ ९ ॥

लगावे सत्व सुख में, लगावे कर्म में रज ।
लगावे ज्ञान ने ढाँक, भूल मांय तमोगुण ॥ ९ ॥

सतोगुण सुख में जोत देवे, ने हे भारत, रजो-गुण करम में जोत देवे। यूँ ही ईं जुड्या है, पण

तमोगुण हीज अणो ने निश्चय ही ज्ञान ने ढाँक ने आंख रे छाणा बाँधे ज्यूँ घाणी रा बळद री नांई नेरपाई में जोत देवे है—आँखाँ बंधो ने जुत्या ॥ ६ ॥

रजस्तमश्चाभिभूय सत्व भवति भारत ।
रज सत्व तमश्चैव, तम , सत्व रजस्तथा ॥ १० ॥

दो ने दाब वधे सत्व, दो ने दाब वधे रज ।
तम भी गुण दो दावे, यूँ रहे फरता गुण ॥ १० ॥

हे भारत, ई गुण न्यारा न्यारा नी रे'वे पण साथे ही रे'वे है । रज ने ने तम ने दबाय ने सतो गुण वध जावे ने रज सत ने दाब ने तम वधे ने यूँ ही तम सत ने दाब ने रजो गुण वधे ने जो वधे वणी रो ही नाम व्हे जावे ॥ १० ॥

सर्वद्वारेषु देहेऽस्मिन् प्रकाश उपजायते ।
ज्ञान यदा तदा विद्याद्विवृद्ध सत्वमित्युत ॥ ११ ॥

वारीक्याँ देखवा लागे, इंद्रियाँ ज्ञान री सभी ।
जदी यूँ जाण लेणो के, सतो गुण वध्यो अबे ॥११॥

जदी अणी शरीर रा सब द्वारां में प्रकाश आवे, ज्ञान हे, जदी जाणणो के यो सत वध्यो है ॥ ११ ॥

लोभः प्रवृत्तिरारम्भः कर्मणामशमःस्पृहा ।
रजस्येतानि जायन्ते विवृद्धे कुरुनन्दन ॥ १२ ॥

लोभ ने लालसा लागे, यो करूँ यूँ करूँ कहे ।
अशांति आगतो व्हे वे, रजोगुण वधे जदी ॥१२॥

हे भरतर्षभ, लोभ, करणो, प्रारंभ, काम में संतोष नी व्हेणो ने लालसा व्हेणो, ई रजोगुण वधे जीं रा शे'लाण है ॥ १२ ॥

अप्रकाशोऽप्रवृत्तिश्च प्रमादो मोह एव च ।
तमस्येतानि जायन्ते विवृद्धे कुरुनन्दन ॥ १३ ॥

नी रुचे काम करणो, मूढ व्हे भान नी रहै ।
कई सूझ पड़े नी यूँ, तमोगुण वधे जदी ॥१३॥

हे कुरुनंदन, कई नी सूझणो, बैठ रे'णो, बेपरवाही करणो ने मुख्य वात तो गेभूल रे'णो हीज तमोगुण वधे जणी री पेछाण है। और तो सब अणी साथे रा है ॥ १३ ॥

यदा सत्वे प्रवृद्धे तु प्रलयं याति देहभृत् ।
तदोत्तमविदां लोकानमलान् प्रतिपद्यते ॥ १४ ॥

जो यो जीव तजे देह, सतोगुण वाध्याँ थकां ।
जदी यो ज्ञानवानां रा, पाय ले लोक उत्तम ॥ १४ ॥

यो जीव शरीर छोड़े, वणी वगत सतोगुण वध्यो थको व्हे, तो वणी शूँ यो आछा आछा निर्मल लोकाँ ने पावे । क्यूँ के आछा समझणा देवताँ रा ईज लोक है ॥१४॥

रजसि प्रलयं गत्वा कर्मसङ्गिषु जायते ।
तथा प्रलीनस्तमसि मूढयोनिषु जायते ॥ १५ ॥

जनमे कर्मवानां में, जो रजोगुण में मरे ।
जो मरे तम रे मांय, वो जन्मे मूढ़ जूण मे ॥ १५ ॥

रजोगुण वध्यो थको व्हे ने मर जावे, तो काम करवा वाळा मनक्वाँ भेळा जाय खटके, ने यूँ ही तमोगुण रो वेग आय रियो व्हे ने शरीर छूट जावे, तो मूढ़ जूण (जनावरां) में जनम पाय लेवे ॥१५॥

कर्मणः सुकृतस्याहुः सात्त्विकं निर्मलं फलम् ।
रजसस्तु फलं दुःखमज्ञानं तमसः फलम् ॥१६॥

जाण थूँ शुद्ध सुख ने, फळ सात्विक कर्म रो ।
रज रो फळ है दुःख, अज्ञान तम रो फळ ॥१६॥

ई जश्यो कर्म करे, वश्यो गुण वणी वगत में आय जावे। आछा कर्म रो फळ आछो निर्मळ ही ज होवे है। ईं ने हीज सतो गुण के' वे है। यूँ ही रज रो फळ दुःख ने कर्म रो फळ अज्ञान है ॥१६॥

सत्वात्सञ्जायते, ज्ञान, रजसो लोभ एव च ।
प्रमादमोहौ तमसो भवतोऽज्ञानमेव च ॥१७॥

व्हे सतोगुण शूँ ज्ञान, रज शूँ लोभ ऊपजे ।
तम शूँ मोह अज्ञान, भूल ई सब नीपजे ॥१७॥

जशी वेल, वश्या ही फळ लागे हीज। सतोगुण शूँ ज्ञान व्हे, रज शूँ लोभ हीज व्हे ने बेपरवाही, मूरखता तमो गुण शूँ व्हे वे। ने ई तो अज्ञान हीज है, पण जतरो अणाँ गुणाँ रो बंध है, वो सब अज्ञान शूँ है हीज ॥१७॥

ऊर्ध्वं गच्छन्ति सत्वस्था मध्ये तिष्ठन्ति राजसाः ।
जघन्यगुणवृत्तिस्था अधो गच्छन्ति तामसाः ॥१८॥

ऊँचा सतोगुणी जावे, राजसी बच में वशे ।
तामसी नीचगुण रा, नीचे नीचे परा पड़े ॥१८॥

सतोगुण में रे'वा वाळा ऊँचा जाय है, रजो

गुण वाळा वचे ही ठे'र जावे है ने नीचा गुण में रे'वा वाळा तमोगुणी नीचा उतर जावे है। यूँ ई तीन ही गुण आप आप रो असर करे है ॥१८॥

नान्य गुणेभ्यः कर्त्तारं यदा द्रष्टानुपश्यति ।
गुणेभ्यश्च परं वेत्ति मद्भावं सोऽधिगच्छति ॥१६॥

गुणाँ ने करता देखे, अकर्ता आप ने गणे ।
जदी यो देखवा वाळो,पावे म्हारा सरूप ने ॥१६॥

ई गुण तो थें देख ही लीधा। जदी देखवा वाळो या देख लेवे, के गुणाँ रे शिवाय और करवा वाळो कोई नी है, अणी ने अणी वात रे साथे ही जाणयो के व्हा, सब जाणयो। वणी तो एक अणाँ गुणाँ शिवाय और हीज वड़ी वात जाण लीधी। जाण कई लीधी सदा जाणवा वाळो व्हे गियो ने वो तो म्हारो रूप पाय लीधो ॥१६॥

गुणानेतानतीत्य त्रीन् देही देहसमुद्भवान् ।
जन्ममृत्युजराद्रुःखैर्विमुक्तोऽमृतमश्नुते ॥२०॥

देह रा गुण ई तीन, देह वाळो तजे जदी ।
होने अमर यो खोवे, जन्म मौत जरा दुख ॥२०॥

यो शरीर वाळो अणी शरीर में व्हेवा वाळा अणाँ गुणाँ शूँ न्यारो निकळ जावे, (ने ईं में अवकाई कई पड़े है। तीन ही गुणाँ रा तीन पावँड़ा है।) ने आगे तो पछे अमृत है। वठे तो जन्म, मौत, जरा ने सब दुखां शूँ छूटणो है। गुणाँ में जे'र रो भोग है ने यां शूँ आगे अमृत रो भोग है ॥२०॥

अर्जुन उवाच ।

कैर्लिङ्गैस्त्रीन्गुणानेतानतीतो भवति प्रभो ।
किमाचारः कथं चैतांस्त्रीन्गुणानतिवर्तते ॥२१॥

अर्जुण कही ।

छूटे गुण कणी भाँत, वीं रो आचार व्हे करयो ।
तीन ही गुण छूटया ईं,जाण जे या कणी तरे ॥२१॥

अर्जुण अरज कीधी, हे प्रभो, ई सिर्फ तीन हीज गुण है, पण अणाँ शूँ न्यारो कूँकर व्हे वाय है। क्यूँके गेला रो शेलाण जो जाण में व्हे, तो भटके नी। ईं शूँ ईं रा शेलाण कई कई है। या तो वात है हीज के अणी गेला में रूँखड़ा, भाटा, मंगर्याँ रा तो शेलाण व्हेगा ही नी, पण कणी

आचार शूँ ने कूँकर अणाँ तीन ही गुणाँ ने पार करणो आवे ने अमृत मले। क्यूँ के गुणां शिवाय तो कई दीखे ही नी, जदी पार कूँकर जवाय ॥२१॥

श्री भगवानुवाच ।

प्रकाशं च प्रवृत्तिं च, मोहमेव च पाण्डव ।
न द्वेष्टि सम्प्रवृत्तानि, न निवृत्तानि कांक्षति ॥२२॥

श्री भगवान आज्ञा कीधी ।

ज्ञान अज्ञान करणो, ई तरे गुण तीन ही ।
आयां शूँ घबरावे नी, गयाँ री चाह नी करे ॥२२॥

श्री भगवान हुकम कीधो, के हे पांडव, थूँ शांची के'रे । ई दीखे जीं में (ज्ञान) भी है हीज ने प्रवृत्ति (क्रिया) भी है हीज ने मोह (अज्ञान) है हीज ने ई तीन ही शरीखा तो साथे ही रे'वे ही कोई नी । एक वदे जदी दो नी दीखे । अणी में वदे जणी रो अमूझो नो करे ने मटे जणी ने नी चावे । यो ही छूटणो है ॥२२॥

उदासीनवदासीनो, गुणैर्यो न विचाल्यते ।
गुणा वर्तन्त इत्येव, योऽवतिष्ठति नेङ्गते ॥२३॥

शायखी ज्यूँ सभी देखे, गुणाँ शूँ ज्यो डगे नहीं ।
गुण ई वरते यूँ ही, जाण ने यूँ रहे थिर ॥२३॥

आपणे अणा शूँ कई लेणो देणो नी है, यूँ जाणने ज्यूँ कोई देखवा वाळो बैठो बैठो देख्याँ करे, यूँ ही अणा गुणाँ रा हेर फार शूँ ज्यो नी डगे, ने ज्यो गुण हीज वरत रिया है, अणीज जाण में लागो रे'ने नाम भी अठी री उठी नी व्हे, कठी भी नी झुके ॥२३॥

समदुःखसुखः स्वस्थः, समलोष्टाश्मकाञ्चनः ।
तुल्यप्रियाप्रियो धीर', स्तुल्यनिन्दात्मसंस्तुतिः ॥२४॥

धन धूळो स्तुती निन्दा, सुख दुःख भलो बुरो ।
गणो शरीखा शारां ने, धीर ज्यो थिर आप मे ॥२४॥

सुख,दुःख, गारो, भाटो, सोनो, आछो, बुरो, आपणी निन्दा ने स्तुति अणा ने शरीखा ही (गुणां में ही) गणे ने आप अणा में जजम भर्यां भी नी ठेरे, पण आपां में ही ज रे'वे। वो धीरज रा सुभाव ने नी छोड़े ने सुभाव करयो छूटे थोड़ो ही है ॥२४॥

मानापमानयोस्तुल्यस्तुल्यो मित्रारिपक्षयोः ।
सर्वारम्भपरित्यागी, गुणातीत. स उच्यते ॥२५॥

सम ज्यो शेण वैरी में, मान ने अपमान मे ।
आरंभ सब जीं छोड़्या, गुणातीत कहाय वी ॥२५॥

यूँ ही मान अपमान में भी शरीखो रे'वे वैरी ने शेण में न्यारो ही रे'वे। मतलब यो है के, सब व्हेवा ने मटवावाळी वातां शूँ सरोकार नी राखे वो हीज गुणातीत वाजे है। यो गुणाँ शूँ अतीत नाम ही ईं रो सुभाविक लत्तण शमझणो चावे॥२५॥

मां च योऽव्यभिचारेण भक्तियोगेन सेवते ।
स गुणान् समतीत्यैतान् ब्रह्मभूयाय कल्पते ॥२६॥

म्हने ही एक ने ही ज्यो, सेवे है भक्तियोग शूँ।
छूटने याँ गुणा शूँ वो, ब्रह्म रो रूप व्हे श के॥२६॥

अणाँ गुणा शूँ छूटवा रो एक शूधो उपाय यो भी है के म्हने अचल भक्ति रो योग शूँ सेवे तो वो शे'ल में ही ऊपरे किया गुणाँ ने उलाँघ ने ब्रह्म-रूप व्हे जावे। ब्रह्मरूप हीज है तो भी जदी वो यूँ के'वावा लागे (जणाय जाय)॥२६॥

ब्रह्मणो हि प्रतिष्ठाहममृतस्याव्ययस्य च ।
शाश्वतस्य च धर्मस्य सुखस्यैकान्तिकस्य च॥२७॥

ॐ तत्सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योग-
शास्त्रे श्री कृष्णार्जुनसंवादे गुणत्रयविभागयोगोनाम
चतुर्दशोऽध्यायः ॥१४॥

ब्रह्म अमृत रो स्थान, अनंत सुख धर्म रो ।
म्हने ही जाण थूँ स्थान, अविनाशी अनंत रो ॥२७॥

ॐ तत्सत् इति श्री मद्भगवद्गीता उपनिषद्
में ब्रह्मविद्या योगशास्त्र में श्रीकृष्ण
अर्जुण संवाद में गुणत्रयविभाग-
योग नाम चवदमो अध्याय
समाप्त व्हियो ॥१४॥

म्हारी तो भक्ति करे ने ब्रह्मरूपी कूँकर व्हे जाय यूँ भे'म नी करणो, क्यूँके अविनाशी ने अमृत ने सदा रो (सनातन) धर्म ने साँचो सुख ने ब्रह्म ई सब नाम म्हारे हीज आशरे है अर्थात् म्हने हीज जणावे है ॥२७॥

ॐ वो साँच यूँ श्री भगवान् री गाई थकी
उपनिषद् ब्रह्मविद्या में योगशास्त्र में
श्रीकृष्ण अर्जुण रा संवाद में गुणत्रय
विभागयोगनाम रो चवदमो
अध्याय पूर्ण व्हियो ॥१४॥

॥ ॐ ॥

पञ्चदशोऽध्यायः ।

श्री भगवानुवाच ।

ऊर्ध्वमूलमधःशाखमश्वत्थं प्राहुरव्ययम् ।
छन्दांसि यस्य पर्णानि, यस्तं वेद स वेदवित् ॥ १ ॥

ॐ पनरमो अध्याय प्रारंभ ।

श्री भगवान् आज्ञा करी ।

ऊँचो जड, तळे डाळा, अनाशी पीपळो अश्यो ।
वेद है पानड़ा ईं ने, जाण्यो सो वद जाणग्यो ॥ १ ॥

एक पीपळो अविनाशी है, वेद ही वणी रे पानड़ा है ने वो ऊंची जड़ां वाळो ने नीचे शाखा वाळो वाजे है । जो वणी पीपळां ने जाणे है, वो ही वेद ने जाणे है ॥ १ ॥

अधश्चोर्ध्वं प्रसृतास्तस्य शाखा गुणप्रवृद्धा विषयप्रवालाः ।
अधश्च मूलान्यनुसन्ततानि कर्मानुबन्धीनि मनुष्यलोके ॥२॥

चोफेर डाळाँ गुण री अणी रे,
है पानड़ा इन्द्रिय स्वाद ई रे।
जड़ाँ जमी में पशरी घणी है,
वी कर्म रा बंधन री वणी है ॥ २ ॥

अणी री शाखा नीची तो है हीज, पण ऊँची भी फैली है, वी तांतणा (गुणां) शूँ गूंथावती जाय ने वणाँ मूँ भूँगा फूट ने, फेर आगे बदता जावे है, ने ई नरम नरम राता राता पीळा पीळा हरयाँ वणी रे पाना छाय रिया है। नीचे भी वणी री एक नखे एक यूँ नरी जडाँ सूँ जड़ाँ मूळाँ बंध बंध ने उळझ उळझ अणी मनुष्य लोक में ही वी कर्म बंधन रा नाम री आंटा खावती धकी छाय री' है ॥ २ ॥

न रूपमस्येह तथोपलभ्यते
नान्तो न चादिर्न च संप्रतिष्ठा ।
अश्वत्थमेनं सुविरूढमूल
मसङ्गशस्त्रेण दृढेन छित्वा ॥ ३ ॥

नी मध्य आदी नहिं अन्त ई रो,
मले न आधार सरूप ई रो।

यो पीपळो है गहरी जड़ाँ रो,
वैराग है शस्त्र उखेलवा रो ॥ ३ ॥

अणी रो सांचो रूप है जस्यो अठे कठे ही लाधै ही नी है। लाधे कोने, अणो शूँ जगाँ खाली ही नी है। नो ईं रो आदि ने, नी ईं रो अंत भी मले है अस्यो छाय गियो है। अणी गाढ़ी जड़ाँ जमाय दीधी है। ईं शूँ ईं ने असंग नाम रा गाढ़ा कुराड़ा (शस्त्र) शूँ हीज काटणो चावे, पे'ली मुख्य काम यो ही आपणो कर्तव्य है ॥ ३ ॥

ततः पदं तत्परिमार्गितव्यं यस्मिन् गता न निवर्तन्ति भूयः ।
तमेव चाद्यं पुरुषं प्रपद्ये यतः प्रवृत्तिः प्रसृता पुराणी ॥४॥

वो हेरणो धाम उखेल ईं ने,
पाछा फरे नी नर पाय जीं ने ।
रे'णो वणी रे शरणो सदा ही,
फेल्यो जणी शूँ शघळो सदा ही ॥ ४ ॥

जणी जगा जाय ने पाछा फेर आवे ही नी है, वणी जगा ने, पेलो अणी री जड़ काट ने पछे, हेरणी चावे। दूज्यूँ तो शामो कठी रो कठी अणीज में भमाय जाय, ने जणी शूँ या ठेठ री वणावट हेती

आय री' है, वणी सब रा आदी रे होज आशरे म्हूँ भी हूँ, या निश्चय हेणी चावे। है तो निश्चय याही ज तो भी की' है।

निर्मानमोहा जितसङ्गदोषा अध्यात्मनित्या विनिवृत्तकामाः।
द्वन्द्वैर्विमुक्ताः सुखदुःखसंज्ञैर्गच्छन्त्यमूढाः पदमव्ययं तत् ॥ ५ ॥

निर्मोह निष्काम न मानधारी,
विवेक वैराग विचार भारी।
छूट्या जणी रा सुखदुःख दोही
पावे परधाम सुजाण सोई ॥५॥

ह्वा—अणी अविनाशी ने पाया, वी तो मान, मोह, उळझवा रा फेर दुःख, छेटी हेरणो, सुखदुःख रा जोडा आदि जतरा विकार वाजे है, वणा शूँ छूट ने सदा सुजाण ह्विया थका पावे है, अथवा स्थान ही अश्यो है के वठे यूँ हे वाय जावे है ॥५॥

न तद्भासयते सूर्यो न शशाङ्को न पावकः।
यद्गत्वा न निवर्तन्ते तद्धाम परमं मम ॥ ६ ॥

नी दिखाय शके जींने, चन्द्र शूरज आग भी।
जठा शूँ नी फरे पाछा, म्हारो परम धाम वो ॥६॥

वो स्थान सूरज चंद्रमा-वा-दीवा शूँ नी दीखे है, अर्थात् उजाळा वणी शूँ दीखे, पण वो

उजाळा शूँ नी दीखे है, ने दीखे है वठा शूँ फराय है, पण म्हारो धाम तो अश्यो है, के जठे गियां केडे पाछो नो पड़ाय है। ई शूँ ही यो परम धाजे है। यो म्हारो होज है और रो नी है, यूँ जाण ॥ ६ ॥

ममैवांशो जीवलोके जीवभूतः सनातनः।
मनः षष्ठानीन्द्रियाणि प्रकृतिस्थानि कर्षति ॥ ७ ॥

म्हारो ही अंश है जीव अनाशी जग मांयने।
खेंचे प्रकृति में शूँ यो आपमें मन इन्द्रियां ॥ ७ ॥

अणी संसार में ठेठ शूँ यो फरतो फरे, ने शगत ही जीव बण रियो है, और कोई नी है। यो ही ज म्हारो होज अंश है। हा—"रूप जाण्यो ने मण जाण्यो" यो अणी प्रकृति में शूँ मन सेती छः इंद्रियां ने आप मे खेंच ने छेंटाय ले है ॥ ७ ॥

शरीरं यदवाप्नोति यच्चाप्युत्क्रामतीश्वरः।
गृहीत्वैतानि संयाति वायुर्गन्धानिवाशयात् ॥ ८ ॥

जणी शरीर मे जावे, छोड़े यो जीं शरीर ने।
अणाँ ने साथ लेवे ज्यूँ, फूलाँ मूँ वास वायरो ॥ ८ ॥

यो जणी शरीर में जावे, वा जणी में शूँ निकले अणीं छ ही इंद्रियां ने कठे ही मेल नी देवे, पण लियाँ लियाँ हीं फरे है, यो ही है ईं में। अबे ईं ने जीव, गणो अथवा ईश्वर केवो। ज्यूं वायरो सुगंध ने फूलां में शूँ ले ने सुगंध वालो व्हियो फरे है, पण देखने देखे तो वा सुगंध वायरा वना नी है, तो भी वायरा री नी है। यो जीव ने ईश्वर रो भेद है ॥ ८ ॥

श्रोत्रं चक्षुः स्पर्शनञ्च रसनं घ्राणमेव च ।
अधिष्ठाय मनश्चायं विषयानुपसेवते ॥ ९ ॥

कानडा चामडी आंखां, जीभ नाक तथा मन ।
अणां शूँ सघळो भोगे, जग रा सुख दुःख यो ॥ ९ ॥

कान, आंख, चामड़ी ने जीभ, नाक ई हीज पांच इन्द्रियां है, ने मन भी अणा रे साथे गण लेणो। खास कर ने मन हीज पूळा रो बांधणो व्हारो व्हे ज्यूँ ही है। ईं ईं रे पेड़ा है ॥ ९ ॥

उत्क्रामन्तं स्थितं वापि भुञ्जानं वा गुणान्वितम् ।
विमूढा नानुपश्यन्ति पश्यन्ति ज्ञानचक्षुषः ॥ १० ॥

ाी ने गुण शूँ जातो, ठे'रतो भोगतो थको ।
ज्ञानी नी शके देख, ज्ञानी देख शके सही ॥१०॥

यो जो जावा रा ने ठे'रवा रा काम करे है, वो
ाव अणी रा भोग वाजे है । और ई भोगे गुण
। अबे गुणाँ रे साथे ही यो साफ दीख रियो
। अणी ज्ञान री आंख वाळा हीज ईंने देखे
परन्तु यूँ दीखता थका ने भी नी देखे, अतरा
ने भी नी देखे, साथे ही नी देखे, वणां ने
मूर्ख नी केवां तो और कई केवां ॥१०॥

यतन्तो योगिनश्चैनं पश्यन्त्यात्मन्यवस्थितम् ।
यतन्तोऽप्यकृतात्मानो नैनं पश्यन्त्यचेतसः ॥११॥

देखे जतन शूँ जोगी, अणी ने आप मांय ने ।
मूढ चंचल नी देखे. करे जतन तो पण ॥११॥

अणी ने जाणवा री उपाय करता थका ने देख
वी हीज योगी है, ने वो अणी प्रत्यक्ष जाण
ाळा री आत्मा िहया थका है, जणी शूँ आप में
ईं ने देखे है । पण ईं ने जाणवा रो उपाय करता
भी अणी उपाय करवा वाळा ने के वे के नीं
वी अचेत सवाय कई है ॥११॥

यदादित्यगतं तेजो, जगद्भासयतेऽखिलम् ।
यच्चन्द्रमसि यच्चाग्नौ, तत्तेजो विद्धि मामकम् ॥१२॥

देखावे जग सारा ने, चन्द्रमा अग्नि सूरज ।
वो सँवी तेज म्हारो ही, न्यारो वॉ रो कई नहीं ॥१२॥

देखे नी—ई जो कई दीखे है, वी सूरज रा तेज (उजाळा) शूँ अथवा चंद्रमा रा उजाळा शूँ के कणी दीवा आदि रा उजाळा शूँ दीखे है, ने वणी उजाळा रो दीखणो जणी उजाळा शूँ है, वो म्हारो हीज उजाळो थूँ जाणले ॥१२॥

गामाविश्य च भूतानि धारयाम्यहमोजसा ।
पुष्णामि चौषधीः सर्वाः सोमो भूत्वा रसात्मकः ॥१३॥

धरा में आय म्हूँ धारूँ, म्हारा ही बळ शूँ सबी ।
चन्द्रमा वण ने पोषूँ, औषधी रसरूप शूँ ॥१३॥

सब जीव जन्तु अणी पृथ्वी पर फर रिया है, ने या पृथ्वी म्हारे पे फर री'है । यो म्हारो हीज बळ है, जणी पे धरती ठे'र री'है । सबां रो पोषण अन्न रस शूँ हे रियो है, ने रस केवो के चंद्रमा को' एक हीज वात है । पण वणी चंद्रमा रो पोषण को' के वासुदेव को' एक ही वात है ॥१३॥

अहं वैश्वानरो भूत्वा प्राणिनां देहमाश्रितः ।
प्राणापानसमायुक्तः पचाम्यन्नंचतुर्विधम् ॥१४॥

उशाँश शाँश रे साथे, प्राणाँ री देह माँयँ म्हूँ ।
पचावूँ अन्न व्हे अग्नी, खायो चाट्यो पियो चव्यो ॥१४॥

यो अन्न पेट में जाय ने शरीर रो पोषण करे, पण पेट में अगनी हीज वीं ने पचावे, जदी पोषण व्हे है ने वा अगनी शांस रे आवा जावा शूँ है, ने वो शांस रो आवो जावो म्हां शूँ है। जदो म्हूँ हीज चार ही तरे रो अन्न पचावावाळो हियो के नी यूँ ही या समझले ॥१४॥

सर्वस्य चाहं हृदि सन्निविष्टो मत्तः स्मृतिर्ज्ञानमपोहनञ्च ।
वेदैश्च सर्वैरहमेव वेद्यो वेदान्तकृद्वेदविदेव चाहम् ॥१५॥

सदा हिया में सब रे प्रकाशूँ,
है भूलणो याद विचार म्हाँशूँ ।
वेदां सबाँ एक म्हने बखाण्यो,
म्हें वेद कीधा सब वेद जाण्यो ॥१५॥

सब वेदाँ (ज्ञानां) शूँ म्हूँ हीज जाण्यो जावूँ हूँ, ने नी जाणणो करवावाळो हूँ ही ज हूँ अर्थात् नी जाए म्हूँ जावूँ

हूँ। जदी जाणवा शूँ जाणणी आवे, वो तो म्हूँ ही ज। म्हारे शूँ ही ज याद ने भूल दो ही है, ने म्हूँ कठे ही छेटी नी हूँ। पण सर्वां रे हिया मे सदा ही ठावो ठेको लाध जावूँ हूँ, खाली के'वा री देर है ॥१५॥

द्वाविमौ पुरुषौ लोके क्षरश्चाक्षर एव च ।
क्षरः सर्वाणि भूतानि कूटस्थोऽक्षर उच्यते ॥१६॥

विनाशी ने अनाशी ई, दो ही पुरुष है अठे ।
अनाशी मूळ यां रो ने, विनाशी ई चराचर ॥१६॥

ई दो ही ज पुरुष अठे ई चोडे है, एक तो मटवावाळो ने, एक वना मटवावाळो। बस अणा शिवाय और कई नी है। ई जतरा वण्या थका है, वो सब मटवावाळा है ने ई जणी शूँ वणे ने मटे है, वो अविनाशी वना मटवावाळो है, यूँ के'वे है (समझदार) ॥१६॥

उत्तमः पुरुषस्त्वन्यः परमात्मेत्युदाहृतः ।
यो लोकत्रयमाविश्य बिभर्त्यव्यय ईश्वरः ॥१७॥

पुरुषोत्तम तो न्यारो, वाजे परम आतमा ।
अखंड सब में व्याप, रह्यो ज्यो धार ईश्वर ॥१७॥

अहं वैश्वानरो भूत्वा प्राणिना देहमा
प्राणापानसमायुक्तः पचाम्यन्नं चतुर्विधम्

उशाँश शाँश रे साथे, प्राणाँ री देह मा
पचावूँ अन्न व्हे अग्नी, खायो चाट्यो पि

यो अन्न पेट में जाय ने शरीर
पण पेट मे अगनी हीज वीं ने प
व्हे है ने वा अगनी श्वांस रे अ
ने वो श्वांस रो आवो जावो म्हां
हीज चार ही तरे रो अन्न प
नी यूँ ही या समझले ॥१४॥

सर्वस्य चाहं हृदि सन्निविष्टो मत्तः स्मृ
वेदैश्च सर्वैरहमेव वेद्यो वेदान्तकृद्वेदवि

सदा हिया में सब रे
है भूलणो
वेदां सबाँ एक म्हने
म्हें वेद

सब वेदाँ (जाणी
हूँ, ने नी जाणणो
अर्थात् नी जाणवा

जो यूँ ज्ञानी म्हने जाणे, सदा पुरुष उत्तम ।
वो सभी जाणवावाळो, सवाँ ही में म्हने भजे ॥१६॥

जो म्हने यूँ शावचेत व्हे ने एक दाण भी अणाँ पुरुषाँ शूँ उत्तम जाण लेवे, वणी सब जाण लीधो। हे भारत, पछे तो सब भाव शूँ, वो म्हारो ही ज भजन करवा लाग जावे है। क्यूँ के यो हीज म्हारो रूप है ॥१९॥

इति गुह्यतमं शास्त्रमिदमुक्तं मयानघ ।
एतद्बुद्ध्वा बुद्धिमान्स्यात्कृतकृत्यश्च भारत ॥२०॥
ॐतत्सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां-
योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे पुरुषोत्तम
योगोनाम पंचदशोऽध्यायः ॥१५॥

महागुप्त कह्यो शास्त्र, यो थने म्हें नरेण ने ।
ज्यों किया काम शाराही, ई ने जाण्यो सुजाण सो ॥२०॥
ॐ तत्सत् इति श्रीमद्भगवद्गीता उपनिषत् में
ब्रह्मविद्या योगशास्त्र में श्रीकृष्ण अर्जुन
संवाद में पुरुषोत्तमयोग नाम रो
पनरमो अध्याय समाप्त
व्हियो ॥१५॥

पण जो परमात्मा वाजे है, वो तो अणाँ पुरुषाँ ज्यू नी है, वो तो अणा शूँ बिलकुल न्यारो ही है, ने उत्तम पुरुष वाजे है। अणा तीन ही लोकां ने वो ही ज धार रियो है, अर्थात् ई दो ही रुपवणी रे आशरे है, ने सबाँ मे वो ही ज शाश्वत व्हे रियो है। ई भी अविनाशी ने सामर्थ्यवाळा दीखे है, पण या वणीज शूँ अणा री सब नभ री' है ॥१७॥

यस्मात्क्षरमतीतोऽहमक्षरादपि चोत्तमः ।
अतोऽस्मि लोके वेदे च प्रथितः पुरुषोत्तमः ॥१८॥

नाशी अविनाशी दोयाँ शूँ, यूँ हूँ म्हूँ हीज उत्तम ।
लोक ने वेद में वाजूँ, जी शूँ म्हूँ पुरुषोत्तम ॥१८॥

जदी म्हूँ नाशवान शूँ न्यारो हूँ ही ज। क्यूँ के अविनाशी पुरुष शूँ भी उत्तम हूँ, तो और शूँ व्हूँ जीं में कई के'णो। अणीज वास्ते म्हूँ पुरुषोत्तम रा नाम शूँ ठावो व्हे रियो हूँ। अठे देखो तो, ने वठे देखो तो, पुरुषाँ में पुरुषोत्तम म्हूँ हीज हूँ। या अणा ने देखबा शूँ चौड़े है ॥१८॥

यो मामेवमसंमूढो जानाति पुरुषोत्तमम् ।
स सर्वविद्भजति मां सर्वभावेन भारत ॥१९॥

जो यूँ ज्ञानी म्हने जाणे, सदा पुरुष उत्तम ।
वो सभी जाणवावाळो, सवाँ ही में म्हने भजे ॥१६॥

जो म्हने यूँ सावचेत व्हे ने एक दाण भी अणाँ पुरुषाँ शूँ उत्तम जाण लेवे, वणी सब जाण लीधो। हे भारत, पछे तो सब भाव शूँ, वो म्हारो ही ज भजन करवा लाग जावे है। क्यूँ के यो हीज म्हारो रूप है ॥१६॥

इति गुह्यतमं शास्त्रमिदमुक्तं मयानघ ।
एतद्‌बुद्ध्वा बुद्धिमान्स्यात्कृतकृत्यश्च भारत ॥२०॥
ॐतत्सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां-
योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे पुरुषोत्तम
योगोनाम पंचदशोऽध्यायः ॥१५॥

महागुप्त कह्यो शास्त्र, यो थने म्हें नरेण ने ।
चीं किया काम शाराही, ई ने जाण्यो सुजाण सो ॥२०॥
ॐ तत्सत् इति श्रीमद्भगवद्गीता उपनिषत् में
ब्रह्मविद्या योगशास्त्र में श्रीकृष्ण अर्जुन
संवाद में पुरुषोत्तमयोग नाम रो
पनरमो अध्याय समाप्त
व्हियो ॥१५॥

हे अनघ, यूँ छुप्यो अविनाशी ने वणी शूँ भी छुप्यो पुरुषोत्तम रो ज्ञान, म्हें थने चौड़े यो देख, वना लाग लपटे रे के'दीधो। अवे अणी शिवाय कई व्हे शके थूँ ही कें'। ई ने जाण्यो ने वो जाणयो। बुद्धिमान् (बुद्धिवाळो) व्हे गियो, ने हे भारत, बुद्धिवाळो व्हियो ने पछे वणी रे करणो कई नी रियो, सब व्हे गियो ॥२०॥

ॐ वो साँचो यूँ श्री भगवान् री की'थकी उपनिषत् में ब्रह्मविद्या री में योगशास्त्र में श्रीकृष्ण अर्जुण रा संवाद में पुरुषोत्तम योग नाम रो पनरमो अध्याय पूरो व्हियो ॥१५॥

॥ ॐ ॥

षोडशोऽध्यायः ।

श्री भगवानुवाच ।

अभयं सत्त्वसंशुद्धिर्ज्ञानयोगव्यवस्थितिः ।
दानं दमश्च यज्ञश्च स्वाध्यायस्तप आर्जवम् ॥ १ ॥

ॐ शोळमो अध्याय प्रारंभ ।

श्री भगवान आज्ञाकरी ।

निर्भे नरेणता दान, थिरता ज्ञान योग में ।
इन्द्रयाँ री रोक शूधाई, जप ने तप यज्ञ भी ॥ १ ॥

ॐ शोलमो अध्याय प्रारंभ ।

श्री भगवान फरमाई के अभय हेणो, बुद्धि शुद्ध हेणी, ज्ञान योग में थिरता (ठीक तरे' शूँ) दान, इन्द्रियाँ ने तापे राखणी, यज्ञ, जप, तप, शूधा पणो ॥ १ ॥

---

(१) मन दूँ आत्मसाक्षात् है जावे, [illegible] यूँ करे तो, मे आत्म साक्षात् है तो, ई बारो भार है जावे, क्यूँ के वास्तविक मन रो हेतो जाय होय है ।

अहिंसा सत्यमक्रोधस्त्यागः शान्तिरपैशुनम् ।
दया भूतेष्वलोलुप्त्वं मार्दवं ह्रीरचापलम् ॥ २ ॥

नी हिंसा रीश चुगली, लोभ चंचळता नहीं ।
त्याग साँच दया शान्ति, नर्माई लाज है सदा ॥२॥

दुःख नी देणो, साँच, रीश नी करणी, कंजूस नी हेणो, मन में सुखी रे'णो, कीं री भी खोटाई नी करणी, दया जीव री राखणो, लोभ नी करणो, नरमी, लाज, चळवीदा पणो नी करणो ॥ २ ॥

तेजः क्षमा धृतिः शौचमद्रोहो नातिमानिता ।
भवन्ति सम्पदं दैवीमभिजातस्य भारत ॥ ३ ॥

शुद्धी तेज खमा धीर, निरहंकार खार नी ।
देवी सम्पत ई वाजे, देवताँ रा सुभाव भी ॥ ३ ॥

हे भारत, तेज, खमा, धीरप, पवित्रता, खार नी करणो, घणो मान नी राखणो, ई देवतां रा सुभाव है, देवतां में ई वात्ताँ हियां करे है ॥ २ ॥

दम्भो दर्पोऽभिमानश्च क्रोधः पारुष्यमेव च ।
अज्ञानञ्चाभिजातस्य पार्थ सम्पदमासुरीम् ॥ ४ ॥

घमण्ड क्रूरता क्रोध, ढोंग अज्ञान फूँकरो।
दानवी सम्पदा वाजे, दानवॉ रा सुभाव ई ॥ ४ ॥

पाखण्ड, घमण्ड, मठठ, क्रोध, ने कड़वा वचन ई एक हीज है। कड़वा वचन शूँ ई वातॉ जणाय जाय है। हे पार्थ, ई सब अज्ञान शूँ होज हुवे है। अणी वास्ते अज्ञान तो यॉ में मुख्य है होज। ई असुराँ (दानवाँ) रा सुभाव है। ई वार्तां देताँ री आड़ी रा मनखाँ री बापोती री जागीरी है ॥४॥

दैवी सम्पद्विमोक्षाय निबन्धायासुरी मता।
मा शुचः सम्पदं दैवीमभिजातोऽसि पाण्डव ॥ ५ ॥

देवी सुभाव रा छूटे, दानवी भाव रा बंधे।
थूँ क्यूँ शोच करे पार्थ, थारो दैवी सुभाव है ॥ ५ ॥

अणी ने के'वा रो म्हारो यो मतलब है के देवतॉ रा लखणॉ वालो छूटे है, छूटे कूण ई सुभाव होज छोड़वावाळा है, ने असुराँ री आदतॉ बाँधवा वाळीज है। थूँ शोच करे मती थारी बापोती में तो जनम शूँ होज दैवी सुभाव आया है शो छूटे ही गा ॥ ५ ॥

द्वौ भूतसर्गौ लोकेऽस्मिन्दैव आसुर एव च ।
दैवो विस्तरशः प्रोक्त आसुरं पार्थ मे शृणु ॥६॥

मानवी दो तरे'रा व्हे, के दैवी के क दानवी ।
कह्या विस्तार शूं दैवी, अबे ई शुण दानवी ॥ ६ ॥

हे पार्थ, सबाँ में सुभाव व्हे है ने के क तो देवताँ रा ने केक असुराँ रा (दैंताँ रा) व्हे हीज है। देवाँरा गुणाव तो जगाँ जगाँ थने के'तो ही आय रियो हूँ। अबे म्हारे नखा शूँ दैंताँ रा लख्खण भी शुण ले जी शूँ वी ओलखाय जाय, क्यूँके जाण्या बना कूँकर छोड़ मेल व्हे ॥ ६ ॥

प्रवृत्तिं च निवृत्तिं च जना न विदुरासुराः ।
न शौचं नापि चाचारो न सत्यं तेषु विद्यते ॥ ७ ॥

शुद्धता और आचार, साँच रा नाम शूँ हॅशे ।
वी करे मन भांव शो, नी पर्वा' पाप पुन्न री ॥७॥

वी दैंत सुभाव रा मनख वाजे, जणाँ में करवा रो कई चर अचर नी हे। वी अणी वात ने समझे ही नी। जी शूँ हीज पवित्रता कई हे है, आचार ने साँच भी वणा रे भड़े ही हे ने नो निकळे ॥७॥

असत्यमप्रतिष्ठं ते जगदाहुरनीश्वरम् ।
अपरस्परसम्भूतं किमन्यत्कामहैतुकम् ॥ ८ ॥

जग झूठो निराधार, पे'ली रा कर्म शूँ नहीं ।
जोड़ा शूँ जन में शारा, कठे ईश्वर है कई ॥ ८ ॥

ईं रो कारण यो है के वी धर्म री वाताँ जतरी है सब ने झूठो हीज गणे है। आखा संसार ने कणी रे ही आशरे नी माने। एक शूँ एक वणे अणी वात ने भी नी माने ने करणी रो फळ भोगावा वाळो भी कोई ईश्वर है या भी नी माने। वी के'वे के ज्यूँ जोड़ा शूँ जनमता दीखे यूँ ही जनमे ने अणी शिवाय और वणावावाळो कोई नी है ॥ ८ ॥

एतां दृष्टिमवष्टभ्य नष्टात्मानोऽल्पबुद्धयः ।
प्रभवन्त्युग्रकर्माणः क्षयाय जगतोऽहिताः ॥ ९ ॥

अश्या विचार धारे वी, आपघाती हियाफ़ूटाँ ।
घोर कर्म करे पापी, वैरी संसार घातक ॥९॥

अणी समझ ने वी गाढ़ी ठा'म राखे है क्यूँ के वणा री समझ ओछी है। वणाँ आपा ने वगाड़ राख्यो है, नीची आत्मा रा वी है, दूज्यूँ यूँ हीज

तो कूँकर करे। अश्यो विचार ह्यिो ने वणाँ री खोटायाँ रो कई के' णो, पछे तो वणाँ रा पाप रा काम शूँ संसार रो नाश ह्वेणो ही चावे। क्यूँ के अश्यो विचार आयाँ केड़े पछे खोटायाँ शूँ रुकवा रो कोई कारण ही नो रियो। वी आपणाँ वा सबाँ रा वैरी है ॥ ६ ॥

काममाश्रित्य दुष्पूरं दम्भमानमदान्विताः।
मोहाद्गृहीत्वासद्ग्राहान्प्रवर्तन्तेऽशुचिव्रताः ॥ १० ॥

अखूट कामनावाळा, ढोंगी मानी महा मदी।
नी छोडे दुरबुद्धी वी, खोटा करम आदरे ॥१०॥

वणाँ री कामना कदी भी पूरी नी ह्वे। दूज्यूँ ही कामना तो पूरी ह्वे हो नी ने वी अणी ने छोड़े ही नी दूजा तो छोड़े है। वी मनखाँ ने देखावाने आछा वणे है वणो में भी वणाँ रे घमण्ड, वारली बड़ाई देखावणो, माथे रे' है। ई शूँ थूँ वणाँने ओळख लीजे। पाँच तो वी कोरा गड़ूरा होज है। वी मूरखता शूँ खोटी हठ में हीज लागा रे' है ॥१०॥

चिन्तामपरिमेयाञ्च प्रलयान्तामुपाश्रिताः।
कामोपभोगपरमा एतावदिति निश्चिताः ॥११॥

चिन्ता अनन्त वॉ रे है, मर्‌याँ शूँ भी मटे न ज्या।
संसारी सुख में राच्या, ई शूँ अधिक नी गणे ॥११॥

अणी शूँ वणाँने सुख तो नी है है मरे जतरे भी चिन्ता वणा री नी मटे, पण जन्म २ में वी दुःख हीज संचे है। ई रो कारण चौड़े ही है के कामना रा सुख ने वणाँ री सामग्री ही वणाँ रे इष्ट देव है, ने वी या जाणे के अणी शिवाय और कई भी नी है। यो वणाँ रो अन्तश रो दृढ़ भाव है जदी अबे कई के'णो ॥११॥

आशापाशशतैर्बद्धाः कामक्रोधपरायणाः ।
ईहन्ते कामभोगार्थमन्यायेनार्थसंचयान् ॥१२॥

आश री पाश में बन्ध्या, उळझे काम क्रोध में ।
पाप रा सुख रे तावे, धन संचे अधर्म शूँ ॥१२॥

आशा री तरे'तरे'री शेंकड़ा पाशाँ शूँ वी तस्याँ करे है, क्यूँके वणाँ रो गळो हीज पाश में नी आयो है पण रूँ रूँ रे शेंकड़ाँ शेंकड़ाँ फंदा पे फंदा फंदरिया है। काम ने क्रोध में लागा रे'है या बात अणी शिवाय और कई शायत करे है। पण फेर खूबी या है के मैं धन संचणो चा'वे ने वो भी बईमानी शूँ ने फेर

वीं ने लगावे भी नालायकी रा कामाँ रा भोग में॥१२॥

इदमद्य मयालब्धमिमंप्राप्स्ये मनोरथम् ।
इदमस्तीदमपि मे भविष्यति पुनर्धनम् ॥१३॥

अतरो आज तो ऍठयो, हाल में वात या पण ।
यो तो है हीज पी फेर, काले वीने पक्टेट लूँ ॥१३॥

वणाँ रा मन में या लमटेर वधती ही जावे के म्हूँ आज यो ले लीधो, या वात म्हारी मन चींती हे जायगा ने या तो ही हेवाईज है पण अतरो धन फेर हे जायगा ॥१३॥

असौ मया हतः शत्रुर्हनिष्ये चापरानपि ।
ईश्वरोऽहमहं भोगी सिद्धोऽहं बलवान्सुखी ॥१४॥

यो वैरी तो लियो मार, दूजा भी वार माँय ही ।
कर्ता हर्ता सुखी भोगी, बलवान् बुद्धिमान म्हूँ ॥१४॥

म्हूँ अणी दुशमण ने तो यो मार लीधो ने दूसरा ने भी खोटदे दूँगा। क्यूँ के म्हूँ चावूँ ज्यूँ कर शकूँ हूँ म्हारा में शक्ति है, ईश्वर समर्थ हूँ, सुख भोगवा वाळो हूँ, म्हूँ वड़ो २ काम मेल में करलूँ अस्यो

म्हारे हस्तामलक हे रियो है म्हूँ महा बली हूँ जणी शूँ सुखी हूँ ॥१४॥

आढ्योऽभिजनवानस्मि कोऽन्योऽस्ति सदृशोमया ।
यक्ष्ये दास्यामि मोदिष्य इत्यज्ञानविमोहिताः ॥१५॥

कुलीन ने धनी म्हाँ शा, और है कूँण काँगला ।
रीझाँ मोजाँ करॉ गोठॉ, शीताँग्या यूँ सदा बके ॥१५॥

म्हूँ धनवान शेठ हूँ म्हारो कुळ घणो बड़ो है म्हारे सरीखो और है कूँण म्हूँ रीझाँ मोजाँ गोठाँ माठाँ करूँगा यूँ अज्ञान मे फेर बत्ता बधता जावे है ।

अनेकचित्तविभ्रान्ता मोहजालसमावृता ।
प्रसक्ताः कामभोगेषु पतन्ति नरकेऽशुची ॥१६॥

तरङ्गाँ में ह्विया बेंडा, फस्या अज्ञान जाळ में ।
काम रा भोग में भूल्या, शुगला नर्क में पड़े ॥१६॥

बेंडयारी नाँ हैं वणाँ रो चित हरेक बात में भमतो ही ज रे' है, अणी शूँ वणां ने महा पागळ समझणा, क्यूँके मूर्खता री जाळ में नख शिख उळझ रिया है सो छूट ही नी सके । ची तो काम

भोग में आपो भूलग्या रे' है अणी वास्ते महा गुग-
ला नरक में वी पड़े है, पण अणीं री भी वणाँ ने
शुध नी है के कतरा गुगला नरक में म्हें पड़
रियाँ हाँ ॥ १६ ॥

आत्मसम्भाविताः स्तब्धा धनमानमदान्विताः ।
यजन्ते नामयज्ञैस्ते दम्भेनाविधिपूर्वकम् ॥१७॥

धन रा मान में मस्त, मन शूँ ही मरोड़ में ।
थोथा यज्ञ करे ढोंगी, शास्त्र री रीत छोड़ ने ॥१७॥

पण श्रामो अणीं ने वी वड़ो म्होटो काम करणो
माने है नें अणीं री टशक में शूधा पग ने आँखाँ
ही नी रे' है ने यो वड़ा पणो वीज मनोमन मान
येठे है। धन रा घमण्ड रो नशो तो वणाँ रे जीव
रे लारे लागो रे' है, जाणे छूटेगा ही नी अणी
नशा री हालत में वो नाम मात्र रा यज्ञ कर न्हा-
खे है, गळथणाँ री नाँई वणाँ में सार तो कई नी
हे है भलाँ पाखण्ड शूँ ने फेर वना विधि शूँ कीधा
यज्ञ रो कई निकळे ॥ १७ ॥

अहंकारं बलं दर्पं कामं क्रोधं च संश्रिताः ।
मामात्मपरदेहेषु प्रद्विषन्तोऽभ्यसूयकाः ॥१८॥

घमएड बळ ने काम,क्रोध में उळझ्या रहे ।
म्हूँ आत्मा सब देहाँ में, म्हाँ शूँ राखे विरोधवी ॥१८॥

यूामो वणी यज्ञ शूँ वणाँ में अहंकार, बळ, दर्प, बड़ा पणो, देखावणो ने काम ने क्रोध रो आशरो हीज मले है। पराया री देह में जो म्हूँ हीज आत्मा हूँ वणी रो वी खार करे ने खोटायाँ करता फरे। वणा ने वो शुहावे ही नी। जदी वी आपाँ रो ही खार करे तो ओर री कई के'णी ॥१८॥

तानहं द्विषतः क्रूरान्संसारेषु नराधमान् ।
क्षिपाम्यजस्रमशुभानासुरीष्वेव योनिषु ॥१९॥

म्हूँ अरया आपघात्याँ ने, नीचाँ ने जग जाळ में ।
दानवी जूण में हीज, पटकूँ वार वार ही ॥१९॥

यूँ म्हाँ शूँ खार करबावाळा नीच क्रूर मनखाँ ने म्हूँ भी संसार में हीज फेंकूँ हूँ पण माँय म्हारी कानीं नी खेंचूँ पे'ली ही वणा रो आसुरी सुभाव है ने फेर पछे वणीज आसुरी देंताँ री जूण में छेटी हीज बार २ फेक्याँ करूँ हूँ या हीज वणाँ रा कर्म री सजा है ॥ १९ ॥

आसुरीं योनिमापन्नामूढा जन्मनि जन्मनि ।
मामप्राप्यैव कौन्तेय ततोयान्त्यधर्मांगातिम् ॥२०॥

दानवी जूण ने पावे, मूढ़ वी जन्म जन्म में ।
नीचे ही उतरयाँ जावे, म्हने पावे नहीं पण ॥२०॥

हे कौन्तेय, वी मूर्ख जन्म २ में अशी क्रूर जूण देंताँ रा सुभाव ने पावता पावता म्हारी कानी तो आवे हीज नी, पण शामा फेर वणी शूँ भी नीची गति में जाय पड़े है अणी शिवाय और वत्तीं कई सजा हे शके है ॥२०॥

त्रिविध नरकस्येदं द्वारं नाशनमात्मनः ।
कामः क्रोधस्तथा लोभस्तस्मादेतत्त्रयं त्यजेत् ॥२१॥

काम क्रोध तथा लोभ, नर्क रा द्वार तीन ई ।
थायो भुलाय देवे ई, ई शूँ ई तीन त्यागणा ॥२१॥

नरक रो बारणो यो हीज है ने अणी री तीन रीति है पण वात एक ही है के आपो नाश हेणो वो अणां तीन शूँ हे है । काम, क्रोध, ने मुख्य तो लोभ है । ई शूँ ई तीन ही छेटी शूँ ही टाळ देणा यो ही समझणा पणो है ॥२१

एतैर्विमुक्तः कौन्तेय तमोद्वारैस्त्रिभिर्नरः ।
आचरत्यात्मनः श्रेयस्ततो याति परां गतिम् ॥२२॥

जो छूटे नर्क द्वाराँ शूँ, याँ तीनाँ शूँ धनंजय ।
वो करे आँपणों आछो, पावे परमधाम ने ॥२२॥

हे कौन्तेय, ई तीन ही तम (अन्धारा) रा वारणा है अणाँ तीनाँ में हे ने अंधारा (नर्क) में जवाय है। जो अणाँ वारणाँ शूँ टळ गियो वणी ने उजाळा में आपणो सब शूँ ऊँचो लाभ दिख गियो ने वो वणी रस्ते चाल ने परम पद ने पाय लेवे है ॥२२॥

यः शास्त्रविधिमुत्सृज्य वर्तते कामकारतः ।
न स सिद्धिमवाप्नोति न सुखं न परां गतिम् ॥२३॥

शास्त्र री रीति ने छोड़े, ज्यो चाले मनमोज शूँ ।
वीं ने लाभ नहीं होवे, सुख ने मोक्ष भी नहीं ॥२३॥

शास्त्र हीज अँधारा शूँ उजाळा में लावा वाळा

१—तीन ही तमद्वार में आवणो ही 'काम कार' है। मुख्य तो काम ने पैली कियो हीज है ने ईं रा ही दूजा है। गुणाँ रो सम्बन्ध रो कार है वणी में बंध नी है ने या हीज शास्त्र विधि है पण या देवा री भी ने काम कार अणी वास्ते नो देवा पे भी विपरीत भावना करणो ही काम कार शूँ वरतणो है। (शास्त्र सांख्य ६)।

है। वणाँ रे कियाँ माफक नी चाल ने मन मुजब चाले वो सुख रो उपाय ही नी हे शके, ने पछे सुख कई है ईं री शमझ ही नी आवे जदी परम गति कूँकर पाय शके। हाळ तो अठा री ही शमझ में वीं रे गबोळो रे'तो जावे जदी अगाड़ी री कई के'णी ॥२३॥

तस्माच्छास्त्रं प्रमाणं ते कार्याकार्यव्यवस्थितौ ।
ज्ञात्वा शास्त्रविधानोक्तं कर्म कर्तुमिहार्हसि ॥२४॥

ॐ तत्सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे देवासुरसंपद्विभाग योगो नाम षोडशोऽध्यायः ॥१६॥

करणो शास्त्र के'वे शो, नटे शो करणो नहीं ।
शास्त्र री रीति हे ज्यूँ ही, चालणो चाहिजे अठे ॥२४॥

ॐ तत् सत् इति श्रीमद्भगवद्गीता उपनिषद् में ब्रह्मविद्या योगशास्त्र में श्री कृष्णार्जुनसंवाद में दैवासुरसंपद्विभागयोग नाम शोळमो अध्याय समाप्त व्हियो ॥१६॥

अर्णी वास्ते थने चा'वे के यूँ करौं के यूँ करौं,

अशी पेचीदा वात में शास्त्र ने प्रमाण मान लेणो, चटे शास्त्र दीज अँधारा रो दीवो है पण या वात याद राखणी के शास्त्र कें'वे चणी विधि ने ठीक तरे' शूँ शमझने वणी माफक करणो चावे यूँ ध्यान दे'ने शास्त्र रा गेला पे चाले वो नी भटके ॥२४॥

ॐ वो साँच यूँ श्रीमद्भगवान् री भापी धकी
योगशास्त्र ब्रह्मविद्या री उपनिषद् में
श्रीकृष्णार्जुन संवाद में दैवासुर सम्प-
द्विभाग योग नाम रो शोळमो
अध्याय समाप्त ह्वियो ॥१६॥

ॐ

सप्तदशोऽध्यायः।

अर्जुन उवाच ।

ये शास्त्रविधिमुत्सृज्य यजन्ते श्रद्धयान्विताः ।
तेषां निष्ठातु का कृष्ण सत्वमाहो रजस्तमः ॥ १ ॥

ॐ सतरमो अध्याय प्रारम्भ ।

अर्जुण पूछयो ।

भजे विश्वास शूँ कोई, जो वना शास्त्र रीति रे ।
जणी री गुण तीनाँ मूँ, करयो है कृष्ण सो कहो ॥ १ ॥

ॐ सतरमो अध्याय प्रारम्भ ।

अर्जुण[1] अर्ज करी के हे कृष्ण, जी मनख शास्त्र

१—अर्जुण रो अभिप्राय शास्त्र सिवाय री श्रद्धा रो है। भगवान् रो भाव यो है के शास्त्र सिवाय तो कई है ही नी । तीन गुणाँ रो वर्णन ही शास्त्र करे है। अणी वास्ते सात्विकी श्रद्धा उत्तम है ने वीं ने ही म्हे शास्त्र कियो है ने राजसी तामसी वाली श्रद्धा शास्त्र नी है, पण कामरागयुक्त हेवा शूँ वी अणाँ ने ही शास्त्र माने है, क्यूँ के ई में ही तन्मय हे रिया है।

री रीत ने छोड़े पण आपणाँ विश्वास शूँ होज आछा काम करे वी कणो में गण णाँ। वी कहे तम (अंधारो) आप हुकम कीधो वणो में ठे'र रिया है के सतो गुणी है के रजो गुणी, क्यूँके शास्त्र नी है तो भी श्रद्धा तो है ॥ १ ॥

श्री भगवानुवाच ।

त्रिविधा भवति श्रद्धा देहिनां सा स्वभावजा ।
सात्विकी राजसी चैव तामसी चेति ता श्रृणु ॥ २ ॥

श्री भगवान् आज्ञा करी ।

जन्म शूँ होय विश्वास, जीवाँ रा तीन भाँत रा ।
सात्वकी राजसी और, तामसी सो सभी गुण ॥ २ ॥

श्री भगवान् हुकम कीधो, के, वास्तव में मनख में श्रद्धा होज मुख्य है ने तीन गुण रो सब संसार हेवा शूँ श्रद्धा भी अणाँ तीन ही तरे' री मनखाँ में आपो आप ही हियाँ करे है । अबे वी तीन ही तरे'री श्रद्धा थने के' वूँ हूँ, थूँ अणी ने ध्यान दे ने शुण जे, क्यूँ के यो आतम ज्ञान होज है ॥ २ ॥

सत्वानुरूपा सर्वस्य श्रद्धा भवति भारत ।
श्रद्धामयोऽयं पुरुषो यो यच्छ्रद्धः स एव सः ॥ ३ ॥

पे'ली री भावना हेवे, होवे विश्वास भी वश्यो ।
जीव विश्वास रूपी है, कहूँ सो तीन भाँत रा ॥ ३ ॥

हे भारत, सबाँ में जश्यो जीव हे वशी ही श्रद्धा हे ने श्रद्धा हे वश्यो जीव हे, अणी वास्ते अणी पुरुष ने यूँ श्रद्धा रो हीज[१] रूप शमझ, जो जणी श्रद्धा वाळो वो वो हीज शमझणो ॥ ३ ॥

यजन्ते सात्विका देवान्यक्षरक्षांसि राजसाः ।
प्रेतान्भूतगणाँश्चान्ये यजन्ते तामसा जनाः ॥ ४ ॥

भजे सात्विक देवाँ ने, यक्ष राक्षस राजसी ।
प्रेत भूत पिशाचाँ ने, भजे मानव तामसी ॥ ४ ॥

सात्विक देवताँ री सेवा करे, राजस यक्ष राक्षस ने पूजे ने अपणाँ शिवाय रा प्रेत, भूत, राढा, शगशाँ ने तामस श्रद्धा वाळा पूजे है । वणाँ ने आपणाँ सुभाव मुजब इष्ट भावे ॥ ४ ॥

१—सात्विकी श्रद्धा वाळो सात्विक राजसी वाळो राजस यूँ ही तामस ।

अशास्त्रविहितं घोरं तप्यन्ते ये तपो जनाः ।
दम्भाहङ्कारसंयुक्ताः कामरागबलान्विताः ॥ ५ ॥

घमण्डी ढोंग वाळा जी, कामना शूँ बँध्या थका ।
बना ही शास्त्र रे ऊँधी, तपस्या घोर आचरे ॥५॥

दानवाँ री श्रद्धा वाळा शास्त्र में नी कियो हे अथवा वरया ही सुभाव री रीत[1] शूँ घोर तप करे ने वणी में देखावट ने घमण्ड मल्यो थको हे है ने कामना ने संसारी आसक्ति घणी जोरदार वणी तप में मली रे'है ॥५॥

कर्षयन्तः शरीरस्थं भूतग्राममचेतसः ।
मां चैवान्तःशरीरस्थं तान्विद्ध्यासुरनिश्चयान् ॥ ६ ॥

म्हने जीव सरूपी ने, सन्तापे मूढ़ वी वृथा ।
शुकावे देह वाँ री थूँ, जाण विश्वास दानवी ॥६॥

वी अचेत[2] शरीर मे'ला तत्वाँ ने खूब खेंच ने

१—अशी तो मे'नत करे ने फेर नीची (दानवी) श्रद्धा क्यूँ राखे, अणी रो उत्तर "दम्भाहंकारसंयुक्ता कामरागबलान्विता" है ।

२—अणाँ में शामो दुःख शूँ दुःख है अदयो क्यूँ करे इं' रो उत्तर काम राग शूँ वी अचेत हे लिया है ।

तोड़ म्हाके है। वास्तव में तो शरीर रे माँय ने सबाँ रो प्यारो आत्मा म्हूँ हूँ वणी रा दुःख रो भी विचार नी राखे। वणाँ रो थूँ असुर सुभाव (निश्चय) जाण ले। क्यूँ के 'आत्मिक सुख रो विचार नी वो हो असुर है', यो लक्षण याद करले ॥ ६ ॥

> *आहारस्त्वपि सर्वस्य त्रिविधो भवति प्रियः ।*
> *यज्ञ स्तपस्तथा दानं तेषा भेदमिमं शृणु ॥ ७ ॥*

मावे भोजन शारॉ ने, तीन ही भाँत रा अणाँ ।
यज्ञ ने तप ने दान, यॉ रा भी भेद तीन ही ॥ ७ ॥

आहार भी अणाँ तीनाँ रे ही न्यारा न्यारा पसन्द रा हे है। वणाँ आहाराँ रा भी तीन भेद है। यूँ ही यज्ञ तप तथा दान भी तीन-तीन तरे' रा हे है। ई अबे वणाँ रा न्यारा-न्यारा भेद भी थूँ ध्यान दे ने शुण ले। जणी शूँ आछा बुरा री खबर पड़ जावे। न्हा, अणी शिवाय और शास्त्र कई हे है ॥ ७ ॥

> *आयुःसत्वबलारोग्यसुखप्रीतिविवर्धनाः ।*
> *रस्याःस्निग्धाःस्थिरा हृद्या आहाराःसात्विकप्रियाः॥ ८ ॥*

चढ़ावे बळ आरोग्य, सुख आयुष ने रुची ।
मीठा रसीला थिर ने, आछा भोजन सात्विकी ॥ ८ ॥

आयु रा देवा वाळा, यूँ हीं सतोगुण वधावा वाळा, बळ, निरोगाई, सुख रुची ने भी चढ़ावे ने रसीला, चीकणा, थिरता रा ने तृप्ति देवा वाळा आहार सतोगुणियाँ ने सुहावे है ई उत्तम है ॥ ८ ॥

कट्वम्ललवणात्युष्णतीक्ष्णरूक्षविदाहिनः ।
आहारा राजसस्येष्टा दुःखशोकामयप्रदाः ॥ ९ ॥

बळता चरका भारी, खाटा रूखा कटू अश्या ।
उपावे रोग ने दुःख, शोक भोजन राजसी ॥ ९ ॥

कड़वा, खाटा, खारा, घणा बळबळता, तीखा, रूखा, गरमी करवा वाळा, ई आहार दुःख, शोक, ने रोग देवा वाळा व्हे है ने रजो गुणी अणाँ ने पसन्द करे है ॥ ९ ॥

यातयामं गतरसं पूतिपर्युषितं च यत् ।
उच्छिष्टमपि चामेध्यं भोजनं तामसप्रियम् ॥ १० ॥

ठंडा शूखा शड्या ऍंठा, वासी ने अपवित्र जी ।
अश्या आहार शूँ राजी, तामसी जीव होय जी ॥ १० ॥

ठंडा, नरी देर रा, शूखा रसहीणा, वाशी, शूगला ने जी एंठा भी व्हे ने जणाँ रे खावा री धर्म ना के'वे अश्या भोजन तामसी मनखाँ रे शौक रा है ॥१०॥

अफलाकाङ्क्षिभिर्यज्ञो विधिदृष्टो य इज्यते ।
यष्टव्यमेवेति मनः समाधाय स सात्विकः ॥११॥

जीं निष्काम करे यज्ञ, करणो धार चित्त में ।
शास्त्र री रीत शूँ वाँने, सात्विकी जीव जाणणो ॥११॥

अबे तीन तरे'रा यज्ञाँ में विधिपूर्वक जो कीधो जाय ने फळ री इच्छा वना रा करे, आपणों कर्तव्य जाणने हीज शान्ति सहित करे, वो सात्विक यज्ञ वाजे है । सात्विक री होड़ दूजा नी करे ॥११॥

अभिसंधाय तु फलं दम्भार्थमपि चैव यत् ।
इज्यते भरतश्रेष्ठ तं यज्ञं विद्धि राजसम् ॥१२॥

कामना राख ने केक, लोगाँ देखावणाँ करे ।
थूँ अश्या यज्ञ ने पार्थ, जाण राजस भाव रा ॥१२॥

हे भरतश्रेष्ठ, जणी में फळ ने चाय ने, के मनखां देखावा रे वास्ते हीज करे, वणी यज्ञ ने थूँ राजस जाण ॥१२॥

विधिहीनमसृष्टान्नं मन्त्रहीनमदक्षिणम् ।
श्रद्धाविरहितं यज्ञं तामसं परिचक्षते ॥१३॥

अंत्र रीत नहीं जीं में, अन्न ने दाक्षिणा नहीं ।
वना विश्वास रो यज्ञ, तामसी नाम रो कह्यो ॥१३॥

वना विधि रे, वना मन्त्र रे, वना अन्नादि, दान रे वना, वना विश्वास रे करे अस्या यज्ञ ने तामस के' है ॥ १३ ॥

देवद्विजगुरुप्राज्ञपूजनं शौचमार्जवम् ।
ब्रह्मचर्यमहिंसा च शारीरं तप उच्यते ॥१४॥

देव प्रिय गुरु ज्ञानी, पूजणों शुद्ध शूधता ।
ब्रह्मचर्य दया साधे, यो है तप शरीर रो ॥१४॥

अबे तीन ही प्रकार रा तप रा तीन भेद शुण ! देवता, ब्राह्मण गुरु शमझणाँ रो आदर, पूजा, पवित्रता ने शूधाई, ब्रह्मचर्य ने अहिंसा तो मुख्य है हीज, ई शरीर रा तप वाजे है ॥१४॥

अनुद्वेगकरं वाक्यं सत्यं प्रियहितञ्च यत् ।
स्वाध्यायाभ्यसनं चैव वाङ्मयं तप उच्यते ॥१५॥

सॉची ने हित री के'णी, दूखती कहणी नहीं ।
जपणों परमात्मा ने, वाणी रो तप यों कह्यो ॥१५॥

दूजा रे चुभती वात नी करणी । शाँची सुहावणी ने वणों शूँ लाभ अवश्य व्हेणो तो चावे हीज, शास्त्र रो मनन (ने नाम रो जप हीज यो है हीज) यो वाणी रो तप वाजे है ॥१५॥

मनःप्रसादः सौम्यत्वं मौनमात्मविनिग्रहः ।
भावसंशुद्धिरित्येतत्तपो मानसमुच्यते ॥१६॥

मॅन ने मन री रोक, मॉय बा'रे प्रसन्नता ।
मन रो तप वाजे यो, शुद्ध पर्णाम राखणों ॥१६॥

मन साफ रे'णो, देखतों ही करड़ा पणां नी (सुहावणा पणों), कम बोलणों आपा ने अधीन राखणो (यो मन शूँ सम्बन्ध राखे है मुख्य तो शुद्ध भाव चावे) शूँ यो मानस (मन रो) तप वाजे है ॥१६॥

श्रद्धया परया तप्तं तपस्तत्त्रिविधं नरैः ।
अफलाकाङ्क्षिभिर्युक्तैः सात्त्विकं परिचक्षते ॥१७॥

पूरा विश्वास शूँ तापे, तप ई तीन भॉत रा ।
थिर हे फल नी चावे, शो कह्यो सात्त्विकी तप॥१७॥

शूँ काया वाचा ने मन रा तीन ही तप किया अणाँ में भी एक एक रा तीन भेद है। अणाँ तीन ही तरें'रा तपां ने मन थिर वाळा, मनख फळ छोड़ ने पुरा विश्वास शूँ करे तो ई श्रेठ सात्विक वाजे ॥१७॥

सत्कारमानपूजार्थं तपो दम्भेन चैव यत् ।
क्रियते तदिह प्रोक्तं राजसं चलमध्रुवम् ॥१८॥

सत्कार मान पूजा वा, ढोंग शूँ जो तपे तप ।
श्रेठ वो राजसी वाजे, नाशमान शही नहीं ॥१८॥

ईज आदर, मान रे वास्ते (पूछावा ने) पूजावाने ने, खाली देखवाने हीज कीयाँ जाय तो ई अठे हीज थोड़ा टकचा वाळा ने डगमगाता थका राजस वाजे ॥१८॥

मूढग्राहेणात्मनो यत्पीडया क्रियते तपः ।
परस्योत्सादनार्थं वा तत्तामसमुदाहृतम् ॥१९॥

दूजा ने पीड़वा केक, आँपणी देह पीड़वा ।
मूढ़ जो हठ शूँ तापे, सो कह्यो तप तामसी ॥१९॥

मूर्खता री हट शूँ ने वाभी मन शूँ ही कीधी

हे जणीं शूँ आप दुख देखने दूजाने भी दुःख करवा ने जो करे तो तामस तप वाजे है। ई तीन रा ही तीन तीन भेद के'दीधा अणाँ ने ध्यान में राखणाँ ॥१६॥

दातव्यमिति यद्दानं दीयतेऽनुपकारिणे ।
देशे काले च पात्रे च तद्दानं सात्त्विकं स्मृतम् ॥२०॥

उपकार बना देवे, देवणो धार पात्र ने ।
समे'पे स्थान पे देवे, दान वो जाण सात्त्विकी ॥२०॥

अबे तीन तरे'रो दान शुण, जो देणो है यूँ विचार ने आप रा पाछा उपकार री इच्छा नी राखे ने जगाँ समय ने पात्र में दीधो जाय वो सात्त्विक श्रेष्ठ है ॥२०॥

यत्तु प्रत्युपकारार्थं फलमुद्दिश्य वा पुनः ।
दीयते च परिक्लिष्टं तद्दानं राजसं स्मृतम् ॥२१॥

चावना राख ने देवे, अथवा उपकार शूँ ।
मन में घबरातो ज्यो, वो कह्यो दान राजसी ॥२१॥

ने जो दान पाछा उपकार री मनशा शूँ वा ओर कणी लाभ रो विचार करने पछे दीधो जाय

। मतलब रो दान मनमें दुख अमूजणों सेती
ाय है (देणो पड़े है) वो दान राजस कियो है
े विचार लेणो ॥२१॥

अदेशकाले यद्दानमपात्रेभ्यश्च दीयते ।
असत्कृतमवज्ञातं तत्तामसमुदाहृतम् ॥२२॥

देश काल वना जोई, देवे दान कुपात्र ने ।
अपमान अवज्ञा शूँ सो कह्यो दान तामसी ॥२२॥

जो देश काळ पात्र शूँ ऊँधो हे, अपमान ने अवज्ञा शूँ दीधो जाय वो तामसी कियो जावे है ई दान तीन ह्विया ॥२२॥

ॐ तत्सदिति निर्देशो ब्रह्मणस्त्रिविधः स्मृतः ।
ब्राह्मणास्तेन वेदाश्च यज्ञाश्च विहिताः पुरा ॥२३॥

ॐ तत्सत् यो कह्यो नाम, ब्रह्म रो तीन भाँत शूँ ।
ब्राह्मणां वेद यज्ञाँ री, ई शूँ ही रचना हुई ॥२३॥

१—ॐ अङ्गीकार रो (सृष्टि रो) वाचक है तो महा ज्ञानियाँ री क्रिया आणी भाव में ह्वे है । मुमुक्षुरी सत् (वणी) रे वास्ते ने लौकिक में सत् रे वास्ते । ई ज्ञान उपासना कर्म है ।

अबे महामन्त्र शुण । ॐ तत्सत् यूँ यो परमात्मा रो तीन तरे' शूँ ठेट रो नाम है। अणो तीन तरे'रा नाम शूँ होज सब ब्राह्मण, वेद, यज्ञ पे'ली पे'ल वण्या है । यो हीज सबाँ रो मूळ है ।-यूँ तो सब वीं रो नाम है पण मूळ री बात या है के ॐ तत् सत् ईं में सब आय गियो ॥२३॥

तस्मादोमित्युदाहृत्य यज्ञदानतप क्रियाः ।
प्रवर्तन्ते विधानोक्ताः सतत ब्रह्मवादिनाम् ॥२४॥

अणीज शूँ ब्रह्म ज्ञानी ॐ कार कहने सदा ।
जया विध करे कर्म यज्ञ दान तपादिक ॥२४॥

अणीं वास्ते ब्रह्म ज्ञानियाँ रे निरन्तर थने पे'ली किया जी यज्ञ दान तप ने क्रिया मात्र ॐ अणी नाम ने के'ने हीज हे है, अर्थात् ॐकार मय हीज वाँ री सब क्रिया ह्वियाँ करे है, सो भी सतत ॥२४॥

तदित्यनभिसधाय फळ यज्ञतपःक्रियाः ।
दानक्रियाश्च विविधा' क्रियन्ते मोक्षकाङ्क्षिभिः ॥२५॥

मोच री चावना वाळा, तत यूँ कह ने सदा ।
चावना छोड़ ने शाधे, यज्ञ दान तपादिक ॥२५॥

यूँ हो जी मोक्ष नी ह्रिया पण मुमुक्षु है वी यज्ञ, दान, तप आदि क्रिया अनेक प्रकार रो फळ री इच्छा छोड़ने तत् अणी नाम रे शाथे करे है, तत् मय ह्वे है ॥२५॥

सद्भावे साधुभावे च सदित्येतत्प्रयुज्यते ।
प्रशस्ते कर्मणि तथा सच्छब्दः पार्थ युज्यते ॥२६॥

सत् उत्तम ने के'वे, शोभा रा कर्म ने पण ।
सत यूँ ही कहे पार्थ, सांच ने भी समी जगाँ ॥२६॥

हे पार्थ, अबे 'सत' नाम रो अर्थ शुण, शांच रा अर्थ में वा आछा सज्जनता रा अर्थ में भी आँपणो सबाँ रे यो 'सत्' यूँ शब्द वापरचा में आवे है शो थूँ देखे ही है। यूँ हो बड़ो महिमा रो कर्म ह्वे वठे भी 'सत्' शब्द काम में लायो जाय है घणो रे शाथे लगाय दे है ज्यूँ 'सत् कर्म' ॥२६॥

यज्ञे तपसि दाने च स्थितिः सदिति चोच्यते ।
कर्म चैव तदर्थीयं सदित्येवाभिधीयते ॥२७॥

दान यज्ञ तपस्या में, थिरता ने कहे सत ।
दान आदिक रा कर्म, कहावे सत कर्म ही ॥२७॥

यज्ञ में, दान में, ने तप में, थिरता ने भी 'सत्' यूँ कियाँ करे है । अणी वास्ते अणाँ रे वास्ते ज्यो कर्म कीधो जाय वो हीज 'सत्' यूँ वाजे है (सत् कर्म नाम रो है) यूँ थने सत्कर्म भी शमझायो॥२७॥

अश्रद्धया हुतं दत्तं तपस्तप्तं कृतञ्च यत् ।
असदित्युच्यते पार्थ न च तत्प्रेत्य नो इह ॥२८॥

ॐ तत्सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुन-संवादे श्रद्धात्रयविभागयोगो नाम सप्तदशोऽध्यायः ॥१७॥

वना विश्वास ज्यो होम्यो, दीधो ताप्यो कियो सभी ।
वो असत् नाम रो वाजे, नी अठे नी वठे मिले ॥२८॥

ॐ तत् सत् इति श्रीमद्भगवद्गीता उपनिषद् में ब्रह्मविद्या योगशास्त्र में श्रीकृष्णार्जुन संवाद में श्रद्धात्रयविभागयोग नाम सतरमो अध्याय समाप्त व्हियो ॥१७॥

अबे हे पार्थ, वना श्रद्धा (विश्वास) रे जो होम्यो दान कीधो तप कीधो वा जो कई कीधो, पण

यूँ के'वे ज्यूँ श्रद्धा शूँ नी कीधो, तो वो हीज असत् वाजे है । वो नी तो अठा रा काम रो नी जो परलोक रा अर्थ रो है जीं शूँ श्रद्धा ही मुख्य है ॥२८॥

ॐ तत् सत् यूँ श्री भगवान री भाषी ब्रह्मविद्या री उपनिषत् योगशास्त्र में श्रीकृष्ण अर्जुण रा संवाद में श्रद्धात्रयविभागयोग नाम सतरमो अध्याय पूर्ण व्हियो ॥१७॥

हूँ। हे केशिनिषूदन, अणाँ दोयाँ रो ही भेद म्हारे वाकब होणो है। म्हूँ अणाँने एक हीज जाण ने आपने घड़ी घड़ी रो पूछरियो हो ॥ १ ॥

श्री भगवानुवाच ।

काम्यानां कर्मणां न्यासं संन्यासं कवयो विदुः ।
सर्वकर्मफलत्यागं प्राहुस्त्यागं विचक्षणाः ॥ २ ॥

कामना रा तजे कर्म, वीं ने संन्यास जाणणो ।
कामना सब कर्मां री, छोड़े सो त्याग जाण थूँ ॥ २ ॥

श्रीभगवान आज्ञा कीधी के कामना रे वास्ते जो कर्म कीधा जाय, अथवा जणा कर्मां रा करवा शूँ कामना उपजे, अश्या कर्मां ने नी करणो (छोड़ देणो) अणी ने बारीक शमझ वाळा संन्यास शमझे है। सब ही कर्मां रा फळ ने छोड़ देणो ईं

१—सांख्य और कर्मयोग और, ने सन्यास और है, असली बात एक ही हेवा पे भी भेद वे'ली रो है। सांख्य ज्ञान त्याग वा योग पर्याय है। याँ रो अर्थ कर्म रे साथे ज्ञान है। सन्यास = कर्म करणो छोड़ देणो है यो भाव है। ई सब समझ रीज बात करे है पण छेण णो कई वस्तु है या बात नी शमझवा शूँ आँधाँ रो हाथी हे रियो है। ई छोड़णो बारणे हीज ले बेठा है यो दोष है।

ने चतुर त्याग कियाँ करे है। (फळ भो एक तरे' रो कर्म है यूँजाणे जी चतुर वाजे ने यूँ जाण्याँ ने फळ छूट्यो यो भाव है) ॥ २ ॥

त्याज्यं दोषवदित्येके कर्म प्राहुर्मनीषिणः ।
यज्ञदानतपःकर्म न त्याज्यमिति चापरे ॥ ३ ॥

कर्मों में दोष होवा थूँ, त्यागणा यूँ कहे नरा।
दूजा कहे यज्ञ दान, तपस्या छोडणा नहीं॥ ३ ॥

कतरा ही द्धिमान के' वे के कर्म में दोप हे हीज है (कामना रे' हीज है) अणी वास्ते कर्म करणो हीज नो चावे पण कतरा ही बुद्धिमान के' वे यज्ञ दान तप अणाँ कर्मां ने कदी नी छोड़णा चावे ॥ ३ ॥

निश्चयं शृणु मे तत्र त्यागे भरतसत्तम ।
त्यागो हि पुरुषव्याघ्र त्रिविध. संप्रकीर्तितः ॥ ४ ॥

अब ई त्याग में म्हारी, राय थूँ शुण अर्जुण।
त्याग है तीन भाँताँ रो, वो कहूँ सब ही थने ॥ ४ ॥

हे भरतसत्तम, यणी त्याग में म्हारो निश्चय कई है सो थूँ ध्यान दे ने शुण, हे पुरुषव्याघ्र,

त्याग एक हीज नी है गुणाँ शूँ अणी रा भी न्यारा न्यारा तीन भेद किया है ॥ ४ ॥

यज्ञदानतपःकर्म न त्याज्यं कार्यमेव तत् ।
यज्ञो दानं तपश्चैव पावनानि मनीषिणाम् ॥ ५ ॥

यज्ञ दान तपस्या ने, करणा त्यागणा नहीं ।
पवित्र करवा वाळा, कर्म ई बुद्धिमान ने ॥ ५ ॥

या वात तो शाँचीज है के यज्ञ दान ने तप रा कर्म ने तो नींज छोड़णो, यो तो जरूर करणो ही चावे । क्यूँ के यज्ञ दान ने तप शमझणाँ ने पवित्र करवा वाळा है ॥ ५ ॥

एतान्यपि तु कर्माणि सङ्गं त्यक्त्वा फलानि च ।
कर्तव्यानीति मे पार्थ निश्चितं मतमुत्तमम् ॥ ६ ॥

यज्ञ आदिक भी कर्म अहन्ता कामना वना ।
करणा चाहिजे म्हारी, या सही राय उत्तम ॥ ६ ॥

१—'काम्य कर्मां रो संन्यास' अणी रो दूसरा शब्दाँ में 'त्याज्यं दोषवत्' यूँ रूपान्तर ह्वे गियो यूँ ही 'सर्व कर्म फल त्याग' रो 'यज्ञ दान तपः कर्म न त्याज्यं' ह्वे गियो ने अणाँ स्थूळ शब्दाँ में ये'कावट आयगी। यणाँ में 'न त्याज्य' अणाँ अक्षराँ ने ले ने म्हूँ 'त्याज्य' ने शमझाय दियो हूँ ने यो त्याग ने संन्यास तो एक ही है।

पण अणीं शूँ या हीज म्हारी राय है यूँ तो नी है हे पार्थ, अणाँ ने भी संग ने फळ छोड़ ने करणा चावे हीज जदी दूसरा में संग ने फळ रो राखणो तो ह्वे ही कूँकर शके। संग ने फळ दो नी है, वात एक ही है। यूँ हरेक काम करणो यो म्हारो मत है ने उत्तम मत है। मामूली वात जाणे मती, क्यूँ के यो दीखे शे'ल है पण ईं री होड़ कणी शूँ हीं नी ह्वे यो म्हारो निश्चय कीदो थको है ॥ ६ ॥

नियतस्य तु सन्यासः कर्मणो नोपपद्यते।
मोहात्तस्य परित्यागस्तामसः परिकीर्तितः ॥ ७ ॥

यज्ञ आदिक कर्मां रो[1], करणो त्याग नी कदी।
त्यागे अज्ञान शूँ ई तो, वाजे वो त्याग तामसी ॥ ७ ॥

अणी रे शिवाय जो कोई छोड़णो छोडणो करे है छोड़णो तो यो हीज है पण मूर्खता शूँ कोई ठेठ शूँ लागा कर्मां ने के'वे के म्हें कर्म छोड़ दीदा, तो वो छोड़णो तामस वाजे है ॥ ७ ॥

१—नी छूटे अस्या सुभाव रा कर्मां ने के'वे के छोडणा यो केवल अज्ञान मोह शूँ हीज है जीं शूँ तामस ही ह्वियो, क्यू के अणी री छूटवा रा खासियत ही नी है या ह्वे कूँकर शके।

दुःखमित्येव यत्कर्म कायक्लेशभयात्त्यजेत् ।
स कृत्वा राजसं त्यागं नैव त्यागफलं लभेत् ॥ ८ ॥

अबकाई पड़े याँ में, देह ने भी परिश्रम ।
यूँ करयो राजसी त्याग, त्याग रो फळ नी मले ॥ ८ ॥

यूँ ही मे'नत शूँ डर ने छोड़वा रो नाम करे वो छोड़णो राजस है ने यूँ छोड़वा रो फळ थोड़ो ही है यो तो वो जाणे के कर्म में तो दुःख पड़े जीं शूँ छोड़ दूँ सो दुःख पड़े जी ने कुण नी छोड़े पण यूँ त्याग थोड़ो ही है ॥ ८ ॥

कार्य मित्येव यत्कर्म नियतं क्रियतेऽर्जुन ।
सङ्गं त्यक्त्वा फलं चैव स त्यागः सात्त्विको मतः ॥ ६ ॥

यज्ञ आदिक कर्मा ने, करणा धार जो करे ।
अहन्ता ममता छोड़, जाण सो त्याग सात्विकी ॥ ६ ॥

हे अर्जुण, जो यूँ जाणे के काम तो हे हीज है क्यूँके ई तो नियत (शाश्वत) क्रिया थका है । तो छूट ही नी शके । केवल संग ने फळ शिवाय खाते अण हेता ही थे शमभी शूँ मान राख्या है अणाँ ने छोड़, करे वो सात्त्विकी साँचो त्याग है ॥ ६ ॥

न द्वेष्ट्यकुशलं कर्म कुशले नानुषज्जते ।
त्यागी सत्वसमाविष्टो मेधावी छिन्नसंशयः ॥१०॥

सुख रा जाण नी राच, दुःख रा जाण नी डरे।
त्यागी सन्देह शूँ हीणो, वो धीरो नित्य सात्विकी ॥१०॥

अश्यो त्यागी सतोगुण में गरक है। वना सन्देह रो ने धारणा वाळो है अणीज वास्ते वो आछा करमाँ में चाय ने उळझे नी, ने बुरा कर्माँ शूँ खार भी नी करे।(आछा सुख रा ने बुरा दुःख रा शमझणाँ) ॥ १० ॥

न हि देहभृता शक्यं त्यक्तुं कर्माण्यशेषतः ।
यस्तु कर्मफलत्यागी स त्यागीत्यभिधीयते ॥ ११ ॥

सघळा कर्म ने कोई, कदी भी छोड़ नी शके।
कर्मा री वासना त्यागे, त्यागी नाम वणींज रो ॥ ११ ॥

शरीर धारी मात्र सब कर्माँ ने छोड़ देवे या वात तो हे वा री ही नी है या थूँ नक्की जाण, पण जो कर्म रा फळ रो त्याग करवा वाळो है वो हीज त्यागी है यूँ मनख के'वे है। दूज्यूँ त्यागी तो वी ही कई है हाँ शमझणो हीज है पण त्यागी है यूँ वा

अनिष्टमिष्टं मिश्रं च त्रिविधं कर्मणः फलम् ।
भवत्यत्यागिनां प्रेत्य न तु संन्यासिनां क्वचित् ॥१२॥

आछा बुरा मँझोला यूँ, तीन ही कर्म रा फळ ।
ई भोगे कामना वाळा, त्यागी भोगे कधी नहीं ॥ १२॥

कर्म रो फळ जरूर ही अरयो त्यागी नी हे वीं ने मरयाँ केड़े भी हे है, परन्तु असली संन्यास ऊपरे कियो जरया ने तो कदी कुछ नी हे है। वी फळ चाह्या, नी चाह्या ने मिल्या थका यूँ तीन तरे' रा शिवाय त्यागी रे सबाँ ने ही हे है ॥१२॥

पञ्चैतानि महाबाहो कारणानि निबोध मे ।
सांख्ये कृतान्ते प्रोक्तानि सिद्धये सर्वकर्मणाम् ॥१३॥

सांख्य वेदान्त भी के'वे, आत्म निर्लेप है सही ।
पाँचाँ शूँ ह्वे सभी कर्म, याँ बना होय नी कई ॥१३॥

हे महाबाहो, हरेक काम हे है वणीं री ई पाँच वाताँ मूळ है। अणाँ ने शमझ री हद जो साँख्य कपिल रूप शूँ म्हें कियो वठे की है वो'ज आज थूँ म्हारा शूँ हीज वाकब हे जा क्यूँ के सब कर्मा री सिद्धि अणाँ पाँचाँ शूँ हीज है सो ध्यान राख ॥१३॥

अधिष्ठानं तथा कर्ता करणञ्च पृथग्विधम् ।
विविधाश्च पृथक्चेष्टा दैवं चैवात्र पञ्चमम् ॥१४॥

अहंकार तथा देह, इन्द्रयाँ रा देव इन्द्रियाँ ।
जाण यूँ पाँचमों प्राण, याँ शूँ ही कर्म व्हे सभी ॥१४॥

पे'ली तो अज्ञान अविद्या ही सबाँ रो मूळ है अणी शूँ कर्ता पणों आपणाँ में अण व्हे तो ही आवे पछे न्यारी न्यारी इन्द्रियाँ आँवणी व्हे ने पछे तरे' तरे' री चेष्टा भी लारे लागे ने अणी' शूँ संस्कार ने संस्कार शूँ पाछो यो चक्र चालतो ही रे'है ॥१४॥

शरीरवाङ्मनोभिर्यत्कर्म प्रारभते नरः ।
न्याय्यं वा विपरीतं वा पञ्चैते तस्य हेतवः ॥१५॥

शरीर मन वार्णी शूँ, कई भी कर्म होय जो ।
आछो वा अथवा खोटो, वीं रा ई पाँच कारण ॥१५॥

जतरो कई व्हे तो दीखे है वो अणी' पाँच पेड़ा रा रथ में हीज है पछे वो कर्म शरीर रो वाणी रो मन रो व्हो आछो व्हो अथवा खोटो व्हो पण मनख अणाँ पाँच रे शिवाय कर ही नी शके है। पाँचाँ रे बा'रणे कोई काम नी है ॥१५॥

तत्रैव सति कर्तारमात्मानं केवलं तु यः ।
पश्यत्यकृतबुद्धित्वान्न स पश्यति दुर्मतिः ॥१६॥

तो भी जो करता मानै, आप ने हीज केवल ।
वो बना श्यान रो आँधो, सूझे वीं ने सही नहीं ॥१६॥

या बात जदी प्रत्यक्ष है ने सांख्य जश्या शिरोमणि शास्त्र में साची है तो भी अणाँ शूँ न्यारा कैवल्य रूप आत्मा ने करवा वाळो मान बेठे वीं मनख ने कई गण णो। वणी री ऊँधी बुद्धी है वणी बुद्धी ने शमझवा रा काम में ही ठेठ शूँ नी लगाई दूज्यूँ चोड़े देखतो थको ही क्यूँ नी देखतो ॥१६॥

यस्य नाहंकृतोभावो बुद्धिर्यस्य न लिप्यते ।
हत्वापि स इमाँ ल्लोकान्न हन्ति न निबध्यते ॥१७॥

म्हूं करूँ यूँ नहीं जीं रे, कर्मां में बुद्धि नी फँशे ।
वा मारे सब ने तो भी, नी मारे नी बँधे कदी ॥१७॥

पण जणो कुछ भी विचार की दो है, जणी रे अहंकार रो कीदो थको भाव नजराँ आगे है, जणी री शमझ अणी सत्यता ने मानगी है वो और कर्म

अणाँ मे'ला ने आप शमझ लेणो ही अकृत बुद्धि म्हें कियो है। अवे थूँ तो ईं ने जाण ने कृत बुद्धि हेजा। ई ज्ञान, कर्म ने कर्त्ता गुण रा भेद शूँ तीन तीन तरे'रा हीज है अर्थात् गुण मय हीज है गुणाँ रो हिसाब कीधो जाय है यठे अणाँ ने न्यारा न्यारा गणे है, वो ही सांख्य म्हारे शूँ यथार्थ शुण लेवा पछे कठे उळझण बाकी नी रे'वे, जी शूँ या शुणवा जशी ने ध्यान देवा जशी बात है ईं ने यूँ गनारे मती ॥१६॥

सर्वभूतेषु येनैकं भावमव्ययमीक्षते ।
अविभक्तं विभक्तेषु तज्ज्ञानं विद्धि सात्त्विकम् ॥ २० ॥

न्यारा न्यारा नराईं में, देख एक मिल्यो थको।
अनन्त अविनाशी जो, जाण थूँ ज्ञान सात्विकी ॥ २०॥

जणी ज्ञान शूँ वस्तु मात्र में अविनाशी पणा ने देख तो रे'वे वो अविनाशी पणो सब न्यारी न्यारी वस्तुआँ दीखे वणाँ में एक ही है यूँ जीं शूँ जणाय, वो ज्ञान यूँ सात्विक जाणले ॥२०॥

पृथक्त्वेन तु यज्ज्ञानं नानाभावान्पृथग्विधान् ।
वेत्ति सर्वेषु भूतेषु तज्ज्ञानं विद्धि राजसम् ॥२१॥

तो कई पण अणाँ लोकाँ ने मार न्हाखे तोई मारे ही नी है, क्यूँ के कर्म तो वो करे ही नी है जदी गेले चालताँ दूजा रो अपदाळो वो'रे क्यूँ आवे ने वो दूजा रे खातर कूँकर बंधे ॥१७॥

ज्ञान ज्ञेय परिज्ञाता त्रिविधा कर्मचोदना ।
करणं कर्म कर्तेति त्रिविधः कर्मसंग्रहः ॥१८॥

ज्ञाता ने ज्ञान वस्तू शूँ, कर्म री कामना वणे ।
कर्ता ने इन्द्रियाँ वस्तू, कर्म याँ तीन शूँ वणे ॥ १८ ॥

जाणवावाळो, जाणे शो, ने जाणवा री वस्तु, अणाँ तीन तरे'शूँ हरएक कर्म कराय है। पछे करवावाळो, जणी शूँ करे शो, ने व्हे शो कर्म, अणाँ तीन तरे' शूँ कर्म पकड़ाय है। (पण याद राख जे म्हें कियो जो केवल आत्मा याँ में एक भी नी है ईंतो छ ही वणी रे मूँडा आगला है ॥१८॥

ज्ञानं कर्म च कर्ता च त्रिधैव गुणभेदतः
प्रोच्यते गुणसंख्याने यथावच्छृणुतान्यपि ॥ १९ ॥

ज्ञान कर्म तथा कर्ता, तीन ही गुण में शूँ
कह्या है तीन भाँताँ रा, ध्यान शूँ शुण अर्जुण ॥१९॥

अणाँ मे'ला ने आप शमझ लेणो ही अकृत बुद्धि म्हें कियो है। अवे थूँ तो ई ने जाण ने कृत बुद्धि होजा। ई ज्ञान, कर्म ने कर्त्ता गुण रा भेद शूँ तीन तीन तरे'रा हीज है अर्थात् गुण मय हीज है गुणाँ रो हिसाब कीधो जाय है चठे अणाँ ने न्यारा न्यारा गणे है, वो ही सांख्य म्हारे शूँ यथार्थ शुण लेवा पछे कठे उळझण पाकी नी रे'वे, जी शूँ या शुणवा जशी ने ध्यान देवा जशी वात है ई ने यूँ गनारे मती ॥१६॥

सर्वभूतेषु येनैकं भावमव्ययमीक्षते ।
अविभक्तं विभक्तेषु तज्ज्ञानं विद्धि सात्त्विकम् ॥ २० ॥

न्यारा न्यारा नगई में, देख एक मिल्यो थको ।
अनन्त अविनाशी जो, जाण थूँ ज्ञान सात्विकी ॥ २०॥

जणी ज्ञान शूँ वस्तु मात्र में अविनाशी पणा ने देख तो रे'वे वो अविनाशी पणो सब न्यारी न्यारी वस्तुआँ दीखे वणाँ में एक ही है यूँ जीं शूँ जणाय, वो ज्ञान थूँ सात्विक जाणले ॥२०॥

पृथक्त्वेन तु यज्ज्ञानं नानाभावान्पृथग्विधान् ।
वेत्ति सर्वेषु भूतेषु तज्ज्ञानं विद्धि राजसम् ॥२१॥

जाणे जीं ज्ञान शूँ सारा, न्यारा न्यारा चराचर ।
अश्या ई ज्ञान ने पार्थ, जाण थूँ ज्ञान राजसी ।

ने जो ज्ञान वस्तुवाँ में न्यारो न्यारो भाव
एक शूँ एक ने मली नी समझे, अश्यो भेक
सर्वां में करे अणीं तरे शूँ सर्वां ने जाणे,
ज्ञान ने थूँ राजस ज्ञान जाण ॥२१॥

यत्तु कृत्स्नवदेकस्मिन्कार्ये सक्तमहैतुकम्
अतत्त्वार्थवदल्पञ्च तत्तामसमुदाहृतम् २२॥

वना विवेक ले मान, महा म्हाटो हरेक ने
ओछो भूठो अश्यो पार्थ, जाण थूँ ज्ञान तामसी।

ने जो यूँ ही हर कणी एक वात में हीज उ
जावे ने वो भी अश्यो लागे ने उळझे के
शिवाय और गणे हो नी ने देख ने देखे तो
अदनी ने शूँनीज वात हू अश्या ज्ञान ने तामस
है । दूज्यूँ यो है तो घोर अज्ञान ॥२२॥

नियत सङ्गरहितमरागद्वेषतः कृतम् ।
अफलप्रेप्सुना कर्म यत्तत्सात्त्विकमुच्यते ॥२३॥

नित्तनेम करे नित्त, सार हेत करे नहीं ।
अहन्ता काममाँ होणो, कर्म सो पार्थ सात्विकी॥